

शरत्-साहित्य

श्रीकान्त

(चतुर्थ पर्व)

११

अनुवादक
कमल जोशी

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर (प्राइवेट) लिमिटेड, बम्बई-६

एक रुपया पचास मये गिने
 पौधवाँ बार
 बनपरी, १ ६९

प्रकाशक : बहावर मोदी, प्रेक्षिका हायरसकलर,

टिप्परी प्रेस प्रानाकर (प्रारिटेड) लिमिटेड, हीराबाग, बम्बई-४

मुद्रक : श्रीमन्महाय बपूर, शानमण्डल लिमिटेड, बाणजली (बनारस) ५० ६९-१०

श्रीकान्त

चतुर्थ पर्व

असतकका मेरा जीवन एक उपमरही तरह ही बीता, जिसको कैद बनाकर धूँसा रहा हूँ, उसके निकटतम न तो भिक्षा पहुँचानेका अधिकार और न मिली दूर जानेकी अनुमति। कपीन नहीं हूँ, लेकिन अपनेको स्वाधीन कहनेकी शक्ति भी मुझमें नहीं। काग़ीसे झोखी हुई जेबमें पैठा हुआ बार-बार यही खोज रहा था। खोज रहा था कि मेरी ही किस्मतमें बार-बार यह क्यों घटित होता है ! मरते समस्तक अपना करने कायक क्या किसीको भी न प्य सँझूँगा ! क्या इसी तरह झिन्दगी काट दूँगा ? बचपनकी याद आई। बूखेकी इच्छासे बूखेके घरमें वर्षके बाद बप रहकर इस घण्टेरको तो कैधोरते जीवनकी ओर आगे बढ़ाया रहा, लेकिन, मनको न जाने किस रसातलको बार सदेखा रहा। ब्याज बार-बार पुकारनेपर भी उस विदा हुए मनकी कोई आदत नहीं मिलती, हाँ कि कभी-कभी खीच कष्टका अनुकरण कानमें आ खगाता है, फिर मी, बिना संयतके नहीं पहचान पाता कि वह अपना ही है,—बिरतास करते दर बगला है।

यह समझकर ही यहाँ आया हूँ कि आज मेरे जीवनमें राखटानी मृत है। नशी-किनारे एते हाँकर विरक्ति प्रतिमाके अन्तिम विद्रुतकको अपनी आँखोंसे देखकर बीटा हूँ—आशा करनेका, कल्पना करनेका, जसनेको धोखा देनेका कोई भी सब खोज समझ नहीं आया हूँ। उल तरह सब खोज हो गया है, निधिनत हा गया हूँ, पर यह खोज बिठना खोज है, यह किससे कहूँ और कहूँ ही क्यों !

पर कुछ दिनका ही तो जिन्द है। बुझार साहबके साथ शिफार गमने गया। देखा विचारीका गाँवा गुननेके लिए पैठा, बैठत ही भाग्यमें कुछ ऐसा मिश्र

जो मित्रना आकरिमक या उठना ही अपरिचीम । ज अपने गुणते पाया और न मन्नी गच्छीसे लोया ही, फिर भी भाव स्वीकार करना पड़ा कि मैंने उसे लो दिया — मेरे लतारमें सब मिथ्यकर खिती ही रीप रही । जा रहा हूँ कककचे, पर बातना फिर एक दिन बम्ब पहुँचायेगी । लेकिन यह मानों पुजारीका घर छोड़ना है । परका बिज अस्पष्ट, अग्रहृत है,—छिपे पप ही छत्य है । ऐसा क्या है मानों इस पपर बलनेका कोई अन्त नहीं ।

“अरे, यह तो भीकान्त है !”

यह लपका ही न या कि गाड़ी स्टेशनपर टहरी है । देखता हूँ कि हमारे गाँवके बाबा रोंगा दीदी तथा छतरद मठारद साबकी एक लडकी,—तीनों गर्दन फिर और कन्धोंपर गन्दी-बोदबी काढ़े प्सेटबार्नेस बोड़ लगाते आये और रिदकीके सामने आकर एकएक घम गये । बाबा बोले “उह, कैसी मीब है । जहाँ एक लुरके अनेकी भी गुआइय नहीं वहाँ तीन-तीन आदमी हैं । तुम्हारा डम्बा ता काशी राली है बह आबै ।” “आइये,” कहकर दरवाज्य लक दिया । वे तीनों जदं हाँठे-हाथे ऊपर आये और छिठन सामन या नीचे रल दिया । बाबाने कहा, “यह घापर क्याय किरपैका डम्बा है, रण्ड तो नहीं देना पड़गा ।”

मैंने कहा, “नहीं मैं गड़ते कह आता हूँ ।”

गाँवको इतिथ्य दे आना कर्तव्य पूरा कर अब लोया, लप वे कोम निमित्त हो आरामने बैठे थे । गाँवके लूनपर रोंगा दीदीने मैरी और मकर काबी, और खँककर कहा “तुम्हारा बह कैसा लीर हो गया है भीकान्त ! लप मुँह लपकर एकदम रम्पी ना हा गया है कहीं ये इतने दिन ! कुछ भी हा, तुम कण्ठे ता हा ! बबले गये एक बिड्डीतक नहीं बी ! परबले लप लोब-नीक्ये मेरे बाते हैं !”

इस तरहके प्रानोंके उल्लखी कोई आणा नहीं करता, बबल न भिडनेपर लप भी नहीं मानता ।

बाबाने बताया कि तीर्थ करनेके लिए वह लगनीक गया घाम आये थे और वह लडकी उनही बड़ी लालीकी नहिनी है,—बाप हजार रुपये गिन देनेको ठेकार है लेकिन फिर भी अबलक कोई योग्य पात्र नहीं लुता । मानती ही न थी इसलिए लप जाना पड़ा । ईद, पेन्डी होदी ता गेज बेटी—

क्योंकी, पूछता हूँ कि बहीका दर्शन भूख तो नहीं आई।—हो तो पचेपर रस तो—दो-आर पेने, थोड़ा दही,—ऐसा दही तुमने कभी खाया न होगा मेरा, कसम खाकर कह सकता हूँ। नहीं नहीं, छटिकाके पानीसे पहले हाथ जो धावो, पूँह, घेरे-नीरको तो बे नहीं रही हो,—ऐसे लोगोंको कैसे देना चाहिए वह सीखो।”

पूँहने गया आदेश कर्तव्यका तपस पावन किया। अतएव, ट्रेनमें ही अचमकते अनाचित्त बहीयेन मिल गये। खाते हुए साँजने लगा कि मेरी ही माँपमें घाटी बनहोनी दुष्प्र करती है, तो इस बार कहीं पूँहके लिए मैं ही हथार उपेक्षा कीमतका पात्र न पुन किया जाऊँ। यह लखर उन्हें पहली बार ही मिल गई थी कि मैं बर्मामें अपनी मौकरी करने लगा हूँ।

संगा बीवी बहुत ज़ादा स्नेह करने लगी, और आत्मीय ध्यानकी वजहसे पूँह भी पेटेपरमें ही धनित हो गई, क्योंकि, मैं कोई दूसरा तो था नहीं।

बन्दी अपनी है। साधारण मद्र पहल्य अपनेकी, रंग गोरा तो नहीं था लेकिन देखनेमें सुन्दर थी। हाथत यह हुई कि बाबा उसके गुणोंका बन्धन लक्ष्य ही न कर पा रहे थे। बिजने-पढ़नेके बारेमें संगी बीवीने कहा, “यह ऐसी सुन्दर चिट्ठी मिल सकती है कि ब्याजबन्धके तुम्हारे नाटक और नौबिब भी हार मान जायें। उस परकी नन्दरानीको एक ऐसी चिट्ठी लिख ही थी कि बम्बई महाशय सात दिनके बसाव फ़रह दिनकी छुट्टी लेकर आ पहुँचे।”

राज्यश्रीका उल्लस किसीने हगितसे भी नहीं किया जैसे उस लखकी कभी कोई बात हुई थी, यह किसीको यादतक नहीं।

दूसरे दिन गाँवके स्टेशनपर गाड़ी ठहरी तो मुझे भी उतरना पड़ा। उस बक्त करीब दस बजे थे। ठीक बक्तपर खानाहार न होनेपर भित्त महक अपनेकी आवाजकाते थे होनों कने विवित्त हो उठे। मकान पहुँचनेपर मेरी सातिरदारीकी सीमा न रही। पाँच-सात दिनके अन्दर ही गाँव-मरमें किसीको यह अन्देश न रहा कि पूँहमर मैं ही हूँ। परंतुकि कि पूँहको भी अन्देश न रहा।

बाबाजीन पारा कि यह दुम काव आगामी पैशाल महीनेमें ही लम्बव हो जाय। पूँहके रिस्तेदार जो जहाँ थे उन्हें बुला लेनेकी बात भी ठठी। संगी बीवीने पुनरित्त हदपते कहा, “देखते हो, किसीके माँपमें कौन बरा है, पर परेसे कोई भी नहीं बला सकता।”

मैं पहल उदासीन था, फिर चिन्तित हुआ, और उसके बाद दण्ड । अमरा : अपने ऊपर ही रुन्देह होने लगा कि कहीं मैंने मंजूरी तो नहीं दे दी । मामला ऐसा बेजब हो गया कि कहीं पीछे कोई घुरी घटना म मर बाव इतकिए न करनेका कारण ही न रहा । वृद्धों में बहो यी । एक दिन रविवारको एकाएक ठण्डे मिठाई भी दण्ड हो गये । मुझे कोई नहीं खाने देना चाहता, अमरा : अमरा और हेली-मराफ भी होने लगा,—वृद्ध मेरे ही फिर पड़ेमी, सिर्फ थोड़े दिनोंकी हेर है—‘छनो-छनो’ वेत कष्ट ही थारी और लग्न मकर खाने को । बाक्ये कैसा था रहा है, मनको शांति नहीं मिलती—कल ठाढ़कर बाहर भी नहीं निकल पाया । ऐसे बच अमानक एक सुयोग मिला । बाक्ये पूज, “वृद्धों कोई अमरा है या नहीं ? उसकी तो कल है ।”

और लगाकर ठारे रंकाओंको दूर करके कह दिया, “आप ज्येष्ठोंने वृद्धों का भेद बिबाह करना बरा लक्ष्युव स्थिर कर दिया है ।”

बाबा वृह प्यङ्कुर थोड़ी देरतक अजम्बेले देखते रहे, फिर बोले, “अकई ! इन का इनकी बात ।”

‘पर मैं हा अमीरक स्थिर नहीं कर पाया हूँ ।”

“मही कर पावे हा अब कर लो । कड़कीकी जड़ में बादे बारद-देरह कपंडी पठाऊँ या और कुछ मेझिन अमराये बर छतरह-अठारह लाखकी है । इसके बाद हम हम कड़कीकी छादी कैसे करंग ।”

‘पर बर मेघ खोता नहीं है ।”

“तो फिर कितना है ? ठाबद मेघ ।”

इसके बाद कड़कीकी मैं और रोग्य बीरीसे छार करके पाल-पदोतकी कड़कीबाँतक आ गई । रमा बाना अनुयोग-अभिशापेका अन्त मही रहा । मुझसेही मुझसेही कहा, “येगा धैरान बाक्यक नहीं देगा इस अमरा लरक न्य बाशि ।”

पर रण्ड देना और बात दे और कड़कीकी छापी करना दूसरी बात है । पच्छः बाबा गुर हा रर । इसके बाद अनुनय-विनयकी थारी आर । वृद्धा न्य मही देगाज है । छानद बर गरीब अमरे वृह धिगाये करी पड़ी है । कपेट होने लगा । बेग नुमान लेश्वर व हमारे एसेमे पैदा हाती है । मुझ कि टीक बरी बात उसकी मैं भी कह रही है,—आ अमरागिन, हम लरको

साने बाद जायेगी। इसकी ऐसी तकदीर है कि समुद्रपर दृष्टि डाले तो समुद्रतक सुन जय और खरी हुई घोस मछली भी पानीमें भाग जाय। इसका ऐसा हाक न होगा तो किसका होगा।

कटकते जानेके पहले बाबाका मुखाकर आने परका पता बता दिया। कहा, “मेरे लिए एक व्यक्तिकी राय लेना जरूरी है, उनके कहनेपर मैं राखी हो जाऊँगा।” बाबा मेरा हाथ पकड़कर गद्गद् कण्ठसे बोले, “देखो भाह, बड़कीकी मत मारो। उन्हें बरा समझा-बुझाकर कहना कि वे अपनी असम्मति न दें।” मैं बोला, “मेरा विश्वास है कि वे असम्मति प्रकट न करेंगे। बल्कि खुश होकर ही सम्मति देंगे।”

बाबाने आशीर्वाद दिया, “तुम्हारे सधानपर कब आऊँ, मेरा।”

“पौंच ठ दिन बाद ही आइये।”

पूँछकी रीं और रांगा बीदीने रास्तेतक आकर औंठुओंके साथ मुस विशा किया।

मन-ही-मन कहा, तकदीर। किन्तु वह अच्छा ही हुआ कि एक प्रकारका बचन दे आया। मैंने इस बातपर निःशेष विश्वास कर लिया कि इस विवाहमें राखीदेखी ऐशमात्र मौ आपत्ति न करेगी।

२

रैयानपर पहुँचते ही ट्रेन धूर गर। वृक्षी ट्रेन जानेमें दो घंटीकी देर थी। समय काटनेका उपाय खोज रहा था कि एक मित्र दिष्ट मये। एक मुसद्मान युवकने कुछ देरतक मेरी ओर देखते रह कर पूछा, “बाप श्रीकान्त है?”

“हाँ।”

“तुमने नहीं पहचान लके? मैं गौर हूँ।” कहकर उसने मेरा हाथ जोरत हवा दिया पीछर लछम्वर बल्ल बगार् और जोरसे गले झिंटकर कहा, “बहो, हमारे घर चलो। कहाँ का रहे थे,—कटकते? बरा जानेकी जरूरत नहीं—चलो।”

वह मेरा पाठशास्त्रका मित्र है, उधमें कोर बार लाल कहा शम्भ, हमेशाच ही कुछ आधा पागल होता। ऐसा लगा कि उध बदनके साथ-साथ उधका बर पायकपन कम होनेकी बर्याय बढ़ गया है। पहले भी उसकी बरदस्तीसे

बचनेका उपाय न था, अतः वह लपकाकर मेरी बुझिन्ताकी सीमा न था कि कमसे कम आज रातको वह मुझे किसी तरह नहीं छोड़ेगा। वह कहना स्वयं दे कि ठठकी आत्मीयता और उद्गारमें हिंसा बोलनेकी शक्ति आज मुझमें नहीं है। पर वह छोड़नेवाला बीब नहीं था। मेरा पैर उसके दुरु ठट्टा किया और कुत्ती बुल्लकर उसके सिरपर बिछोना रक्त दिना। फिर बगलस्थी लीपका हुआ बाहर आया और गद्दीका भाड़ा ठीक कर मुझमें बोला, “बचो।”

बचनेका कोई उपाय नहीं है, तक करना छिड़क है।

वह वह बुझा कि गैर मेरा पाठपाठका साथी है। इनारे गैरसे उसका मकान एक कोठ दूर था एक ही मरीके किनारे। बचनमें बन्दूक बचाना ठठीसे सीखा था। उसके लिहाजी एक पुछनी बन्दूक थी, ठठीको ठेकर नहीं किनाये, आत्मके बगैरोंमें और शब्द-संज्ञाओंमें दूधकर हम दोनों बिदे मोका ठिंकार किया करते थे। बचनमें अनेक बार ठठीके पक्षों रात काटी है—ठठकी मैं निषदा गुड़, दूध और कैला आकर मुझे पकाहार कप देती थी। ठठकी अमीन-आपराध, लेटी-पारी बहुत थी। गद्दीमें बैठकर गैरने प्रज किया, “इतने दिनोंतक कहीं थे, श्रीधाम !”

कहीं-कहीं था ठठका एक मीथित विवरण दे दिया। दूध “हम अब क्या करते हो, गैर !”

“कुछ भी नहीं।”

“हमारी मौं कपली तरह हैं !”

“मैं-बात दोनोंकी मसु हो गई,—मकानमें कहींसे मैं ही हूँ।”

“आली नहीं की !”

“वह मौं मर गई।”

मन-ही-मन सोचा कि आपराइ इलीकिय बारे बिते पकड़ ह अनेका इल्ल-आमर है। वह कोई बात करनेकी नहीं मिली तो दूध, “हमारी वह पुछनी बन्दूक है !”

गैरने ईश्वर कहा, “हिंसा है कि तुम्हें ठठकी पार है। वह है, और ठठके लिहाज और मौं एक कपली कपूक लपटी थी। तुम ठिंकार लेखने अन्त बाहों तो मेरा पर्यव। किन्तु अब मैं पिछनी नहीं मारता,—बहुत ।

“यह क्या गौहर, तब तो तुम रिम-रात हनीक पीछे पागल थे !”

“यह सच है। लेकिन सब बहुत दिनोंसे छोड़ दिया है।”

गौहरका एक परिचय और है कि वह कवि है। उन दिनों वह मुँह-बरानी जनगण आम-गौठ बना सकता था,—किसी भी बल और किसी भी बिगड़पर। छन्द, माशा और प्लुन हत्यादि काम्य शास्त्रों का मूल-कायबोको मानता था वा नहीं, इसका ज्ञान मुख न तो तब था और न अब है। पर मुझे पार है कि मैं उन दिनों मणिपुरका कुछ और विकेंद्रशीत सिद्धे वीरत्वकी कहानी उसके मुँहसे सुनकर पुनः पुनः उत्तकित हो उठता था। पूछा, “गौहर, उन दिनों तुम्हें कृतिज्ञातस भी तुम्हारे सम्मयण किलनेका शौक था, वह संकल्प अब भी है या गया ?—” गौहर धन-मर्म में गम्भीर हो गया। बोला, “वह शोक क्या कभी का कहता है ? उसीके बलपर तो क्या हुआ है। अबतक बिना रूँगा तब तक उसे शिव रूँगा। कितना विषय है, पको न, आव सारी रात तुम्हें सुनाऊँगा तो भी सत्य न होगा।”

“कहते क्या हो गौहर !”

“नहीं तो क्या तुमसे छठ करता हूँ ?”

प्रतीत कवि-प्रतिभासे उसकी आँखें और मुँह चमक उठे। छन्देह नहीं किया था, किन्तु विस्मय बाहिर किया था। तथानि, कहीं केंद्रुमा मोकते हुए सौ न निकल आये—मुझे अवरदस्ती बैठाकर सारी रात काम्य-बर्षा हो न करता रहे—मेरे मनकी सोमा नहीं रही।

छुट करनेके लिए कहा, “अहाँ गौहर, यह बोले ही करता हूँ। तुम्हारी बरमुत शक्तिको सभी स्वीकार करते हैं, पर बचपनकी बातें पार हैं या नहीं, पही ज्ञाननके लिए पूछा है। तो ठीक,—वह बंगाकको एक कीर्ति होकर रहेगी।”

“कीर्ति ! कान मुँहसे क्या कहूँ मारूँ, परले मुन का जो, निर प सब बातें होगी।”

किसी भी तरह मुद्रकाय नहीं। कुछ देर स्थिर रहकर मानो कुछ-कुछ अपने आप ही कहा, “मुझसे ही वसीरत राख हो रही है। ऐसा करता है कि अगर नौद का प्यही—”

गौहरने इतार ध्यान ही न दिया। कहा, “पुनक रजस बैठाकर सीतामी

जब रोते-राते गहन घेँक रही हैं—इस लंछको किन-किनसे मुना है वे अपने भीतर नहीं रोक सके हैं श्रीकान्त ।”

औल्लोंका जब मैं भी रोक सउँगा, इसकी सम्भावना कम है। कहा, “फिन्तु—” गौहर ने कहा “हमारे उस बड़े नवनरौंद चक्रवर्तीकी तुम्हें याद है न ? उसके मारे नाकमें रस है। बरत-वे-बरा आकर कहता है, ‘गौहर, क्या वह अंध पक्षी न, सुनैगा ?’ कहता है, ‘बेस, तुम मुसलमानकी सम्मान कभी नहीं हो। ऐसा अफस है कि तुम्हारे शरीरमें असली ब्राह्मण रक्त धारित है।’ ‘नयनरौंद’ नाम इस कथा नहीं होता, इसलिये याद आ गया। मन्थन में गौहरके गोंबमें ही है। पूछा, “वही बूढ़ा चक्रवर्ती ? उसके साथ ता तुम्हारे पिताजी का बड़ा झगड़ा हुआ था,—कठिनाई क्यों थी और मामला भी ?”

गौहरने कहा “हाँ। लेकिन पिताजीके सामने उसकी क्या सकती !—उन्होंने उसकी कमीन, बगीचा, वाकान इत्यादि सबको चर्चमन्दे मीथम करवा दिया था। लेकिन मैंने उसका साकाश और महान बीया दिया है। बहुत गरीब है। रात-दिन रोता था—यह क्या अच्छा होता श्रीकान्त !”

अच्छ तो नहीं होता, परन्तु चक्रवर्तीके काम-धेम्मे कुछ ऐसा ही अन्धान लग्न था था। कहा, “अब तो रोना बन्द हो गया है न ?”

गौहरने कहा, “लेकिन आदमी बाकई अच्छा है। कर्जेके मारे उसने उस बरत को कुछ दिया था, पैसा बहुत जोग करते हैं। उसके महामके पास ही डेढ़ बीघेका आमका बगीचा है उसके हरेक पेड़को चक्रवर्तीने अपने हाथोंसे लगाया है। नाखी-सीते बहुतसे हैं, लगीरकर लानेके लिए वेते नहीं हैं।—छिद, मेरा ही बीन है, कोन लानेवाला है !”

“यह ठीक है। उठे भी बीया हो।”

‘बीया देना ही ठीक है, श्रीकान्त। औल्लोंके सामने ही आम पकते हैं, उड़के बच्चे टाही भाई मरते हैं—तुम्हें बहुत गुल होता है माई। आमके दिनोंमें मेरे सब बगीचे ध्यापारी जाग के बैठे हैं, फिर वह बच्चा नहीं बैचता। कर दिया है, चक्रवर्ती, तुम्हारे माती तोड़-तोड़कर लायें।—क्या करते हो, शीक किया न ?”

“बिगुन ठीक।” मन-ही-मन कहा, बेकुण्डके आतेकी जब हो। उसकी

बदेकत यदि गरीब नवनबाँद यस्किन्ति काम ठठा ठकै सो मुकसान ही क्या है ? इनके अन्धबा गोहर कबि है । कबिकी इतनी सम्पत्ति कित सतकबकी, अगर रतमादी रतिक मुन्नोंके काममें न आये ?

जामग वेपकै बीबीबीबकी बात है । गादीकी लिङ्गकीको पद्मएक अलठक स्तोककर गोहरने बाहर सिर निकालते हुए कहा, "बहिणी हवाका अनुमन हो रहा है श्रीमान् ।"

"हो रहा है ।"

गोहरने कहा, "बसन्तको पुछारते हुए कबिने कहा है—

'रोग दे आन बहिनका द्वार' ।"

कबी मिट्टीका रास्ता है । मध्य कवनके एक लैंकैने रास्तेकी लुपी धूलको बचीनपर गहीं रहने दिया, उससे समस्त मुँह और सिरको मर दिया । मैं अत्यन्त होकर बोला, "कबिने बसन्तको नहीं बुझाया । वह करता है कि इस बरत पमका बहिण द्वार खुला है—मर गाँवको बन्द न करो, सो धमक रही आकर हाजिर हो आसपास ।"

गोहरने ईश्वर, "बककर बैलानी एक बार । बकोतरेके दो पैरोंपर पूरू लिते हैं, कोई आँख कोमते ठनकी गन्ध आती है । सामनेबाका आमुनका पैर आबकी पूरूसे मर गया है, उसकी एक हाथार आकटीकी लता है । पूरू अभी नहीं लिप्ते हैं, कबियोंके मुन्नोंके मुन्ने बरक रहे हैं । हमारे पारों ही ओर आमके बगिचे हैं और आबकी बार मीरसे आमके साइ छा गये हैं । बर मुसद मनु-मन्तिरबोकम मेवा देखना । कितने नीकईठ, कितनी कुम्बुलें और कितनी कोमलोंके गान ! इस बरत बौदनी रात है, इस कारण रातकी मी कोमलकी कूक नहीं बरती । बाहरके कमरेकी बहिणबाकी लिङ्गकी बदि खुली रातोने छं छिर गुमारी पकके न क्षेयीं । लेकिन इस बार यों ही नहीं छाड़ रूंगा भाई, यह परलेले कह देता हूँ । इसके अन्धबा रातकी मी कोई फिर नहीं, बरतीं महात्मको एक बार रातर मिन्ने मरकी देर है । गुमारा बाहर गुमरी ठार करेगे ।"

आमन्त्रकी अरुण आन्तरिकतासे मुग्ध हो गया । कितनी मुरलें बाद मुन्नाकात हुई है, लेकिन वह ठीक उस दिन रोज ही घोर है,—अब मी नहीं बदल है,—वैला ही बचन है, मित्र-मित्रनमें देला ही अहमि ठाप्रस है ।

गोहर मुसलमान फकीर-सम्प्रदायका है। सुना गया है कि उसके पितामह बाबूजी थे। वे रामप्रसादी और दूसरी गीत गा-गाकर भिक्षा माँगते थे। उनकी पाँची हुई तारिकाकी अलौकिक संगीत-पारदर्शिताकी कहानी उन उन दिनों इधर बहुत प्रसिद्ध थी। लेकिन योहरके पिता पैतृक-वृत्ति छोड़कर ठिगारत और पाटका कारखाने करने लगे और अपने लड़कैके लिए बहुत-सी आयदाएँ खरीदकर छोड़ गये। परन्तु लड़कैमें बाप जैसी व्यापारी बुद्धि नहीं है,—बल्कि बाबाका काम और संकीर्णके प्रति अनुयाय हो उठते हैं। अतः पिताकी जी-तोड़ मेहनतसे संवित समीन-आयबाद और खेती-बारीका अन्तमें क्या परिणाम होमा, वह हाँफ और सन्देहका विषय है।

सैर, जो हो उन जोगैका मकान बचपनमें देखा था। ठीकते पाद नहीं। सब वह छत्रपद कविकी बापी-गायनाके तपोवनमें स्थापित हो गया हो। उस एक बार ज्योंजैसे देखनेकी इच्छा हुई।

उसके ग्रामके पक्के में परिचित हूँ उसकी दुरगम्य भी पाद जाती है। किन्तु पोकी ही दर बाह मावस हो गया कि दीधनकी उठ वारके साथ आबकी ज्योंजैसे देखनेकी कठई गुजना नहीं हो सकती। बाबूजी समानेकी छड़क है अविद्यन समान। मिट्टी पत्थरकी परिकल्पना वहाँके लिए नहीं है। कोई करेगा, ऐसी दुष्टता में कोई नहीं करता। इतना ही नहीं संस्कार या मरम्मतकी सम्प्रदाय भी ज्योंजैसे अनन्त बहुत समय पहले ही पुक गई है। गाँववाले जानते हैं कि शिक्षावत वा अभिमोग निरुद्ध है—उनके लिए किसी भी दिन पाठशाला में बपने नहीं होये। वे जानते हैं कि पुण्याशुक्रमसे लड़कैके लिए सिर्फ छड़क-टैक्स देना पड़ता है पर वह छड़क कहाँ है और किसके लिए है, वह सब सोचना भी उनके लिए क्यावती है।

उस छड़कपर बहुकाव्यसे संवित और स्त्रीकृत बाबू और मिट्टीकी इच्छावतकी दृष्टि हुई हमारी गाड़ी सिर्फ प्लाटफार्म के ओरते आगतर हो रही थी। ऐसे ही बत्त मोहर एकाएक रहे ओरते विद्या उठा, “गाड़ीवान ! और नहीं,—और नहीं छोड़ो—एकदम रोको।”

• शब्द—बनारसमें बैरगी लम्बोई एक जगदाय। कबीर, दादू गिरि हिन्दीके लल्ल-कविबोधी बापी पाठशाला के घर-घर विद्या जाँचते हैं।

उत्तने यह इस तरह कहा जैसे पंजाब-येल्फा यामका हो,—जैसे फल-मरये ही सब देकुअम डेक अगर कथ न किये का सके तो सर्वनाशकी सम्भवना हो।

गाड़ी रुक गई। बाँयें हाथवाला रुद्धा उनके गाँव जानेका है। उठकर गौहरने कहा, “भीकान्त, उतर आओ। मैं बैग ले लेता हूँ, तुम बिछोना टकाओ प्यो।”

“आपद गाड़ी और आगे नहीं आयागी।”

“नहीं। देखो न, रास्ता नहीं है।”

बढ़ रही है। बचिण और बाँयों और कोंटवार पेड़ और देठ-कुंजकी कनी तथा सम्मिश्रित शाखा प्रदानाओंके कारण गाँवकी बढ़ गयी अतिशय लकीरें हो गई है। गाड़ीको अन्दर घुसानेका सो प्रयत्न ही अवैध था, क्योंकि अगर आदमी भी हाथिवालीके साथ छुटकर न पुते तो बाँयोंमें फँसकर उसके कपड़ोंका फटना अनिवार्य है,—अतएव कबिके कन्यामुधार बहोका प्राकृतिक सौन्दर्य अनिवार्य था। उत्तने बैगको कम्पेपर रखा और मैंने बिछोनेको बगलमें दबाया। इस तरह हम ओम गांधिकी बैगमें गाड़ीसे उतरे। कबि रहने जब पहुँचा तो शाम हो चुकी थी। अन्धकार लगाया कि आकाशमें बल्लत रात्रिका चन्द्रमा भी निरक्त आकाश है। आपद पूर्णिमाके आठ-पासकी तिथि थी, अतएव इस आशामें का कि रात्रिमें निराशमें बगलमें ठिके ऊपर का जर्म तो स्थिति के बारेमें निश्चय हो जाऊँ। मकानके चारों ओर बाँयोंका घना वन है। बहुत सम्भव है कि इसी वनमें उत्तका कोयल, नीलकण्ठ और गुलजरीका छुट्टा रहता हो और उन्हींकी आरतिया पुकार तथा गाना कबिको आश्चर्य बना देता हो। बल्लके पके सुते हुए असेक्य पत्तोंने लड़-सड़कर झंझर कर पत्तोंको चारों ओरसे परिभाषित कर रखा है। इनपर नजर पड़ते ही इस प्रेरणासे साय मन लगभगमें ही गमना कर उठता है कि लड़ हुए पत्तोंका मोठ पाया था। मौकसे आकर बाहरकी बैठक लोक ही और बची जगा हो। गौहरन तपत बिताते हुए करा, “तुम इसी कमरेमें रहो। देरना, फीकी सुन्दर दवा आती है।”

अनम्भ नहीं है। देखा, कि बचिणकी दवाकी बजहसे रोशनीकी लुप्टी हुई जलानों और पत्तोंने गलात पथन भीतर हुगकर कमरेको भर दिया है, तप्योको भी छा दिया है। कर्णपर देर पड़ते ही धीरे-धीरे उनका टका। लाटके

उससे संसारमें एक घूम सब जायगी। वह व्यादा पढ़ा-किला नहीं है। पाठशाला और स्कूलमें उसने सिर्फ थोड़ी-सी गणित और अंग्रेजी सीखी थी। स्कूल में नहीं थी, और छात्रवृत्त में भी नहीं मिला। शैक्षणिक न जाने कब और कैसे वह कविताओं में प्रेम कर बैठा। सम्भव है कि वह प्रेम उसकी धाराओं के लूनने ही वह रहा हो—इसके बाद संसारका सब-कुछ उसकी नजरोंमें अर्थहीन हो गया है। अपनी अनेक रचनाओं से उसे साद है। माझीमें बैठा हुआ चीज-बीजमें वह गुनगुनाकर आहूति भी करता था। उस वक्त सुनकर वह नहीं सोचा था कि इस अक्षय भक्त को बाग़दोबी करने स्वर्ण-यज्ञ की एक पंखुड़ी देकर किसी दिन पुरस्कृत करेंगी। पर अज्ञानत आराधना के एकमात्र आरम्भनिवेदनमें इस बैचारे को बिगम नहीं बिगम नहीं। बिलौनेपर लेटा हुआ सोचमें लगा कि बारह लाख बाद मुलाकात हुई है। इन बारह बरोंसे उसने सब पार्थिव त्वाओं को अलगाव देकर और एक रचना के बाद दूसरी रूपा करके क्लेशोंका पराङ्ग बना कर दिया है। पर वह सब किस काममें आवेगा? अनन्त है कि काममें नहीं आवेगा। गौहर व्याज नहीं है पर उसकी दुखर तपस्वकी अकृतार्थता स्मरण कर व्याज की मन दुखी होता है। सोचता है कि न जाने किन्तुने सोमाहीन, गन्धहीन फूल ओम कलुषोंके अन्तर्गतमें लिप्त हैं और फिर अपने आप ही मुख्य आवे हैं। परन्तु विश्व विमानमें यदि उसकी कोई व्यर्थकता है, तो छात्रवृत्त गौहरकी खजाना की स्पर्श नहीं हुई होगी।

गौहरने बहुत बड़े ही पुकारकर मेरी नींद सोझ ली। सब छात्रवृत्त सब बने थे, या न भी बने हों। उसकी हृष्ट थी कि वस्तु के दिनोंमें बम्बलके निम्नत योंकी के कोचर शोम्ब-सीम्बकी अपनी औलोंसे देकर घूम होई। उसका सब कुछ देखा था कि मानों में बिजानतसे झोडकर आया है। उसका व्याज पागलों बैठा था। अनुरोध टाकनेका उपाय नहीं था। अतएव हाथ-मुँह धोकर तैयार हाना पड़ा। माँगीरसे छटे हुए एक अधमरे आमुनके पेड़के अधिक हिस्से में सबकी और अधिकमें माछली क्या लिपरी थी। यह कवि की अपनी योजना है। अतएव निजीय शक्ति,—तथापि एकमें थोड़े-से फूल खिले हैं और वृष्टीमें अभी कविता फूटी है। उसकी हृष्ट थी कि गाँदे-से फूल मुझे उपहार है, पर पेड़में हटने काज बीजे थे कि लूनेका कोई उपाय नहीं था। उसने मुझे यह करकर खानेका ही कि कुछ देर बाद उन्हें लोफ़ीसे अनागत

समय धारके साथ बहकर आह अपरिमेय सेवार और कोई शुष्क तर भूमिपर फैल गई है और शिथिल और धूपमें सड़कर उछले घायी जगहको दुर्बन्धन भरक-कुण्ड बना दिया है। मरीचके उस पार कुछ दूर सेमरके पेड़में सेइको काट फूल लिसे हुए थे। उनपर नजर पड़ी, ऐकिन इस वक्त कबिको भी उस ओर दृष्टि आकर्षित करना ठीक नहीं लगा। उसने कहा, “बन्धो, घर लौट चले।”

“अच्छ, बन्धो।”

“मैंना लम्बाइ या कि ये सब चीजें अच्छी लगेंगी।”

कहा “अच्छी लगेंगी माई, लगेंगी। अच्छे-अच्छे खम्बोंमें तुम इनको कबितामें लिखो, मैं पढ़कर खुश हूँगा।”

“सावधान इतीकिए गोंबके आदमी एक बार मूठकर भी इन्हें नहीं देखते।”

“नहीं। देखते-देखते उन्हें अचानक हो पाई है। माई, झौलोंकी बन्ध और कानोंकी बन्ध एक नहीं है। जो यह सोचते हैं कि कबिके बचनको अपनी झौलों देखनेपर खेद मोहित हो जाते हैं, वह महीं जानते खस क्या है। दुनियाके हर काममें वह बात लागू है। झौलोंके लिए जो एक साधारण घटना या बहुत मामूली-सी वस्तु है वही कबिकी मायामें ‘नयी सृष्टि’ से जाती है। तुम को देखते हो वह भी खस है और जो मैं नहीं देख सका वह भी खस है। इसके लिए तुम दुखी मत होना गौहर।”

तो भी झौलते समय रास्तेमें उसने न जाने किसनी और क्या-क्या वस्तुएँ दिलानेकी चेष्टा की। पक्का प्रत्येक नुस्ख, प्रत्येक कला-गोवातक मामो उसका पहचाना हुआ है। न जाने कब एक पेड़की छत्र ओपबिके लिए कोई छेककर से यवा या और उससे निराकनबाजा पराय जर भी हर रहा था। सहसा ठठे देखकर गौहर सिर-सा उठा। उसकी झौलें छलछल आई — मैं उसकी मुँहकी ओर देखकर यह स्पष्टता समझ गया कि अन्तरमें उसने किसनी बेरनाका अनुभव किया है। परन्तु मैं जो अपनी लज तोरि हुई थी मैं पुनः वापस प्राप्त कर रहा था, वो देखक अपनी होशियारीके कारण नहीं इसका कारण तो गौहरके स्वभावमें ही है। ब्रह्मण्डके प्रति मेरा श्रेष्ठ बहुत-बुद्ध अपने आप ही कम हो गया। अचानकसे मुग्धकाठ नहीं हुई, क्योंकि मुन्ना गया कि उसके घरमें उसके दो माछियोंपर खीर-माछाकी कृपा

दुर्ग है। अफसक गोंव-गोंवमें विद्युच्चिन्ता-माताके रहन नहीं हुए है,—व लकी हुए लकैयोंके पानीके योदा और सल जानेकी राह देल रही हैं।

मेर, पर पहुँचकर गौहरने अपना पाया मेरे सामने हाजिर कर दिया। ऐसा आदमी संसारमें किरण ही होगा जिसे उलका परिणाम देनाकर मय न कमया। बोध्य, “बिना पड़े धुंधी नहीं मिलेगी भीकान्त, और तुम्हें अपनी सब-सब राय देनी होगी।”

वह अक्षय्य तो थी ही। साफ-साफ राखी हो लई रहना चाहत नहीं था, तो भी कबिकी जादिकामें इस पाशाके, एकके बाद एक, मेरे साथ दिन काम्यालोचनामें ही कट गये। काष्णकी बात जाने हो, किन्तु उपन साहसर्षमें इस मनुष्यका जो परिचय मिला, वह जितना सुन्दर था उतना ही विस्मयकारक।

एक दिन गौहरने कहा, “भीकान्त, तुम्हें क्या जानेकी क्या बरत है। हम दोनोंके ही जाना कहने व्यक्त कोर नहीं है, तो व्यक्तो न हम दोनों माह वही एक साथ जीवन बिता दें।”

हँसकर कहा, “मैं तो तुम्हारी तरह कवि नहीं हूँ मारि, न पेड़-पौधोंकी भाषा ही समझता हूँ, और न उनसे बातचीत कर सकता हूँ, फिर इस अक्षय्यमें कैसे रह लूँगा। वो दिनमें ही हँस जाऊँगा।”

गौहरने यम्मीर हाँकर कहा, “किन्तु मैं उनकी भाषा काकई समझता हूँ। वे सबमुच बाकते हैं,—क्या तुम आज विश्वास नहीं करते।”

मैंने कहा, “यह तो तुम भी समझते हो कि विश्वास करना मुश्किल है।”

गौहरने लकड़ासे स्वीकार कर दिया, कहा, “हाँ, हाँ, वह तो समझता हूँ।”

एक दिन सुबह अपनी समारण्यका अशोक-वनवास अग्राह्य कुछ देखाक पदनके बाद उठने इठाव शिताव बन्द कर ही और मेरी ओर घूमकर प्रान दिया, ‘अच्छा भी-कान्त, तुमने कमी किसीको प्यार किया है।’

कल बहुत रातक आगकर राखरमीको दावद अपनी आन्तरिक बिट्टी खिरी थी। उसमें काकाकी कर्त, पूँछकी कथा और उसके दुष्पण्यका समस्त विवरण था। उन लोगोको बचन दिया था कि एक आदमीकी अनुमति मोग लैगा,—तो वह मित्र भी उसमें मोगी थी। बिट्टी मेकी नहीं

उठ बस पाईयों ही पड़ी हुई थी। गौहरके प्रसन्न सस्तरमें हँसकर कहा,
“नहीं।”

गौहरने कहा, “परि कभी प्यार करो, वरि कभी ऐसा दिन आये तो
मुझे बखाना श्रीकाम्त।”

“जानकर क्या करोगे?”

“कुछ भी नहीं। तब तर्क तुम लोगोंके बीच जाकर कुछ दिन काट
आऊँगा।”

“अच्छा।”

“और अगर उठ बस अपनीकी जकड़ हो तो मुझे खबर दे देना। बाबूजी
बहुत स्वया छोड़ गये हैं, वह मेरे काममें तो लगा नहीं,—किन्तु याबर तुम
कामोंके काममें लग जाय।”

उसके कहनेका ठीका कुछ ऐसा था कि सुनते ही ओंखोंसे मनु निकल
पड़े। कहा, “अच्छा, वह भी खबर दूँगा। पर आधीरात हो कि हलकी
कभी जकड़ न पड़े।”

मेरे जानेके दिन गौहर फिर मेरा पैग उठाकर प्रस्तुत हो गया। इसकी
जकड़ न थी, नवीन तो घमेंडे प्रयास बखस्य हो गया, पर उसने एक न
हुनी। ड्रेनमें बैठकर वह औरतोंकी तरह रो उठा बोला, “मेरे तिरकी बस्य
है श्रीकाम्त जबसे जानेके पहले एक दिन फिर आना चाकि फिर एक बार
मुझकात हो जाय।”

आवेदनकी उरिछा नहीं कर सका, बचन दिया कि मिलनेके बिय फिर एक
बार आऊँगा।

“कलकत्ता पहुँचकर कुछक-संवाद होगे न?”

वह बचन भी दिया। मानो मैं जाने कितनी बुर बख्त था रहा हूँ।

कलकत्ताके मकानमें जब पहुँचा, तब प्रायः सन्धा हो गई थी। चौखटपर
पैर रखते ही मिलके दर्शन हुए, वह और कोई नहीं स्वयं रतन था।

“वह क्या है, तू है?”

“हाँ, मैं ही हूँ और कलसे पैठा हूँ। एक बिट्ठी है।” छयस मवा कि उठी
प्रार्थनाका उत्तर है। कहा “आकसे मेजनेर भी तो बिट्ठी मिल जाती।”

रतनने कहा, “यह स्वकस्या किसान, यकूर और लाचारन घरके बिय

है। मौकी जिन्ही अगर एक आदमी बिना लाये-यीये और साथे पौच-सी मौक हाथमें लिये रोइया हुआ न आवे, तो लो न आवगी। आप तो सब जानते हैं, क्यों छट-मूठ पूछ रहे हैं।”

बाबूने सुना कि रतनका यह अभियोग सच है। क्योंकि खुद ही उल्ट होकर वह यह जिन्ही अपने हाथ बांधा है। मास्म हुआ कि ट्रेनकी मीढ़ और आहार बगीरहकी सम्पत्तिका कारण उसका मित्रास बिगड़ गया है। ईसकर कहा, “ऊपर था। जिन्ही पोछे पहुँचा, चक्क, पहले ठरे लानेका इन्तजाम कर ई।”

रतनने पैरोंकी धूल लेकर प्रणाम किया और कहा, “बन्धिये।”

३

डकारते चौंकाता हुआ रतन दालिच हुआ।

“कह रतन, पेद भर गया।”

“जी हाँ। आप चाहे कुछ भी कहें बाबू, लेकिन हमारे कम्बुत्तके बंगाली प्रान्तोंके लकाबा और कोरें रसोह बनाना नहीं जानता। उनके बागे तो इन मारवाड़ी महापुरुषोंको जानवर ही कहा जा सकता है।”

मुझे पार नहीं कि दोनों प्रान्तोंकी रसोहकी अफ्फार-मुयार्ह या रसोहदेकी कम्बुके बारेमें रतनल कमी ली बरत की हो, पर रतनको बिठना जानता हूँ उससे बरी लकाबा हुआ कि मुम्बुर भोजनसे वह नृप समुह हुआ है। अगर वह बात न होती तो वह पश्चिमी रसोहोंके बारेमें ऐसी निरोछ राब न दे सकता। उसने कहा, “गाइमें बरके तो कम नहीं लगे, हाथ-पैर कैम्बकर छेदे बिना—”

“तो अच्छा है रतन, चाहे कमरमें चाह बरामरमें बिछौना बिछाकर ला जा, कक तर बाँधें होगी।”

म जाने क्यों जिन्हीके लिए उत्कण्ठा न थी। ऐसा क्या था या कि उसमें जो कुछ लिग्न होगा वह तो मामूली ही है।

रतनने बगुरकी बेबसे एक लिग्नम निकालकर मेरे हाथमें द दिया। बगुरेसे लीट मोर किया हुआ था। बाबा, “बगामेकी हल बधिग्वादी रिहकीके बगुरमें बिछौना दिया है। मगरही बगानेकी हासट नहीं होगी। कककसेके मन्दाबा पेशा मुग बौर क्यों है। क्या है—”

“किन्तु तब तब बन्धी है न रत्न !”

रत्नने मुँह गम्भीर कर कहा, “ऐसा ही तो लगता है। गुब्बेवकी कृपासे मकानका बाहरी हिस्सा गुब्बेदार है। भीतर राख-बात्तियाँ बंदू बाधू और नई बहूने आकर बाहर रोशन कर दिया है, और लड़के ऊपर स्वर्ण मौँ है जो मकानकी भाँति है। ऐसी गल्लीकी सुगंध कौन करेगा ! लेकिन मैं बहुत पुराना नौकर हूँ, आठिका पार्श्व हूँ—रत्नको हत्ती बस्ती मुझका नहीं दिवा था सफ़ा बाधू। इसीलिए तो उस दिन रोशनीपर जीँलोंके बन्धु न रोके लक्ष्य। यह निवेदन किना था कि परदेमें नौकरोंकी कमी होनेपर रत्नको एक बार लक्ष्य बन्द दे दें। जानता हूँ कि आपकी सेवा करनेपर मैं उसी मौँकी सेवा होयी। धर्मका फलन नहीं होगा।”

मैं कुछ भी नहीं समझ, सिर्फ़ चुपचाप ताकता रहा। वह कहने लगा, “बंदू बाधूकी लक्ष्य उस भी हो गई, बोका-बहुत पद-बिजलकर आरम्भी भी बन गये हैं। अचर्य सोचते हैं कि लूटके अवीन किराये पर रहा बन्धु। राजपक्षी कोरसे लक्ष्य मार तो लिया ही है। जानता हूँ कि मोठे छीपर उन्होंने कपटी हाथ लाक किया है पर वह कितने दिनोंका है बाधू !”

बात अर भी ताक न हुई, पर एक पुँचकी लावा जीँलोंके चामने छर गई। वह फिर कहने लगा “आपने तो बुर बन्धी जीँलोंके देख है कि मछीनेमें कमसे कम दो लक्ष्य मेरी मौँकी बूट आती है। लक्ष्य बुध नहीं है नाचक होकर आ मौँ लक्ष्य हूँ, लेकिन क्यों नहीं आता ! आ नहीं लक्ष्य। हत्ता जानता हूँ कि बिसरी ब्याते लक्ष्य कुछ हुआ है, उसके एक निम्नारसे ही आपसिनके मेनकी तरह लक्ष्य ओप हो जायगा वह लक्ष्य मारनेकी भी पुँच नही देगा। यह मौँकी माराजगी नहीं है, वह तो मेरे बैस्तल्य आधीबाँर है।”

मैं पाठकोंको यह स्मरण करा देना आवश्यक है कि बचपनमें रत्न बोदे दिनोंतक मायमरी स्कूलमें शिक्षा प्राप्त कर चुका है।

कुछ बककर कहा, “मैंने मना कर दिया है, इसीलिए कभी करता नहीं। धर्मों को कुछ था बाधाने के किना, बचपानोंका एक परतक नहीं दिया। एक छोटा बकूआ और बकूकी, और उनकी मौँको छोड़कर पेटके लिए एक दिन मौँके छोड़कर बाहर निकल पड़ा। पर पड़के बन्धुकी लाला थी, मेरी मौँकी इन मौँके ही घर बना गई। लारा बुलका उन्होंने मुना, लेकिन उस लक्ष्य

कुछ नहीं कहा। एक बड़के बाद मिने निवेदन किया, 'मों, बन्धोंको देखनेकी इच्छा है, अगर कुछ दिनोंकी छुट्टी मिल जायगी—'। ईतकर बाबू, 'चिर आभोये न।' जानेके दिन शाममें एक पाठकी बैठे हुए कहा 'रतन, बाबासे कहार्इ शगदा मत करना भैया, बी कुछ गुमराय बन्ध गया है उसे इसके इरादे पेरे लेना।' गठरी लोडकर देखता हूँ तो पीच-सी बन्ध है। पहले तो अपनी आँखोंपर बिन्दास नहीं हुआ। ऐसा क्या, मानो मैं बाबू बन्धस्यामें खन होर रहा हूँ। मेरे उसी मति बहू बाबू अब उसी-सीधी बात करते हैं, बाबूमें लड़ लड़कर कुल-कुल करते हैं, जानता हूँ कि अब इनके ब्यादा दिन नहीं हैं, क्योंकि अब मों-बन्धी जानेसोचायी है।"

मिने यह आँकड़ा नहीं बी पी, चुनचाप मुनने लगा।

पेला क्या कि कुछ दिनोंस अब और थोपले रतन पूर रहा है। बोला, 'मों बर दीर्घ है ता थोनी शायते उरक दीर्घ हैं। बहूको मी दिया है, इसीलिए उठने बर सोच लिया है कि मनु निबोड़े हुए उसको क्या कीमत!—एत बहू तो बगलामे बगदा उसे बन्धया ही जा सकता है। इसलिये उसको बे इतनी अमिय हो रही है। मूरत यह नहीं जानता कि बाबू मी मोंस एक गदना बेननेपर पेरे पोंच मजान पैगार हो सकते हैं।"

मैं मी यह म जानता था। ईतकर कहा, "एसी बात है! पर यह सब है क्यों?"

रतन भी हँसा। बोला, "उन्हींके बात है। मों पेनी बेसूझ नहीं। किर्न आपईके बरबोपर सर्जल कुयकर बे मिनारिणी हा सज्जी है, किन्तु और किसीके मी फिर नहीं। बहू नहीं जानता है कि आपईके किन्दा एते मोंको ब्याधयकी कमी म होगी, और बरतक रतन जीवित है तबतक उन्में मोकरके निर भी सोचनेकी जरूरत नहीं। उत दिन कार्याते आपईके एत तरह बने जानेकी बबरत मोंके इरबमें केता तीर चुमा है, इनकी लपर करा बहू बाबू रखते हैं। गुद मारायबधा मी ठगरी गब-लकर कहते मिल सकते हैं।"

"पर मुस ता उन्हेने ही थुर दिवा किया था, इनकी गार तो रतन, पूरे है।"

बीम निहालकर रतन अम्ति गढ़ गया। उनमें इतनी दिवत बने

कमी न देली थी। कहा, “बानू, हम तो नौकर-भाकर हैं, ये सब बातें हमारे कानोंको नहीं छुननी चाहिए। यह झूठ है।”

रतन यकाबद मित्रनेके लिए बजा गया। घायल कल खाठ बजेके पहले उसके शरीरमें स्फूर्ति नहीं आवेगी।

दो बड़ी सारें मिलीं। एक तो यह कि बंकू अब बड़ा हो गया है। पट्टेमें जब पहली बार मैंने उसे देखा था तो उस कल उसकी उम्र सोमर-छतराकी थी। अब इकतीस वर्षका मुबक है। बसिक इन पाँच-छह वर्षोंमें पढ़-लिखकर वह आदमी बन गया है। अब दौलतका वह सलूतक स्नेह यदि आज बोननके अस्तम्यान-बोननमें सामेकस्व न रह पाता हो, तो इसमें बिस्मयकी कौन-सी बात है।

बूझी सार यकनस्सीकी गम्भीर बेदनाका पता न तो बंकूको और न गुरु देवको ही आकलक मिला है।

मेरे मनमें वे ही दो बातें बहुत देखाक बूझी रहीं।

बड़े बन्सरे अकिस बमदेकी सीख-सीहरको देलकर बिट्टी लोखी। उसके हाथकी किल्लबद ब्वादा देलनेका मौका नहीं मिला है, पर, यह सपाक जाया कि अखर ऐसे तो नहीं हैं कि पड़नेमें लकड़ीक हो लेकिस फिर भी अण्डे नहीं हैं। पर यह पत्र उसने बहुत सावधानीसे लिखा है। घायल उसे हर यह कि मैं बिड़कर फेंक न हूँ, बसिक तुमसे आशिस्तक लक-कुछ आखानीसे पद का लई।

आचार और आचरकमें यकनस्सी उस युगकी प्राणी है। प्रयव निवेदनकी अकिकता तो बुरी बात है, बसिक यह भी बाद नहीं आया कि उसने मेरे सामने कमी कहा हो कि ‘प्रेम करती हूँ।’ उसने बिट्टी किली है—मेरी प्रार्थनाके अनुकूल अनुमति देकर। तो मी, न जाने क्या है पड़नेमें अपने कहीं हर काने कया। उसके बाम्य-बाककी बाद आ गई। उस दिन गुरु-माराधकी पाठशाळामें उसका पढ़ना निलना बन्द हो गया था। बादमें घायल भरल ही बीड़ा-बहुत पढ़-लिख लिया होगा। अतएव मापाका इन्द्रबाक अण्ठीकी शंका, पद निन्नासकी मधुरताकी उसके पत्रमें आधा करना अम्पाव है। कुछ मामूली प्रबकित बातोंमें ही मनके माव अक करनेके

अथवा वह और क्या करेगी ! अनुमति देकर मामूली छुप-कामनाकी वो चाहने लगी,—यही तो ! पर किन्नाफा लोकर पढ़ना शुरू करते ही कुछ देरके लिए बाहरका और कुछ भी याद न रहा ! पत्र कम्मा नहीं है, लेकिन माया और मंगी जितनी तरह और सहज समझी थी, उतनी नहीं है। मेरे आवेदनका उत्तर उधने इस तरह दिया है

“काशीधाम

“प्रणामके उपपन्न चेष्टिकाका निबंदन ।

“इस बार मिठाकर कुछ छे दण्ड तुम्हारी बिट्टी पड़ी। तो भी यह समझमें नहीं आया कि तुम पागल हो गये हो या मैं। तुम्हने धावद यह जवाब दिया है कि मैंने तुम्हें पढ़ा हुआ या किया था। परन्तु तुम कहीं पड़े हुए नहीं थे, तुम बहुत तपस्याके बाद भिडे थे, बहुत आराधनाके बाद। इसीलिए, बिदा देनेके माफिक तुम नहीं। मुझे त्याग करनेका माफिकाना स्वत्वाधिकार तुम्हारे हाथोंमें नहीं है।

“तुम्हें याद नहीं, पूछोंके बन्ने बनेसे कटोरे तोड़, उनकी माया गूँथकर, किस घोरत्वमें तुम्हें बरन दिया था। हाथोंमें कौटे पुम जानेकी बजहसे लून बहने लगता था, अक मायाका वह रंग तुम नहीं पहचान सकें थे। बाकिनाकी पूछाका अर्थ उस दिन तुम्हारे गलेमें था। परन्तु तुम्हारे हृदयपर रक्त-रेखासे जो लेख्य अंकित कर देती थी, वह तुम्हारी नक़्क़ोंमें नहीं पड़ी। पर किसी नक़्क़ोंसे संसारका कुछ भी छिपा नहीं रह सकता, उनके पाद-पद्मोंमें मेरा वह निवेदन पहुँच गया था।

“उसके बाद आई सुषोंगकी रात। कासे मेघोंने मेरे व्याकाशकी व्योम्ना टैंक ली। हिन्दु वास्तवमें वह मैं हूँ या और कोर, इस जीवनमें क्यायं रूपमें वे सब बातें हुई थीं या सोते-सोते स्वप्न देण रही थी,—वह जानते ही बहुधा मुझे डर लगता है कि मैं पागल हो जाऊँगी। तब तब मूककर जितना ध्यान लगाकर बैठती हूँ, उतना नाम नहीं लिया जाता। किसीसे करनेकी बात नहीं है। उनकी धाम ही मेरे जगदीश्वरकी धामा है। इसमें शकती नहीं है, छन्द मरी। यहाँ मैं निर्मल हूँ।

“हाँ, कहा था कि इसके बाद मेरे घुरे दिनोंकी रात आए, दोनों व्योम्नोंकी धारी धारनीको कड़कने मुसा दिया। पर बहो बरा अनुपका समस्त परिचय

है ! उस वक़्त मैंने अपने आबरु के बाहर उसका क्या और कुछ भी बाकी नहीं है !

“है ! सम्पादक आपका भी बोल-बोल उसे मैंने बार-बार देखा है ! अगर ऐसा न होता, बिगठ दिनों का राखत यदि मेरी समस्त अनागत मीठाक़ी निःशेष प्राप्त कर लेता, तो तुम फिर मुझे कैसे मिलते ! मेरी ही हाथोंमें जाकर फिर तुम्हें कौन लौटा !

“मुझे तुम बार-बार बर्ष बड़े हो, तो मैं तुम्हें जो अप्पन समझा है वह मुझे खोना नहीं देता ! मैं बंगाली घरकी कड़की हूँ, जीवनके सचाईत बर्ष पार कर चुकनेके बाद पौकनका राखा और नहीं करती ! मुझे तुम शक्ति मत समझना,—बाहे किन्तनी ही अचम क्यों न होई ! अगर वह बात तुम्हारे मनमें क्षमकरके किए जुवायरम्बायसे भी जाये, तो इससे बढ़कर शर्मकी बात मेरे किए और कोह नहीं है ! बहू किया रहे, वह बड़ा हो गया है ! उसकी बहू का गर्व है,—तुम्हारी छातीके बाद उन लोगोंके सामने मैं किन मुँहसे निकलूँगी ! यह अपमान कैसे सहूँगी !

“अगर तुम कभी बीमार पड़ो तो सेवा कौन करेगा—पूँछ ! और मैं तुम्हारे मकानके बाहरसे ही मोकरके मुँहसे खर पूँछकर और आऊँगी ! इसके बाद मैं भीकित खनके किए कहते हो !

“आपद घन करोगे, तो क्या हमेशा ही ऐसा निश्चय जीवन काटें ! पर मन बाहे कुछ भी हो, उसका जवाब देनेकी जिम्मेदारी मेरे ऊपर नहीं है, तुम्हारे ऊपर है ! फिर मैं अगर तुम बिचकुल ही कुछ न सोच सकूँ,—इन्दिता इतना घब हो गया हो तो मैं उबार दे सकती हूँ, वह जेयनी नहीं पड़ती,—लेकिन देखो, श्रवको कहीं अस्वोकार मत कर देना !

“तुम सोचते हो कि मुझे मुझे मुझे मुक्ति का संभव दिया है, शास्त्रोंने पक्का समझान दिया है, मुन्नाने धर्मकी प्रशंसा की है, और तुमने दिया है किर्त मार,—बोला ! ऐसे ही अन्धे हो तुम और !

“पूछती हूँ, तुम्हें तो मैंने तेरेस काही उल्लेख या किया था, पर इसके पहले ये सब क्यों थे ! तुम इतना ज्यादा लौच सकते हो और वह बड़ी सोच सकते !

“मुझे ज्ञाता भी कि वह किस भी सब पारोंका अन्ध हो जायगा, मैं

निष्ठाप हो जाऊँगी। यह बोम क्यों है, जानते हो? स्वर्गके लिए नहीं—
यह मुझे नहीं चाहिए। मेरी कामना है कि मरनेके बाद फिर आकर जन्म ले
ऊँ। इसके मानी समझ सकते हो?

“छोना या कि पानीकी बाधमें बौबड़ भिन्न गई है,—मुझे उसे निर्मल
करना ही पड़ा। पर आज अगर उसका मूल स्रोत ही शुद्ध न था, तो पड़ा
यह अप्रमत्त मेरा अस्तित्व, पूजा भवना, यह बाधगी सुनन्ता, पड़े रहने में
गुह्य है।

“होच्छाते मैं मरना नहीं चाहती। पर मेरे आश्रित करनेका कूट कोणक
अगर तुमने रखा हो तो इस विचारको छोड़ दो। अमर तुम फिर जाने तो मैं
पी हूँगी, पर उसे न ले सकूँगी। मुझे जानते हो, इच्छाएँ यह बता दिया कि वो
सर्व अस्त होगा उसके पुनः उदयकी अनेकाने होते रहनेका वक्त अब मेरे पास
नहीं है। इति।

राजलक्ष्मी।”

पुरुषाय भिक्षा। सुनिश्चित कटोर अनुशासनकी परम्परायि मेककर
उत्तरे एक ओरले मुझे विष्णुल निश्चित कर दिया। इस जीवनमें उस विषयमें
लोचनेके लिए अब और कुछ नहीं रहा। पर निःशेषपूर्वक यह तो मायूम हुआ
कि क्या नहीं कर सकूँगा। पर इसके बाद मुझे क्या करना होगा, इस बारेमें
राजलक्ष्मी निश्चुल सुष है। धायर उपदेशोंसे मरी हुई एक चिन्ती और किन्ती
दिन मिलेगी, अथवा तयवीर मुझे ही तन्त्र करेगी। लेकिन इस वक्त का व्यकरण
हो गई है वह बहुत ही सुन्दर है। इधर बाबा मशरुप समस्त कल मुहुर ही
आकर हाथिर होये। उन्हें मरोसा दे आया हूँ कि निक करनेकी जरूरत नहीं,
अनुपति मिलनेमें कोई विघ्न न होगा। पर वो कुछ आ पहुँचा वह निरिप्य
अनुपति ही था है। रतन मारके हाथ उलने कवन और म्मेर-मुहुर नहीं मेघ,
परी बहुत है।

दूसरी ओर दण्डके मकानमें विवाहका आयोजन निश्चय ही धमसर हो
या होगा। ईदके आधोव लक्ष्मीमेंसे कार्र-कोर धायर आकर हाथिर ही
रे होने, तथा शात-बनका अथवाभी बड़कीका इत्ते दिलौतक बंठना और
मलनाके बरमे अब कुछ आदर मिल रहा होगा। यह जानता हूँ कि बापाते
क्या कहूँगा। पर वह बात बैसे कहूँगा, यही समझमें नहीं आता। उनके निर्मम

लकायें, कजारीन बुकियों और बकायतकी बारेंमें मन-ही-मन सोचकर एक जोर हृदय कितना ठिक् हो उठा। वृत्ती और अर्थ प्रभावर्तनकी निराशासे बिदे हुए परिवारवालोंके उक्त अभागी बड़प्पीको और भी क्या उत्पीड़ित करनेकी बात सोचते ही हृदयको ठठनी ही क्या पहुँची। पर उपाय क्या है? निश्चिनेपर सेरा हुआ बहुत रातक आगता रहा। पैरू की बात भूखनेमें डेर नहीं कमी, पर गोग्य मारीकी याद बराबर आने लगी। जन बिराह उक्त भुज गौरकी स्मृति कमी भिन्न नहीं सफ़ती। इस जीवनकी संग-कमुनाकी प्यार एक दिन यहीं आकर सिद्धी थी और जोड़े अलखेक पात-पात प्रवाहित हो एक दिन यहीं फिर लज्जा हो गई थी। एक साथ छेनेके वे लहरवावी दिन भ्रष्टासे मरे, स्नेह से मधुर, मान-बसे उलझक और उमकी ही तरह निःशब्द बेदनासे अत्यधिक लज्जा है। निष्पेक्षके दिन भी हमने प्रसन्नताकी निम्नासे एक-दूतरेको कलंक नहीं कम्पाया नके-मुकसानके निम्नके बाद-विवाहसे गगनमयीके शास्त यहाँको हम भूमाच्छन्न करके नहीं आये। यहाँके लव लोग यही जानते हैं कि फिर एक दिन हम छोड़ आये, फिर हँसी-मुसीबत शुरू होती और फिर अरम्भ होती भूत्वाभिन्नी की बीन-बुलियोंकी सेवा और छकार। पर वह सम्भावना तो लज्जा से गई है—प्रभावकी विच्छिन्न मलिका दिनके अन्तका हुक्म मानकर चुप हो गई है—यह बात वे स्वप्नमें भी नहीं सोचेंगे।

औरोंमें नींद नहीं है, निराश्रित रक्ती प्रातःकाककी ओर कितनी आगे बढ़ने लगी, ठठनी ही यह इच्छा होने लगी कि यह रात लज्जा ही न हो। लिय यही एक किन्ता मानो मुझे मोहाच्छन्न करके रखे रही।

बीटी हुई कहानी बूम-फिरकर मनमें आ जाती है। बीरभूम बिछेकी यह लुप्प कुटिया मनपर भूतकी तरह बण आती है, हमेशा काम-काजमें रँगी हुई राककसीके बोनी निम्न हाथ औरोंके सामने लफ मकर आते हैं, इस जीवनमें परिश्रुतिका ऐसा आस्थादन कभी किया है, पर यह नहीं आता।

अभीतक पकड़ा ही गया हूँ, पकड़ यहीं पड़ा हूँ। पर राककसीकी लपते बड़ी कमजोरी करी है, आज पकड़ ली। यह जानती है कि मैं नीरोम मरी-हूँ, किसी भी दिन बीमार यह छकता हूँ। लव न आने करीकी एक पैरू मुझ फेरकर बीटी है, राककसीका कोई प्रमुख ही नहीं है,—रतनी बड़ी

सुर्पणाको वह अपने मनमें स्थान नहीं दे सकती। संसारकी लज पीछेते वह अपनेको बंभित कर सकती है पर वह बस्तु असम्भव है,—वह उसके किय अक्षय्य है। मीठ सुख है, इसके निकट एक ओर रह गये सुखदेव और एक ओर रह गये उसके कप-रुप और ऋत-उपवास। बिट्ठीमें उसने मुझे हृदय डर नहीं दिया था है।

सुबहके बल छापर लो गया था। रतनकी पुकार सुनकर जब ठठा तो काफ़ी बल हो गया था। उसने कहा, “न जाने कौन एक बूढ़े महाशय घोड़ा-गाड़ी करके आये हैं।”

वे बाबा हैं। पर गाड़ी किराये करके। लम्बेह हुआ।

रतनने कहा, “छायेमें एक सतह अठारह लाखकी कच्ची है।”

वह पूँटू है। वह बेघरमें आरम्भी उठे कलकत्तेके मकानतक फटीट था था है। सुबहका प्रकाश छिछकासे मयन हो गया। कहा “उम्हें उस कमरेमें आकर बैठाओ रतन, मैं तुम्हें छाप बोककर आता हूँ।” वह कहकर मैं नीचेके स्नान-घरमें गया गया।

पछे-भर बाह्र झोटे ही बाबाने मेरी छावर अम्बरना की, मानो मैं ही उनका अतिथि हूँ, ‘आओ बेरा आओ। तबीयत अच्छी है न?’

मैं प्रणाम किया। बाबाने पुकार मचाई ‘पूँटू, कहाँ गई?’

पूँटू लिफ्टकीके किनारे लड़ी हाकर रास्ता देख रही थी, उसने वाप आकर मुझे ममत्कार किया।

बाबाने कहा “हमकी मुआ छादीके पहले एक बार देखना चाहती थीं। कुछ तो हाकिम हैं पोंच तो रुपया महीना पाते हैं। बावमण्ड हारबामें लगादवा हुआ है—पर-परलपी छोड़कर बाहर जानेकी पुर्नत मुआको नहीं है। हलमिप छाप देवा बाबा। सोना कि बुलीके हाथोंमें लोपनेके प्यवे उन्हें एक बार दिला लार्ड। हमकी बाबी-माने आधीबाह देकर कहा, “पूँटू, देवा ही भाग्य सेरा नी हो।”

मेरे कुछ कहनेके पहले ही पुर बोलने, “मैं हतनी जल्दी नहीं छोड़ूँगा मैरा। हाकिम ही चाहें और कुछ हो है तो रिस्तेबार,—नई हाकर काम पूरा करना होगा—उप उन्हें सुनो मिन्नेमी। जानते तो हो बेरा, कि छाम काबमें पटुड निर होवे दें,—छायेमें कहा ही है, ‘भोपाधि बहुकिमनि।’ ऐसे एक आरम्भीके

सबे खानेपर किसीकी पूँतक करनेकी मनाक नहीं होगी। हमारे गोंबके बोमोंका तो निश्चाय है नहीं,—वे सब-कुछ कर सकते हैं। पर वे तो हाकिम हैं, उनकी तो राशि ही म्यारी है।”

पूँदूके प्रमथ है। समाचार अचान्तर् नहीं है,—मलकका है।

नया हुकूम जारीकर रखन सबसब बिजय सजाकर दे गया। थोड़ी देखाक यौरस देखनेके बाद बाबाने कहा, “पेला क्यता है कि इस आदमीको कहीं देखा है।”

खनने खौरन ही कहा, “जी हों, देला क्यों नहीं है। देखके मकानमें सब बाबू बीमार थे—”

“ओ, लमी तो कहा कि पदवाना हुआ देहरा है।”

“जी हों।” कहकर खन बस गया।

बाबाका मुँह कल्पन्त यम्मीर हो गया। बूँत आदमी ठहरे, धावर उन्हें लारी बाट बाद आ गई। कुरबाप बिजयके रस क्यता हुए बोले, “आनेके लिए दिन देखकर म्यता था। बहुत बज्जत दिन है। मेरी इच्छा है कि आधीराँवका काम देते ही कल्प कर लें। मूठन बाजारमें तो लमी बीबे बिकती है। मौकरको एक बार मेव नहीं सकते। क्या करते हो।”

सब कुछ मी कहनेकी न बिजय तो किसी तरह सिध कह दिया, “नहीं।”

“नहीं। नहीं क्यों। बाबू बजेतक दिन बहुत बज्जत है।—संभाव है।”

मिने कहा, “पंचायकी बकरत नहीं। मैं बिबाह नहीं कर सकता।”

बाबाने हुक्मकी दीवारसे क्यकर रख दिया। देहरा देखकर मैं ताक गया कि वह पुइके लिए तैयार हो रहे हैं। गलेको बहुत धान्य खौर यम्मीर कनाकर कहा, “सब आबोचन एक तरहसे पूरा हो गया है। बककीके म्यारकी बात है, ईसी मकानका मसमता तो है नहीं।—बचन दे आनेपर अब ना करनेसर कैते काम बजेगा।”

पूँदू पीठ किये सिइकीके बाहर देला रही है और दरबाबेकी आइये खन सब क्यये लहा है वह बज्जती तरह माहम हो गया।

मिने कहा, “बचन देखर ता नहीं म्यता था, यह आप मी ब्यनते हैं और मैं मी। कहा था कि एक व्यक्तिकी अनुमति बिज आनेसर लमी हो सकता है।”

“अनुमति नहीं मिली !”

“नहीं !”

बाबा एक क्षण टहरकर बोले, “पूँदूहै पिता कहते हैं कि लक्ष मिथ्यकर वह एक हजार रुपये देंगे। क्या बाबा और बगानेपर और भी लौ-लो-लौ दे सकते हैं क्या करते हो !”

सन्ताने कमरेमें मुत्तकर कहा, “तम्बाकू क्या एक बार और बरछा हूँ !”

“बरछा हो। तुम्हारा नाम क्या है बी !”

“रत्न !”

“रत्न ! बड़ा सुन्दर नाम है, क्यों रहते हो !”

“काशीमें !”

“काशी ! देवी आकलक लावद काशीमें रहती है ! क्यों क्या करती है !”

सन्ताने मुँह ऊपर उठाकर कहा, “उस सम्प्रदायसे आपको मन्त्रव !”

बाबा क्या हँसकर बोले, “नाचक क्यों होते हो बापू, श्रेष्ठ करनेकी लो कोहँ बाव नहीं। गौनकी लड़की है न, हकीकिय लहर बननेकी इच्छा होती है। थापद उलटके पास भी कभी का पड़ना प”।—लेह, वह अच्छी तरह तो है !”

रत्न बिना कोई कबाब दिये ही चम्प गया, और कोहँ को मिनट बाद ही निश्चयका पूँकता हुआ झेद आवा और दुका रायमें पस्यकर क्या का रहा था कि बाबा बड़ जोरसे कई दम लगाकर ही उठ लगे हुए। बोले, “टहते तो मर, क्या पान्थना भिग्य हो। लुच ही निकल पड़ा हूँ न। करते-करते वे रत्नके आगे ही बहुत ठोकीके साथ कमरेसे बाहर निकल गये।”

पूँदूहै मुँह निचकर देखा और कहा, “बाबाकी बायोंपर आप एतबार मत कीजिये। पिताजीके पास हजार रुपये कहा हैं जो हैरो ! चिट्ठी लख दूखीके मरने मीमनी मोंमकर बीबीकी छाडी की थी,—बाब वे लोग भीबीका नहीं मुगते। करते हैं कि हम लड़कीकी दूखी खारी करेंगे।”

इस लड़कीने इतनी बातें मुससे पहले नहीं कही थीं। कुछ खचित होकर पूछा, “तुम्हारे पिताजी बाबाँ हजार रुपये नहीं दे सकते !”

पूँदूहै फिर दिखकर कहा, “कभी नहीं। पिताजीको रेकमें सिर्फ बाबीस रुपये मिलते हैं। सूर्यकी भीमबी बहरते ही मेरे छोटे माईकी पदार्थ पन्द हो गए। वह फिटना रोवा है !” करते-करते उगकी दोनों ओरों लखलख आहँ।

हर बनेक कड़ोंसे संवित किया हुआ धन है होगे ! तनकौपनमें कुछ कह दिया तो क्या उसका यह मतलब है कि राधा कर्ष बनना ही पड़ेगा ? न धन बर्होफी इस कड़कीने बिना मोंगे ही ट्रेनमें पेड़े और रही लिखाकर मुते तो लम्भ कन्हेमें चँसा ! एक कन्हे को फाटते हुए एक बूली कन्हेमें कँस गया । कन्हेका उपाव सोचते ही बिभाष गर्म हो गया और उस निरीह कड़कीके प्रति प्रेम और विरक्तिकी सीमा न रही । और वह घैठान बाधा ! मनाने लगा कि जब वह पर न पहुँच सके, रास्तेमें ही सबी-गमीसे भर जाय । पर वह भाव्य भित्ति हीन है । कन्ही तरह जानता है कि वह बावमी किसी तरह मी नहीं मरेगा और जब ठते मेरे यकानका पता एक बार पक गया है तो फिर आवेगा, तथा चाहे जैसे मी हो, अपने बसूह करेगा । हो सकता है कि इस बार उन्हीं हाकिम फुस्य महाशयको मी खाय जाये । एक ही उपाय है—वा क्यवति व बीवति ! टिकट खरीदने क्या पर कहालमें स्थानामाव,—तब टिकट पहलेसे ही विक गये हैं । अतः बूली मेझका हस्तगार करना होगा और उसमें अभी कह-छात दिनकी देर है ।

एक उपाय और है, कि मकान बदल दिया जाय, बाबाको खोजनेपर मी न मिळे । पर इतनी अच्छी जगह इतनी अच्छी कहीं मिलेगी ? किन्तु सिफारिहोंके हाथों प्राय बचानेके सम्बन्धमें झकट देली माझुक हो गई है कि अच्छे-बुरेका फल ही गौण है,—बचारण तथा पदम् ।

हर है कि मेरा गुप्त उद्देश कहीं रतनकी मकानमें न आ जाय । पर मुश्किल तो यह है कि वह यहाँसे टक्का ही नहीं चाहता । कपलीकी अपेक्षा ठले कककचा ज्वाला फसन्द आ गया है । पूछ, “बिड़ीका ज्वाव लेकर क्या तुम कक ही ज्वावा चाहते हो रतन ?”

रतनने धीरे ही जबाब दिया, “जी नहीं । आज शोपरहको मी योंको एक पोस्टरबोर्ड बाक दिया है कि बीटनेमें मुझे चार-पाँच दिनकी देर होगी । पूरा सोलाबड़ी (= अन्धायन) और बीवित सोलाबड़ी (= बिड़ियालाना) दिन ऐसे नहीं व्यर्थग । अब फिर कब आया हो, इतका तो कीर् ठिकाना महीं ।’

मिने कहा, “पर वे तो बहिन हो सकती हैं ।

“जी नहीं । बिल दिया है कि गझीमें ज्यो हुए बचकोंकी बचान अभीतरक दूर मरी दूर है ।”

“पर बिट्टीका बचाव—”

“जी, दीजिये न। कुछ ही रबिट्टीसे मेज दूँगा। उस मकानमें मौकी बिट्टी लोडनेका साहस बम भी नहीं करेगा।”

पुनःपुनः पैदा रहा। नार्स-बेडेके सामने एक भी तरकीब नहीं बची। उस प्रस्तावको रद्द कर दिया।

आते बचत बाधा बपोंकी बातका प्रचार कर गये थे। परन्तु कोई इस बातका भय न कर ले कि उन्होंने हृदयकी उदारता या अधिक उदारताके कारण ऐसा किया हो। वे तो ऐसा करके गवाह बना गये हैं।

रतनने ठीक इसी बातका अन्वय किया। कहा, “बाबू, अगर आप नाराज न हों तो एक बात कहूँ।”

“क्या बात रतन।”

रतनने कुछ संकोचके साथ कहा, “डार् हम्बर रुपये तो कम रकम नहीं है बाबू, वे कौन होते हैं जिनकी छारीके लिए आपने इतना रुपया त्यागकर देनेको कहा है। इसके अन्वय वह बड़ा बाधा हो या और कोई, लेकिन अच्छा आदमी नहीं है। उसे देने करना अच्छा नहीं हुआ बाबू।”

उसका मन्त्रण सुनकर जेठे अतिशयनीर आनन्द मिठा बैठे ही मनको और भी मिठा और परी में चाहता था। तथापि, अपनी आवाजमें किंचित् रुन्देका आत्मसंकेत देकर बोला, “कहना ठीक नहीं हुआ—क्यों रतन।”

रतन बोला, “हाँ बाबू, निश्चय ठीक नहीं हुआ। रुपये भी तो कम नहीं हैं, और फिर किसी—कहिये तो।”

“ठीक तो है।” जेठे बोला, “तो नहीं होंगे।”

आमपने घोड़ी देतक देगनेके बाद रतनन कहा, “बह छोड़गा क्यों।”

जेठे बोला, “नहीं छोड़गा तो क्या करेगा। डिगजर ला दिया ही नहीं है और फिर, परी कौन जानता है कि उस बच में परी रहूँगा या बसा बसा आऊँगा।”

रतन धनमर भुग्न रहकर हँस। बोला, “बाबू, आप बुरोंको परवान नहीं लगे। उस आदमीको धर्म और धन अमान्य दृष्टि नहीं गया है। ये-बोकर, और मोंगकर या हय-भमकाकर वह रुपये किसी-न-किसी तरह सेग्य ही। अगर परी आपसे मुनाफा न होगी तो बड़कीको साथ लेकर वह काशी आकर

घोर मौसे सन्ना बसू करके छोड़ेगा। मौको बहुत धर्म आवेगी बाबू, यह तरीका ठीक नहीं है।”

यह सुनकर निस्तब्ध हो बैठा रहा। रत्न मुससे बहुत ब्यापार बुझिमान है। अर्धदीन आकस्मिक कदवाकी हठका कुर्माना मुसे देना ही पड़ेगा, कोई निस्तार नहीं।

रत्नने मौके काकाको पहचाननेमें शक्यती नहीं थी, यह उस समझमें ब्यापार जब कि चौथे दिन से फिर कोटकर आवे। आशा थी कि इस बार हाकिम फूला मी उनके साथ ब्यापार आवेगा,—पर हाजिर हुए से लड़ेसे ही। बोले, “बेया दस पाँचोंमें जम्मा जम्मा हो रहा है। उस करते हैं कि कश्मिरीयोंमें ऐसा कमी नहीं गुना। गरीब ब्यापारकी कदवाका ऐसा ठगार कमी किसीने नहीं देखा। कश्मीरियाँ देता हैं कि तुम फिरकीकी होओ।”

पूछा “आधी कब है।”

“हसी महीनेकी पच्चीस तारीख ठीक हुई है, बीसमें दस दिन बाकी हैं। कब ‘देखना’ पड़का हो जायगा आधीबाद,—करीब तीन बजेके बाद मुहूर्त नहीं है इसके भीतर ही उस शुभ कार्य पूरे कर देने होंगे। पर बिना तुम्हारे पये उस बन्द रहेगा कुछ मी नहीं हो लड़ेगा। यह जो अपनी पूँछको बिछी, उसने अपने हाथसे बिलकर मेरी है। पर यह मी कहे देता है बेया कि मित्र रत्नको तुम्हने अपनी इच्छासे दो दिया, उतका ब्येव नहीं है।” यह कहकर उन्होंने एक पीछे रमका मुझा हुआ कागजका टुकड़ा मेरे हाथोंमें दे दिया।

कुहूहबबब बिछी फड़ेकी कोसिछ की। बाबाने अचानक हीर्ष निभास छोड़कर कहा “काबिराज बपयेवाक है तो क्या हुआ, निजकुल नीच है—बद्वार। उसके किए औलही धर्म मामकी कोई बीब ही नहीं। कब ही बपवा पैरा लभ मकर बुझाना होगा,—यहने बीरह अपने गुन्यारते बनवानेगा। वह किसीका बिबाध नहीं करता यहाँतक कि मैरा मी महीं।”

उस आदमीमें बड़ी लराही है। बाबातकका बिबाध यहाँ करण्य।—ब्यापार।

दूढ़ने अपने हाथसे पत्र लिखा है। एक-दो पेज नहीं, बल्कि उलाठल मरे हुए चार पेज। चारों पेजोंमें कातरकाके व्यव विनती है। ट्रेनमें रौंगा बीहीने कहा था कि आजकलके माइक-ऑपिक मी हार मान कें। देखक आजकलके

ही नहीं, सबकाबके नाटक-नौबत हार मान लेंगे,—यह बालीबार नहीं करेंगा। इस बातका विश्वास हो गया कि इस मिलनेके प्रभावसे ही नम्बरानीका पति पीछे जिनकी पुछी लेकर वातबे दिन ही आकर हाजिर हो गया था।

अतएव, दूसरे दिन सुबह में भी कुछ दिया और बाबाने इसकी बाँध कुछ अपनी ओरसे कर ली कि मैंने किये सबकुछ हो अपने साथ ले गिये हैं, कोई प्रशंसा तो नहीं कर रहा हूँ। बोले—

“रक्षा ब्रह्मा देखकर, क्या सेवा डोककर। मेरे मार, हम देखता तो है नहीं, ब्याहमी है,—भूक होते क्या रेर बगती है।”

लोक तो है। शान कल एतन्ने हो काशी बसा गया है। उसके हाथों जिह्वा बचाव भेज दिया है। कित्त दिया है—सपासु। क्या इस बजारसे न दे सका कि कोई लोक नहीं है। इस तुरिके लिए अपने गुणसे समा करनेकी भी प्रार्थना कर दी है।

यथासमय गौब पहुँचा, मकानके सब आरामियोंकी बुस्थिता दूर हुई। ओ भादर और सम्मान भिना, उठे बतानेके लिए काशमें घण्ट मरी है।

सम्मान पत्र करने और बाकीबार देनेके उपदेशमें बाबियास बाबूते परी लप हुआ। वह जैसे सुने मित्राबके हैं वैसे ही बगमी भी। सबको वह समझ करनेके अन्वाबा कि वे बहुत रुपयेबाके हैं, ऐसा नहीं मादूम पड़ा कि संसारमें और कोई दूतव कतन उनका है। तारा धन गुरु उन्हीका कम्पया हुआ है। वह धमरते कहा, “कन्नाब, क्रिमताको मैं नहीं समझता, सो कुछ करंग्य वह सब बाले धानुपमते। देखी-देखताओंके अनुपहकी मिष्टा भी मैं नहीं मौमया। मैं करता हूँ कि देखताकी दुहाई कापुका दिते हैं।”

बड़े आदमी और छोटे-मोटे तास्तुदेवार होनेके कारण उनके यहाँ गौबके प्रायः सब आदमी उग्रमित्त थे और तापद अजिबोंथके थे महाजन थे और बहुत बड़े महाजन —अतएव करने ही एक स्वरसे उनको बातें मान लीं। तर्कजन महाजनने एक संरहका एक मुताया और आल-वासने उनके समर-बमें हा-एक पुरानी कहानिरीका भी प्रभाव हुआ।

उन्होंने एक अदीनित और साधारण व्यक्ति समझकर मेरी और सम्मान पूर्व दर्शने देता। उन बल बरोंके पुग्गसे मेरा हृदय जल रहा था। वह हरि मुस करने नहीं हुई। मैं प्रकाएक बोल डरा, “यह तो नहीं जानता कि किन

परिमाणमें आपमें बाहुबल है, पर यह मैं स्वीकार करता हूँ कि अपने कमानेका शक्तिशाली लड़ाकू है, आपका बाहुबल प्रबल है।”

“इतके मानी !”

मैंने कहा, “मानी कुछ मैं। न तो बरफो पहचानता हूँ और न कम्बाफो, फिर भी अपने मेरे लक्ष हो रहे हैं और आपके समूहमें पहुँच रहे हैं। इसे तकरीर नहीं कहते तो और क्या कहते हैं। आपने अभी कहा कि आप दैवी-देवताओंका अनुग्रह नहीं छेते, लेकिन आपके कड़कई हाथकी जँगलीसे छेकर बाहुके गलेका हारलक मेरे अनुग्रहके खानसे बनेगा। हाँ उम्मा है कि बहु-भाषकी बाकत-तककी हस्तक्षेम मुझे ही करना पड़े।”

कमरमें बज्रपात होनेपर भी शायद लक्ष भोग करने व्याकुल और विचलित न होते। बाबावे न जाने क्या कहनेकी कोशिश की, पर कुछ भी सुलझ ना सुलझ न हो सका। शेषमें काश्मिरास बाबूने भीषण मूर्ति धारण कर कहा, “आप अपने दे रहे हैं, वह कैसे मायम हो। और दे ही क्यों रहे हैं।”

कहा, “क्यों दे रहा हूँ वह आप नहीं समझ सकते, आपके समझाना भी नहीं चाहता। पर सात गॉव तुन चुका है कि मैं अपने दे रहा हूँ, सिर्फ आपने ही नहीं सुना। कड़कईकी मोने आपके धरे परबाओंके हाथ-पैर छोड़े, पर आप अपने बी ए० पास कड़कईका मूल्य बार्ड हथारले एक पैसा भी कम करनेको राखी नहीं हुए। कड़कईका आप चाखीत अपने महीनेकी नौकरी करता है, चाखीत पैते देनेकी भी उल्लेख नहीं, —तब आपने यह नहीं सोचा कि आपके कड़कईको एनीहनेके क्रिय अमानक उल्लेख पास इतना सस्ता करते आ गया। कुछ भी हो, कड़के देवनेके अपने बहुत भोग लेते हैं, आप भी मैं तो इतमें गुहार नहीं। पर इसके बाद पौषवाओंको अपने मकानमें बुलाकर अपनीका घमंड और न काश्मियेगा। और यह भी पाह रहियेगा कि आपने एक बाहरके व्यवस्थीके मित्र-खानसे कड़कईकी शादी की है।”

उठेय और डरते लकका मुँह काया हो गया। शायद लकने यह सोचा कि अब कुछ भयंकर घटना होगी और काश्मिरास बाबू धाटक बन्द करवाकर आठि चौंठे पीठे बिना किसीको भी करते बापस न जाने दिये। पर, थोड़ी देरक तुन पैते एनेके बाद उन्होंने मुँह ऊपर उठाकर, “मैं अपने नहीं लूँगा।”

मैंने कहा, “इतके मानी वह कि आप कड़कईकी शादी नहीं नहीं करेंगे।”

काकियास बाबूने सिर दिखाकर कहा, “नहीं, यह नहीं। मैंने बचन दिया है कि धारो करूँगा,—इसमें जरा भी फर्क न होगा। काकियास मुलर्जी करी दुर वालके लिख्यक काम नहीं करता। आपका नाम क्या है?”

बाबाने धमकटते सिर परिचय दिया। काकियास बाबूने पहचानकर कहा, “ओ!—ठीक है। इनके बापके साथ एक बार मेरा बहुत जबरदस्त पीक्यारी मामला चला था।”

बाबाने कहा, “ओ हाँ, आप कुछ भी नहीं भूलते। वे उन्हींके लड़के हैं और रिस्तेमें मेरे नाती होते हैं।”

काकियास बाबूने प्रथम कटते कहा, “ठीक है। मरा बड़ा लड़का अगर लिखा रहा तो हज्जा ही बड़ा होता। शम्बरकी शादीमें आना, बेदा। हमारी ओरसे उस दिन तुम्हारा निमन्त्रण रहा।”

शम्बर उपस्थित था। उसने एक बार कुछ नेशोंसे मेरी ओर देख और पौरुष ही मुँह मीचा कर दिया।

मैंने उठकर प्रणाम किया। कहा, “आहे जहाँ भी रहूँ, लेकिन कसते कम बहू भातके दिन आकर नबबूके हाथका अन्न खा आऊँगा। पर मैंने बहुत-सी अधिप बातें करी हैं, आप मुझ सम्य करेंगे।”

काकियास बाबू बोले, “यह सब है कि अधिप बातें करी हैं, पर मैंने क्या भी कर दिया है। अभी आनेका काम नहीं भीकान्त छुम कार्यके उपकल्पमें मैंने थोड़ा-सा एनेका भी आयोजन किया है। तुम्हें खाकर आना होगा।”

“जैसा करिगी वही होगा”, कहकर फिर बैठ गया।

उस दिन पाचको आशीर्वाद देनेसे लेकर उपस्थित अम्पागलोंके एने-बीने तकके बारे काम निर्दिष्ट मुकम्मल हो गये। इस अम्पायके प्रारम्भमें सतुपदेशके बारेमें बिज नियमका उल्लेख किया था, उसके अतिरिक्तका एक उदाहरण ईदुदा बिबाह है। संसारमें विर्ग मही एक उदाहरण अस्सी अर्न्तोसे बना है। कारण, नि सगर्दीय, अपरिचित, अम्पागी लड़कीके बापका जान पेटते ही जहाँ रुपये बहुत होते हैं, जहाँ पैण्डर बनकर हाथ जोड़नेपर बापके प्रासते निस्तार नहीं मिश्रता। निष्ठुर, निर्दय हागादि शाही-गलीज करके समाज और लकड़ीरको रिग्राप्नेस डिचिन् होम मिट सकता है, पर प्रतिकार नहीं होता क्योंकि दूस्तेके बापके हाथमें प्रतिकार मही है, वह तो लड़कीके बापके हाथमें ही है।

गौहरकी खोबमें आनेपर नवीनसे मुखाकाश हुई। वह मुझे देखकर खूब हुआ। लेकिन ठठका मित्राव यदुत क्या था। बोला, “जाकर बैष्णविनीके आश्रममें देखिये ककब तो घर ही नहीं आये है।”

“वह क्या माजरा है नवीन ! वह बैष्णवी कहाँसे आ गई !”

“एक बैष्णवी नहीं, पूराका पूरा एक बक आ हुआ है।”

“वे कहाँ रहती है।”

“वहीं मुण्डीपुरके अस्तावेमें।” कहकर नवीनने एक निश्चल छोड़ा, फिर कहा, “राज बाबू जब न तो वे राम हैं और न वह अशोषा। बड़े मधुरदास बाबाजीके मरते ही उनकी जगह एक छोकरा बैरागी आ गया है, उसके कोई पार पन्ना लेना-दाती है। शारिकादास बैरागीते हमारे बाबूकी बड़ी मित्रता है—वही तो माना रहते हैं।”

व्यक्ति होकर पूछा, “पर तुम्हारे बाबू तो सुलभमान हैं। बैष्णव-बैरागी अपने आश्रममें उन्हें रहने कैसे देंगे।”

नवीनने नायब होकर कहा, “इन सब बातोंका सम्बन्धित्वोंकी क्या बर्माबर्मा का ज्ञान है। वे व्यक्ति-कर्म कुछ भी नहीं मानते। जो भी कोई उन्हें मित्रता है, वे उसे ही अपने इकमें खींच लेते हैं, लोच-निवार कुछ नहीं करते।”

पूछा, “पर उस बार जब मैं तुम्हारे वहाँ छह-सात दिन था, तब तो घौहरने उनके बारेमें कुछ नहीं कहा।”

नवीन बोला “कहते तो कमलध्वजाके गुण-अवगुण बारिद नहीं हो जाते ! किन्तु उन कई दिनों ही बाबू अस्तावेके पास नहीं गये। पर बैठे ही व्यप मये बैठे ही काफी और कब्रम भिन्ने बाबू अस्तावेमें आ चमके।”

प्रश्न करनेपर मासूम हुआ कि शारिका वाकल गाना गाने और रोहे बनानेमें विद्वत्ता है। गौहर इस प्रसीमनमें पँत गया। उसकी कविता सुनाय है, उन्से अपनी गणितियोंका सद्योचन कर लेता है और कमलध्वजा एक मुकती बैष्णवी है—उसी आश्रममें रहती है। वह देखनेमें अच्छी है, गाना अच्छा गाती है। उसकी बातें सुनकर लोग मुग्ध हो जाते हैं। कभी-कभी बैष्णवीकी सेवाके लिए गौहर रुपये-पैसे भी देता है। अस्तावेकी पुरानी बीमार बीम

रोकर गिर गई थी, गौरने अपने कर्त्तव्य उसकी मरम्मत कर दी है। पर काम उसने उस सम्प्रदायके लोगोंके अगोचर चुपचाप ही किया है।”

मुझे याद आया कि बचपनमें इस अन्नाइके बारेमें कौन सी थी। पुराने कमानेमें महामुखी एक भक्त शिष्यने इस अन्नाइकी प्रतिष्ठा की थी। तबसे शिष्य-परम्पराके अनुसार वैष्णव इसमें बाध करते आ रहे हैं। अत्यन्त कुतूहल पैदा हुआ। कहा, “नवीन, मुझे एक बार अन्नाइ दिखा सकोगे?”

नवीनने सिर हिलाकर इनकार किया। बोध, “मुझे बहुत काम है और आप तो इसी देखके आरमी हैं, खुद ही न सीख सकेंगे? आप कोससे ज्यादा दूर नहीं, इस सामनेके रास्तेसे उत्तरकी ओर सीधे जानेपर ही आपको दिखाई दे जयगा, किसीसे पूछना नहीं पड़ेगा। सामनेवाले ताकतके नीचे बुद्धावन-झीझ हो रही होगी। दूरसे ही जानोंमें आवाज पहुंच आयगी,— ईदना नहीं पड़ेगा।”

मैंने जानेका प्रस्ताव नवीनने शुरू ही पसन्द नहीं किया। मैंने पूछा, “कहाँ क्या होता है,—कीतन?”

नवीनने कहा, “हाँ, दिन-रात सैजही और करताकको घेन नहीं मिलती।”

मैंने हँसकर कहा, “यह तो अच्छा ही है नवीन। अच्छे, गौरको पकड़ अच्छे।”

इस बार नवीन भी हँसा, बोध, “हाँ, आरप। पर देखियेगा कि वहाँ कमलकाका कीर्तन सुनकर कहीं आप खुद ही न अटक जायें।”

“हेतू, क्या होता है।” कहकर ईश्वर हुआ हुआ सीधे पहर कमलकाका वैष्णवीके अंगानेमें जानेके लिए चल दिया।

अन्नाइका पत्ता अब बना तब घायल घाम हो चुकी थी। दूरसे कीर्तन या भँकरी करताककी ध्वनि तो सुनाई नहीं दी, पर मुझसे नवीन बहुतका कुछ घेरन ही मकर आ गया, जिसके नीचे टूटी हुई बेदी है। पर एक भी व्यक्ति दिखाई नहीं दिया। एक शीतल पवड़ी रेशा देदी-मेदी होकर परकोरेके किनारे किनारे नदीकी ओर बह गई है। अनुमान किया कि उधर घायल किसीसे कुछ लहर मिले, अतएव उधर ही पैर बढ़ाये। गलती नहीं की। शीतल-सूक्ष्म रोनाल्ले टकी हुई नदीके किनारे एक पवित्र और गोबरसे पुती हुई कुछ ठण्ड भूमि पर गोबर और दूधरे एक व्यक्ति बैठे हैं।—अन्नाइ लगाया कि ये ही वैरागी धारिकाधर हैं,—अन्नाइके वर्तमान अधिकारी। मन्त्रीका किनारा होनेकी वजहसे

वहाँ उस कठकट सन्धाका अन्वहार बना नहीं हुआ था, बाबाजीको बहुत अच्छी तरहसे देल सका। रेलनेमें वह आदमी भद्र और ऊँची व्यक्ति ही जान पड़ा। वर्ष स्वाम, दुष्कर्म-पतन होनेके कारण कुछ अन्धा मार्गमें होता है, माथेके शक अन्धाकी तरह सामनेकी ओर नैवे हुए हैं, मूँछ-खाड़ी बारा नहीं है,—बोझी है। आँखोंमें और मूँछपर एक स्वाभाविक हीलाका भाव है। उम्रका ठीक अन्धत्व नहीं लगा सका, तो भी दैवी-कृपासे स्वाद्य नहीं जान पड़ी। दोनोंमें किसीने भी मेरे आगमन और उपस्थितिपर उत्पन्न नहीं किया दोनों ही नदीके उस पार पश्चिम दिशात्ममें आँखें मझाये स्वप्न बने रहे। वहाँ नाना रंग और नाना प्रकारके मेथोंके टुकड़ोंके बीच लुत्तीवाक्य क्षीय पाँचुरम बन्धमा बयक रहा है, मानो उसके कण्ठके बीचमें अस्तुमन्त्र काग्य ताप उचित हो रहा है। बहुत नीचे दित्वाई बैठे हैं दूर प्रयोंके नीचे पेड़-पौधे,—मानो इनका कहीं अन्त नहीं, लीमा नहीं। कावे, लन्दे, पीछे—नाना रम्यके दूरे-फ़ारे बादलोंपर उस बल भी अस्तंगत सुर्खी शेष हीति लेख रही थी,—ठीक जैसे ही जैसे कि किसी दूर कदकेके हाथमें रम्यकी लुकिका पड़ जानेसे लक्ष्मीका पूरा भाव हो रहा हो। वह आनन्द उपमर ही रहा,—क्योंकि इतनेमें ही विचकारने आकर कान मल दिने और हाथसे लुकिका छिन भी।

उस स्वप्नस्थाना नदीका बोझ-सा दित्वा शायद मोंबसाजीने साफ कर दिया है। सामनेके उस स्वप्न कावे और बोझे पानीपर झेटी-झेटी रत्नाम्रम अन्धत्व और काग्य तारेका प्रकाश पात-पात ही पड़कर सिद्धमिन्न रहा है,—मानो तुनार कलौड़ीपर सोना फिफकर राम लौब रहा हो। बात ही कही मनमें सेकड़ों बन्ध-मल्लिकाईं लिखी हैं और मानो उनकी गम्भते लारी रामु मारी हो उठी है। निकटके ही किसी पेड़के अर्धमन्त्र विड़ियोंके झोंक्योंसे उनके बन्धोंकी एक-छी ली-ली विनिम मधुरतासे कानोंमें अविद्यम आ रही है। वह लप ठीक है, और लल्ल-विन्न जो जो आदमी अङ्क-मण्डकी तरह बैठ हुए हैं, इसमें लन्देद महीं, वे भी कवि हैं। पर धामके बल इस अंगणमें मैं बर लप रेलने महीं आया हूँ। नवीनने कहा था कि वैष्णवियोंका एक बन्धका दक वहाँ है और उनमें कमलकण्ठा वैष्णवी लपते भेद है। वे क्यों हैं! पुष्परा, “धीर!”

प्यान भंग कर गौहर हस्तुदिकी तरङ्ग मेरी ओर ताकता रह गया ।

बाबाजीने उसे बच दिखकर कहा, “गुहार, ये ही तुम्हारे भोकाभूत हैं न ?”

गौहरने तेन्हीसे ठठकर मुझे बड़े भारते बाहुपाछमें ब्याबद्ध कर किया, इस तरङ्ग कि जैसे ठठका वह आयेगा रुकना ही नहीं चाहता हो । किसी तरङ्ग में अपनेको मुछ कर बैठ गया । बोका, “गुहारजीने मुझे एकाएक कैसे पहचान लिया ?”

बाबाजीने हाथ दिखावा, “वह नहीं होगा गुहार, इसमेंसे आबर-बाबक ‘की’ बाद देना होगा । तब ही तो रस आयेगा ।”

मैंने कहा, “अच्छा, बाद दे दिया । लेकिन एकाएक मुझे कैसे पहचाना ?”

बाबाजीने कहा, “एकाएक कैसे पहचानूँगा ? तुम तो हृन्दावनके हमारे पहचाने हुए हो गुहार, और तुम्हारी दोनों आँखें तो रसकी समुद्र हैं जो देखते ही आँखोंमें भर जाती हैं । जिस दिन कमलकटा आर थी, उसकी दोनों आँखें भी ऐसी ही थीं,—उसे देखते ही पहचान गया और बोक उठा, ‘कमलकटा, कमलकटा, इतने दिनों कहाँ थी ?’ कमल भाकर जो अम्नी हो गई तो उसका आदि-अन्त, बिछ-बिछेद नहीं रहा । बही तो सापना है गुहार, इसीको तो करता हूँ रसकी दोसा ।”

मैंने कहा, “कमलकटा देखने ही तो आया हूँ गुहार, वह कहाँ है ?”

बाबाजी बहुत लुप लुप । बोले, “उसे देखोगे ? पर गुहार तुम उससे अत्यधिक मरी हो, हृन्दावनमें उसे अनेक बार देखा है । छायद भूल गये हो, पर देखते ही पहचान आओगे कि वह कमलकटा है । गुहार, उसे एक बार पुकारो म ।” कहकर बाबाजीने गौहरको पुकारनेका इरादा किया । इनके निकट तब ‘गुहार’ हैं । बोले, “कहो कि भोकाभूत तुम्हें देखने आया है ।”

गौहरके पले आनेके बाद पूछा, “गुहार, मेरे बारेमें थोड़ी बातें छायद गौहरने तुम्हें बताए हैं ?”

बाबाजीने तिर दिखकर कहा, “हाँ, तब बताया है । जब ठठते पूछा कि ‘गुहार, तुम छह सप्त दिन क्यों नहीं आये ?’ तो उसने कहा कि भोकाभूत आये थे ।’ वह भी उसने कहा कि ‘तुम तिर अम्नी ही आओगे ।’ वह भी माटम हुआ कि तुम क्यों आनेवाले हो ।”

धुनकर समुद्रको तौंस छोड़कर मन-ही-मन मैंने कहा, रखा हूँ । वर

कि बाबाबमें किसी अलौकिक व्यापारिक शक्ति-बलके कारण तो ये मुझे देखते ही मही पहचान गये हैं। कुछ भी हो, यह मानना ही पड़ेगा कि मेरे बारेमें इतने क्षेत्रमें उनका अन्वेषण गलत नहीं है।

बाबाजी अच्छे ही बान पड़े। कमसे कम जसाबु प्रकृतिके मही मास्स हुए। बहुत सरल। यह बाबाजीने सरलतासे स्वीकार कर लिया कि न जाने क्यों मोहरने मेरी छब बाटे,—अर्थात् जिसना वह जानता है इन लोगोंसे वह ही है। कवित्त और वैष्णव-रस-बर्णोंमें वे कुछ-कुछ उनकी-से,—कुछ निम्नान्ते मास्स हुए।

मोही देर बाद ही मोहर-गुहारके साथ कमलज्वाला जाकर हाजिर हुई। उम्र छीन्ने जगदा नहीं होगी,—स्वामयर्ण, इक्ष्वाक्य बदन, हाथमें कुछ चूड़ियाँ हैं पीतलकी,—सोनेकी भी हो सकती हैं। बाक छोटे-छोटे नहीं हैं, गिरा देखर पीठपर हल रहे हैं। गलेमें तुलसीकी माख और हाथकी जेबोंके भीतर भी तुलसीकी बसमाका है। छापे-छापेका बहुत जगदा माडम्बर नहीं है अपन तुलसीके बल तो था, पर इत बल कुछ मिट गया है। उसके मुखकी ओर देखकर मैं अत्यन्त आश्चर्यचकित हो गया। छविस्वरूप वह जगदा होने क्या कि इन अस्तित्व और केहेका भाव तो जैसे परिचित है, और बल्लेका रंग भी जैसे पहले कही देखा है।

वैष्णवीने बात शुरू की। पोजन ही समझ गया कि वह नीचेके स्तरकी प्राणी नहीं है। उसने किसी तरहकी भूमिका मही बोली। मेरी ओर सीधे देखकर कहा “कहो गुहारदे, पहचान सकते हो ?”

मैंने कहा, “नहीं। लेकिन ऐसा क्या है कि जैसे कही देला है।”

वैष्णवीने कहा, “जुम्हाबनमें देला था। बड़े गुहारदेकीसे नहीं मुना ?”

मैंने कहा, “तो मुना है। पर मैं तो कम-अर कभी जुम्हाबन नहीं गया।”

वैष्णवीने कहा “गले कैसे नहीं ? बहुत पुरानी बात है, इतिम्य जगदानक बाद मही आ रही है। वही गायें बगले बल सोडकर आते, बन-पुष्पोंकी माख रूबकर हमारे गलेमें पहनाते—सब मूक गले।” वह कहकर वह हाथोंको हवाकर बोरे-बोरे हिलन करी।

मैंने यह तो समझा कि मजाक कर रही है। पर वह सीक मही कर सका कि मिया या बड़े गुहारदेकी, बोली, “यत हो रही है, बर बंगलमें कही देते

रा ! मीतर बाओ !”

मैने कहा, “जंगलके रास्ते हमें बहुत दूर जाना होगा । कब फिर आवेंगे ।”

बैजवीने पूछा, “यहाँका पत्ता किसने बताया ? नबीनने ?”

“हाँ ठीकीने ।”

“कमलम्बाकी बात महीं बताई ?”

“हाँ, बताई थी ।”

हम चारोंमें तुम्हें सावधान महीं किया कि बैजवीका बक तोड़कर अचानक बाहर महीं जाया था सफ़ता ।”

हँसते हुए बोला, “हाँ, यह भी कहा है ।”

बैजवी हँस पड़ी । बोली, “नबीन होधियार मोंसी है । उसकी बातें न मानकर अच्छा नहीं किया ।”

“क्यों अच्छा ?”

बैजवीने इसका जवाब नहीं दिया । गौरको दिखाते हुए कहा, “गुलारने कहा था कि नौकरी करनेके लिए विदेश जा रहे हो । पर तुम्हारे तो कोई नहीं है, फिर नौकरी क्यों करोगे ?”

“तब क्या करें ?”

“हम जो करती हैं । योकिम्बजीका प्रगार तो कोई छीन नहीं सकता ।”

“यह जानता हूँ । पर बैरागीगीरी मेरे लिए नई नहीं है ।”

बैजवीने हँसकर कहा, “सम्झती हूँ । घायब प्रकृति रहन नहीं करती ।”

“नहीं, बरादा दिन खान नहीं करती ।”

बैजवी रोठ बचाकर हँसी । बोली, “तुम्हारा काम अच्छा है । मीतर बाओ उन लोगोंने तुम्हारा परिचय करा दूँ । यहाँ कमलोंका वन है ।”

“सुना है, पर अभीमें ओठोंने देते हैं ।”

बैजवी फिर हँसी, बोली, “अँधेरेमें हम ओटने ही क्यों देंगी ? अंधकार दूर तो हाँगा ही । तब जाना । बाओ ।”

“चला ।”

बैजवीने कहा, “गौर । गौर ।”

“गौर गौर” कहते हुए मैंने भी अनुसरण किया ।

• गौर का प्रकट नहीं गौरव-महापुरुष या वैष्णवेश्वर है ।

हाथों कि धर्मोपकरणों में भी रुचि और विश्वास नहीं है, किन्तु बिना किसी विचार के उनको बाबा नहीं पहुँचाता। मनमें बिना लक्ष्यके ध्यानता है कि मैं इस गुस्तर विषयका धीरे-धीरे कमी न लोभ पाऊँगा। तथापि, धार्मिकोंकी मैं मति करता हूँ। विष्णुवात स्वामीजी और सुकृष्ण लक्ष्मी,—किसीको भी धर्म नहीं करता, दोनोंकी ही बाबी मेरे कानोंमें समान भवती बर्पा करती है।

विद्यार्थियोंके मुँहसे सुना है कि बंगालकी आध्यात्मिक लाजनाका निम्न रास्ते देखावत समझावमें ही सुगुप्त है, और वही बंगालकी साहित्य अपनी नीति है। इसके पहले संन्यासी और साधुओंकी बोझी-बहुत लयत की है। एक-आयका विवरण बाहिर करनेकी इच्छा नहीं है। पर इस दृष्ट अन्तर हैवात् साहित्य नीति नसीब होती हो तो संकल्प किया कि इस मोड़की धर्म मही जाने हूँगा। ईदके बहु-मठके निम्नत्वमें मुझे जाना ही होगा। कमसे कम कलकत्तेके निम्नता सेलके बरखे मैं कई दिन अन्तर इस वेल्थकी-महादेके आल-पात करीं काटने पर तो और पादे लो हो, जीवनके संकर्ममें विशेष मुकसान न होगा।

अन्तर आन्तर हैला कि कमकलकत्ताका करना छड़ नहीं था। वहाँ बाकर कमलका ही बन है, पर रुचित-विचलित। भक्त हाथिरीसे लक्ष्य लो नहीं हुआ पर उनके बहुत-से फलविद् विद्यमान थे। नाना लक्ष और लक्ष-लक्षके चेहरोंकी वैचलिकों नाना कामोंमें लगी हुई हैं। कोई कटू बना रही है, कोई मैथ गूँथ रही है, कोई एक-मुँह लपट रही हैं,—यह सब ठाकुरजीके लक्षके भोमकी पैदा रियों हैं। एक अनेकालत छोटी लक्षकी वैचलिकी आनमन हो पूछोंकी माया गूँथ रही है और एक लक्षके निम्न देती हुई नाना रंगके लगे हुए छोटे-छोटे कपड़ोंके टुकड़े लक्षकीनीसे कुपित करके लंगते रख रही है। सम्भवतः भीमोकिन्द भी कल लक्षनके बाद उन्हें पहनेंगे। कोई भी लक्षी नहीं है। उनका काममें आग्रह और एकाग्रता देलकर आग्रह होता है। लक्षने भी और लक्ष पर निम्न-मात्रके लिये। कुलकका अन्तर नहीं है। लक्षके हीन हिल रहे हैं, बापर मन-ही-मन लप हो रहा है। इधर समय लक्ष हो गया है। एक-एक करके दिने लक्षने लक्ष हो गये हैं। कमकलकत्तामे कहा, 'लक्षो, मण्डान्को नमस्कार कर लये। किन्तु, लक्ष, वह तो लक्षो कि तुम्हें क्या कहकर पुकारें। 'नये गुलारी' कहकर पुकारें तो क्या ?'

मैंने कहा, “क्यों नहीं पुकारती ? तुम्हारे यहाँ जब गौहर एक ‘गौहर गुहार’ हो गया है, तब मैं तो कमसे कम आराधनका ढङ्गका हूँ। पर मेरे अपने नामने क्या गुहार की है ? उसीके साथ ‘गुहार’ जोड़ दो न।”

कमलज्याने होंठ बहाकर हँसते हुए कहा, “यह नहीं होग्य ठाकुर, नहीं होगा। यह नाम मैं नहीं ले सकती,—अन्याय होता है। आओ !”

“आता हूँ, पर अन्याय किसका ?”

“हितम् — यह मुनकर तुम क्या करोगे तुम तो खूब हो ?”

जो बेगमबी माका सौंप रखी थी वह हँस पड़ी और उसने मुँह नीचा कर दिया। ठाकुरजीके कमरेमें कासे पत्थर और पीतलकी राधा-कृष्णकी पुगल मूर्तियाँ हैं। एक नहीं, बहुत-सी। यहाँ मी पौन-छह बेगमियों काममें लगी हुई हैं। आखीका बल हो रहा है, गोंठ सेनेही मी जुलत नहीं है।

मूर्तिपूर्वक यथारिति प्रणाम कर बाहर आ गया। ठाकुरजीके कमरेके अलावा और एक कमरे मिट्टीके हैं, पर सैमाल-खानकी सीमा नहीं है। बिना आसनके कहीं मी बैठते संकोच नहीं होता, तथापि कमलज्याने लामनेके बगमदे में एक ओर आसन बिठा दिया। कहा, “बैजो, तुम्हारे खनेका कमरा-अप ठीक कर आऊँ।”

“मुझे क्या आज यहीं रहना पन्था ?”

“क्यों, डर क्या है ? मेरे रहते तुम्हें तकलीफ नहीं होगी।”

मैंने कहा, “ठकड़ीइके किए नहीं करता पर गौहर को नाशक होगा।”

बेगमबीने कहा, “यह मार मेरे ऊपर है। मेरे रखनेपर तुम्हारा मित्र बरा मी नाशक न होगा।” कहकर वह हँसती हुई चली गई।

मैं बरौण वेदा हुआ अम्यान्व बेगमियोंका काय देखने लगा। तबतुल ही उनके पास नष्ट करनेको बरा मी बल नहीं है। मेरी ओर किसीने धूमकर मी नहीं देगा। करीब दस मिनट बाद जब कमलज्या औरकर आई तब काम साम कर तब उठ गई थी। पूछा, “तुम इस मरकी अधिकारिणी हो क्या ?”

कमलज्याने बीम काटकर कहा, “हम तब गाकिन्दजीकी राखी हैं,—कोर छीटा-बदा मही है। एक-एकसर एक-एकका मार है। मेरे ऊपर प्रभूने यह मार दिया है।” कहकर उसने मन्दिरके उदरेस्पते हाथ जोड़कर फिरसे लगा दिने। कहा, “अब कहीं ऐसी बात बरानसर मत माना।”

मैंने कहा, "येवा ही होगा। अच्छा, बड़े गुहार और मोहर गुहार क्यों नहीं दिखाई दे रहे हैं।"

बैष्णवीने कहा, "थे बगैर जाते ही होंगे। महीमें स्नान करने गये हैं।"

"हसनी घटको! और हस नहींमें।"

बैष्णवीने कहा "हाँ।"

"गोहर मी।"

"हाँ, मोहर गुहार मी।"

"पर मुझे ही क्यों नहीं स्नान कराया।"

बैष्णवीने हँसकर कहा, "हम किसीको स्नान नहीं कराती। वे अपने स्नान करते हैं। मयचान्डी बघा होनेपर एक दिन तुम मी करोने और उस दिन मन्ना करनेपर मी नहीं मानोगे।"

मैंने कहा, "गोहर माम्बान् है। पर मेरे पास तो रुपया नहीं है। मैं मरीच आरम्भी हूँ इस कारण शाबर मेरे प्रति परमात्माकी बघा न हो।"

बैष्णवी सायर इच्छारा समस्त गई और नाचन होकर कुछ कहनेवाकी हो थी पर कहा नहीं। फिर बोली, "गोहर गुहार कुछ भी हों, पर तुम मी मरीच नहीं हो। वो आरम्भी डेर रुपया देकर वूखेकी कड़कीका उधार करता है। मयचान् उठे मरीच नहीं मानते। तुम्हारे ऊपर भी बघा होना आरम्भ नहीं है।"

मैंने कहा, "तब तो वह डरकी बात है। तो भी किस्मतमें वो भिन्ना है वह होमा ही, असम नहीं जा सकता,—पर पूछता हूँ कि कम्पाके उधारकी कसर तुम्हें कहाँसे मिली।"

बैष्णवीने कहा, "हमें चार जगहसे जील मोंगनी पड़ती है, इसलिये हमें सब लवरे मिल जाती है।"

"पर वह लव साबर बगैरक नहीं मिली है कि मुझे रुपये देकर कड़कीका उधार नहीं करना पड़ा है।"

बैष्णवी कुछ विस्मित हुई। बोली, "नहीं, वह लव नहीं मिली। पर तुम्हारा क्या घादी दूट गई।"

"घादी नहीं दूटी, लेकिन काटिदात बाबू दूट गये हैं,—बुर दूसाके बाप दी। कड़कीको बेचकर वूखेकी मिठाई खानसे मिले हुए वदेबको हाव प्कारकर सेनसे उन्हें धर्म आई। इससे मैं भी बच गया।" कहकर

सारा मामला संक्षेपमें बता दिया। वैष्णवीने सविस्तर कहा, “कहते क्या हो बी, यह तो निश्चय ही बनहोनी बात हुई।”

“ईश्वरकी दया। सिर्फ गोहर गुहार ही क्या बीसियों गम्भी नदोंके पानीमें गोते क्यायेगा, संसारमें और कहीं भी कुछ बनहोनी बात नहीं होगी। उनकी धीम्य ही फिर किस तरह बाहिर होगी, बोलो।” कहकर जैसे ही मैंने वैष्णवीका मुँह देखा जैसे ही समझ गया कि यह ठीक नहीं हुआ,—धीम्य बंद गया है। वैष्णवीने किन्तु प्रतिवाद नहीं किया, मन्दिरकी ओर हाथ उठाकर उसने किर्क निजाम्म नमस्कार कर दिया। यानो अपराधको क्षमा करनेकी मित्रा मींगी।

एक वैष्णवी एक बड़े प्याजमें मैदाकी पूरियाँ सिन्धे हुए सामनेसे ठाकुरजीके कमरेकी ओर निकल गई। उसे देखकर कहा, “आज तुम्हारे यहाँ समारोह है। चायद कोई लाठ लौहार है,—नहीं।”

वैष्णवीने कहा, “नहीं, आज कोई लौहार नहीं है। यह हमारे बहाँका रोमका किस्ता है। ठाकुरजीकी दवासे कमी कमी नहीं होती।”

“बुरीही बात है। पर आबोबन चायद रातका ही ज्यादा होता है।”

वैष्णवी बोली, “सो भी नहीं। सेवामें सुबह-शामका कोई स्वाद ही नहीं है। यदि दवा करके दो दिन यह जाभा तो खुद ही खप देलेंगे। हम सब वालीकी बाली हैं, उनकी सेवा करनेके अन्धका संसारमें हमारा और कोई काम तो है ही नहीं।” कहकर उसने मन्दिरकी ओर हाथ बढ़कर फिर एक बार नमस्कार किया।

पूज, “दिनभर तुम लोगोंको क्या-क्या करना होता है।”

वैष्णवीने कहा, “आकर जो देना, वही।”

“आकर देना मलात्म कूटना, रतार्के छिप तरकारी बनाना, दूध डुबाना, माख मूँघना, कपड़ रँगना—ऐसे तो और बहुत-से काम। तुम सब दिनभर क्या सिद्ध रही किया करती हो।”

वैष्णवीने कहा, “हाँ, दिनभर सिर्फ बही करती हैं।”

“पर यह सब तो वैष्णव पर-परस्पीके काम हैं, सभी ओरसे करती हैं। तुम मजन-साधन सब करती हो।”

वैष्णवी बोली, “यही हमारे मजन-साधना है।”

“यह रखो बचाना, पानी मरना, बूटना-घटकना, माया गूँघना, कप रँगना,—इसीको ‘छावना’ कहते हैं !”

बैष्णवीने कहा, “हाँ, इसीको छावना कहते हैं। दास-दास्त्रियोंकी इससे बढ़कर छावना इसे और कहाँ मिलेगी गुहारें !” कहते-कहते उठकी दोनों सख्त झौले धाने अनिर्वचनीय मधुरतासे परिपूर्ण हो उठीं। एकाएक मुझे ख्याल हुआ कि इस अपरिचित बैष्णवीका मुँह कितना सुन्दर है, उतना सुन्दर मुँह मैंने संसारमें कभी नहीं देखा। कहा, “कमलका, तुम्हारा मकान कहाँ है ?”

बैष्णवीने झोंकते झौले पोंछकर हँसते हुए कहा, “पेड़की छावा।

“पर पेड़की छावा तो हमेशा न थी !”

बैष्णवीने कहा, “तब था हँड और काठक बने हुए किसी मकानका एक छोटा-सा कमरा। पर कहानी सुनानेका बख तो अब नहीं है गुहारें। मैं तब ब्याझो, तुम्हारा मया कमरा दिखा दूँ।”

कमरा बढ़िया है। उसने बाँतकी लूँटीपर रेंगा हुआ एक लाल रेशमका कपड़ा दिखाते हुए कहा, “बह पहनकर ठाकुरजीके कमरेमें आना। देखा, देर न करना !” कहकर वह तेजीसे चली गई।

एक ओर एक छोटेसे लकड़मर बिछोना बिछा है। निचट ही एक चौकीपर कुछ किछक और एक पाखीमें बहुत-मूक रते हैं। जमी-जमी कोई प्रदीप जलकर धायद घूप जला गया है, कमरा अब भी उसकी गन्ध और सुर्से भर हुआ था,—बहुत अच्छा लगा। दिनभरकी क्लामि तो थी ही—ठाकुर देखाओसे हमेशा दूर-दूर रहना आया है; ऊपर आकर्षण नहीं था,—कत कपड़े उधारकर बसते बिछोनेपर सेठ गया। जाने यह किसका कमरा है, एक रातके लिए बैष्णवी न जाने किसकी धम्या मुझ उधार दे गई है,—अच्छा धायद यह उठीकी है,—इन सब बिचारोंसे मेरा मन जमावत ही बहुत बंधोब अनुभव करता है। पर ब्याज कुछ भी खयाल न हुआ, माँगी न जान कपड़े परियत अपने ही आसक्तियोंके पास आ पहुँचा हूँ। धायद कुछ पन्ना था बहँ थी कि इतनेमें ही शीते किसीने दरवाजेके बाहरले आवाज की, “नय गुहारें, मन्दिर मही जाओगे ! वे तुम्हें बुला जो रहे हैं।”

परपट उठ पड़ा। मैत्रीके लाल-लाल कीतनके जानेकी आवाज भी कानीन

पहुँची। बहुत-से आहमियोंका समवेत कोटाहक ही नहीं था गय वस्तु भी
कितनी मधुर थी उतनी ही खराब थी। स्त्रीका कण्ठ था,—बिना आँसूसे देखे
ही निस्तन्देह अनुमान किया कि कमजोर है। नवीनका विश्वास है कि इस
मोटे रूपने ही उसके मादिकको पोंत दिया है। सोचा कि यह असम्भव नहीं
है और बहुत बर्धगत भी मही है।

मन्दिरमें घुटकर एक और धुननाप बैठ गया, किछीने फिरकर नहीं देखा।
उपकी दृष्टि उपाङ्गकी घुट-भूतिपर रुकी थी। बीचमें लड़ी हुई कमजोरता
कीटन कर रही है—

मदनगोपाल अय अय यज्ञाश्रम छालकी,
यज्ञाश्रम छाल अय अय, अय नन्दालकी।
नन्दाल अय अय गिरिधारीछालकी
गिरिधारीछाल अय अय गाविन्द-गापालका ॥

इन मोदेसे सदा और साधारण शर्तोंके आच्छेदनसे मर्त्यका सम्झौता बस
रूपक मयित होकर कौन-सा अमृत तर्पित हो उठता है, वह मेरे लिए ठरकन
करना बठिन है। पर देखा कि उपस्थित व्यक्तिमेंसे किसीकी भी आत्मा गुप्त
नहीं है। गाविन्दकी दोनों आँसूको प्कावित कर सर सर अभु सर रहे हैं और
गावोंके गुग्गुलुस बंध-बीजमें उनका कण्ठ-स्वर जैसे दूट जाता है। मैं इन
सब रसोंका चिक नही हूँ, लेकिन मेरे मनके भीतर भी एकाएक न आने बीजा
हाने लगा। दारिकादास बाबाजी अँग दूँदे एक दीवारका सहाय क्रिये बैठे थे।
वह पता नहीं क्या कि वे सचेत हैं या अचेत। और किछ मोड़ी दर परदेकी
स्निग्ध हास-परिहास-बंधन कमजोर हो नहीं, बल्कि साधारण घर-बर्तन
निपुण्य से सब वैभवियों अनीतक साधारण, गुप्त और कुत्तर जमी थी वे
भी जानो इस धूरके पुरेन आच्छादण यहै अनुपम सीरके प्रकाशमें अनमर
लिए मेरी नजरोंमें अत्यन्त सुन्दर हो उठी। इस भी जानो ऐसा लगा कि फयरही
पर निकटकी मूर्ति वयार्यमें अँग मज्जर देन रही है और जान जाकर
कीर्तनका समस्त मायुष्य उपमाग कर रही है।

आपोंकी इस विद्व-मुग्धतासे मैं बहुत डरता हूँ बस होकर बाहर गया
आया,—किन्तुने कहा भी नहीं किया। देखा हूँ कि प्रेमके एक कोने
में बैठे हैं और कहीं प्रकाशकी एक रेखा आकर उगई छरीपर पर रही

है। मेरे पैरोंकी आबाजसे ठठका ध्यान भंग नहीं हुआ, पर उस एकल तमा दित मुझकी तरफ में भी न हिक लका, वहीं खान्ख हो लका रहा। ऐसा क्या कि चिर्क मुझको ही अकेला छोड़कर इस जगहके सब व्यक्ति और किसी दूसरे कोकमें जाने गये हैं—जहाँका पय मैं नहीं पहचानता। कमरेमें जा, रोशनी बुझकर सेट गया। यह अच्छी तरहसे ध्यानता हूँ कि ज्ञान, विद्या और बुद्धिमें मैं इन सबसे बड़ा हूँ, तथापि न जाने किसकी व्यवस्थासे अंदर ही अंदर मन रोने लगा और जैसे ही अनजान कारणसे आँखोंके कोनोंसे पानीकी बड़ी-बड़ी बूँदें मिलने लगीं।

फला नहीं कि कितनी देरसे खे रहा था। कानमें मन्क पड़ी, “अरे यन्ने गुत्तार्हें !”

आकर उठ बैठा, “कीन !”

“मैं हूँ तुम्हारी घामकी बन्धु—इतना लोते हो !”

थोड़े कमरेमें बोलचाले पात कमकमता बैजवी लकी थी। बोला, “आयनेसे क्या प्यपका होता ? लोनेमें कमकका कुछ सवुरसोय लो हुआ।”

“वह मामूम है। पर अकुरका प्रत्यक्ष नहीं आगे !”

“हूँगा।”

“तो फिर, लो क्यों खे हो !”

“आनता हूँ कि कोई दिक्कत नहीं होगी प्रत्यक्ष लो मिलेगा ही। मेरी घामकी बन्धु लतको भी परिणाय नहीं करेगी।”

बैजवीने सहास कहा “वह अधिकार बैजवीको है, तुम ओमोंको नहीं।”

“आधा मिलनेपर बैजव होते क्या देर आती है ! तुमने मौहलकको गुत्तार्ह बना दारु लो मैं ही क्या इतनी अन्धेकनाका पात्र हूँ ! आका होनेपर बैजवीका दातामुदात्त होनेको भी राखी हूँ।”

कमकमताका कण्ठस्वर कुछ गम्भीर हुआ। कहा, “बैजवीकी हँसी नहीं उदानी आदिप, गुत्तार्ह, अपराध होता है। मौहल गुत्तार्हको भी तुमने लगत समझा है। उनके अपने आदमी उन्हें काफिर कहते हैं, पर नहीं जानते कि वे पक्षे मुल्लमान हैं, पिता-पितामहके बर्मविधायको उन्होंने नहीं लाया है।”

“पर उमका भाव बैजनेपर लो वह मामूम नहीं होता।”

बैजवीने कहा, “यही लो आश्चर्य है। पर अब हँसो मत करो, आओ।”

फिर कुछ सोचकर कहा, “या प्रताप हो तुम्हें यही दे जाऊँ—क्या करते हो !”

“आपत्ति नहीं । पर गौहर कहाँ है ! वह हो तो दोनोंको एक साथ ही हो न ।”

“उनके साथ बैठकर खाओगे ।”

“हमेशा ही तो जाता है । बचपनमें उसकी मर्ति मुझको बहुत सिखाया है । और उस उक्त तुम्हारे प्रतापकी अपेक्षा वह कम मीठा नहीं होता था । इसके अलावा गौहर भक्त है, गौहर कर्ष है—कमिची जातिही खोज नहीं की जाती ।”

उस अल्पकारमें भी ऐसा क्या कि वैष्णवीने एक लौसको दवा किया । फिर कहा, “गौहर गुमार्ह नहीं है । वह कम बसे गये हमें पता नहीं ।”

मिने कहा, “मैंने ऐसा था कि गौहर अंगनमें बैठा है । उसे क्या तुम भीतर नहीं आने देती !”

वैष्णवीने कहा, “नहीं ।”

“गौहरको आज मैं देता था । कमकठता, मेरे मन्त्रकसे तुम मायज हा बर्ह, किन्तु तुम भी अपने देवताके साथ कम ईसी नहीं कर रही हो । वह बात नहीं कि अरपय सिर्फ एक तरफसे ही होता हो ।”

वैष्णवीने इस प्रश्नका कोई जवाब नहीं दिया । वह चुपचाप बाहर चली गई । थोड़ी देर बाद ही उसने एक बूली वैष्णवीके हाथों रोधनी और अचानक लपट धुल प्रतापका पात्र लेकर प्रवेश किया । कहा, “नये गुमार्ह, अविधि केन्द्रमें बुद्धि हो सकती है, पर यहाँका सच-सुच ठाकुरजीका प्रताप है ।”

मिने हँसकर कहा, “ओ तम्पाकी बगु, वह कार्र डरकी बात नहीं, वैष्णव न होवे हुए भी तुम्हारे नये गुमार्ह में रस-बाध है, अविधि-वकी बुद्धिके अग्र वह रस-भंग नहीं करेगा । जो है रस हो—कौटकर देखोगी कि प्रतापका एक कण भी बाकी नहीं है ।”

“ठाकुरजीका प्रताप ऐसे ही तो खाया जाता है,” यह कह और फिर नीचा कर कमकठताने सारी राधणामयी एक-एक कर तिष्ठतिसेवार सदा ही ।

दूसरे दिन बहुत सरेरे ही नींद टूट गई । मारी मगारेकी आवाजके साथ मकधरती शुरू हो गई है । प्रमातीके मुरमें कौटमका पद कानमें पड़ा—

बिना खाये ही सुझ-सुझ मर जाती, तो भी नहीं जाती ।”

“कमलमठा, तुम्हारा देश कहाँ है ?”

“कह ही तो कहा था गुहारें मेरा घर पेड़के नीचे है, मरा देश यही गलीमें है ।”

“तो पेड़के नीचे और गली गलीमें न रहकर मठमें कित्तिय्य राखी हो ।”

“बहुत दिनोंतक गली-गलीमें ही थी गुहारें, अगर कोई संघी सिक्का जाय तो फिर एक बार गलीको संक बना खूँ ।”

मैंने कहा, “इस बातपर तो विश्वास नहीं होता । तुम्हें संघी-खापीकी स्वा कमी है कमलमठा । कितने कहोगी यही राखी हो जायगा ।”

“देवकीने हैंते हुए कहा, “तुम्हें कहती हूँ नये गुहारें,—राखी होये ।”

मैं भी हँस । कहा, “हाँ, राखी हूँ । जायकिय ठगमें जो बाबाके हस्ते नहीं दया, बाकिय अकस्मातमें उसे देवकीका स्वा कर ।”

“बाबाके हस्ते भी रहे थे ?”

“हाँ ।”

“तो मान्य भी गा लफटे हो ।”

“नहीं । माकिने इतनी दूर आगे बढ़ने ही नहीं दिया; इसके खड़े ही अग्रव दे दिया । यह नहीं कहा था लफटा कि तुम माकि होतीं तो स्वा करती ।”

देवकी हैंते लगी । बोली, “मैं भी अग्रव दे देती । इस लकी, जब हममें एकके भी जानेपर काम बक अग्रव । इस देशमें चाहे जैसे भी मयमान का नाम केनेपर मिताका अग्रव नहीं होता । अस्ते न गुम्पई, निष्क पर्व । कह रहे थे कि बुन्दावननाम कमी नहीं देव है अस्ते तुम्हें कित्तिय्य अर्क । बहुत दिन परमें बैठे-बैठे कहे, राखेका नया जैसे फिर अग्नी और लीकना चाहता है । अब, अग्नी नये गुम्पई ।”

अग्रवक उसके मुँहकी ओर दितकर बहुत विस्मय हुआ । कहा, “इमार परिचय हुए तो अभी चौकीत अग्ने भी नहीं हुए, मुझपर इतना विश्वास कैसे हो गया ।” देवकीने कहा, “ये चौकीत बड़े सिक्का एक पक्षके सिद्ध हो तो मरी दे गुम्पई होनी पक्षोंके सिद्ध हैं । मेरा विश्वास है कि राखेमें प्रवातमें भी तमपर मेरा अग्रववात य होगा । कक पक्षी है, जानेका बड़ा अग्रव हुए

दिन है,—वन्ना । और रास्तेके किनारे देखना पत्र तो है ही,—अच्छ नहीं बने तो डोट जाना । मैं मना नहीं करूँगी ।”

एक बेगमबीने आकर खबर दी, “ठाकुरजीका प्रताप कमरेमें रख दिया गया है ।” कमलखाने कहा, “बसो तुम्हारे कमरेमें बैठकर बैठ ।”

“भैरे कमरेमें ! अच्छी बात है ।”

और एक बार उसके मुँहकी तरफ देखा । इस बार खेदमात्र भी उत्तर म रहा कि वह हँसी नहीं कर रही है । वह भी निश्चित है कि मैं उपलब्ध मात्र हूँ, पर चाहे जित्त कारणसे हो, उसकी ऐसी हाव्य मासूम हुए कि वह चाहे जित्त कारणसे हो, यदि यहाँके बन्धन तोड़कर भाग सके तो मानों उसकी ज्ञानमें जान आ जाय —उन एक लम्बा भी विस्मय लान नहीं हो रहा है ।

कमरेमें आकर खाने बैठा । बहुत बढ़िया प्रसाद है । भागनेका प्रयत्न अच्छी तरह बन्द आया, पर एक बहुत बड़ी कामसे कोई कमलखानेकी हुला से गया । अतः अकेले ही मुँह बन्द किये हुए सेवा समाप्त करनी पड़ी । बाहर निकलनेपर कोई भी नजर नहीं आया, हाकिमादात बाबाजी भी न जाने कहाँ चले गये । दो-तीन पुरानी बेगमबियाँ घूम फिर रही हैं,—कब शामको ठाकुरजीके कमरेके पुर्चेमें प्रताप वे ही अच्छा मैत्री करी थीं, किन्तु आज दिनकी तेज रोशनीमें कलका वह अचानक सौन्दर्य बोध उठना बहुत मही रहा । मन न जाने कैसा हो गया, लौका आभयके बाहर चला आया । वही घेराबाच्छा घेराकाया मन्त्रसेवा तुम्हारेविता नही और वही ब्या-गुम्ह-कटकाकीर्ण तदभूमि, वही लस्तपुन नुरद बेटीका मुँह और मुबिलुत बेगुनन ।

बहुत दिनोंके अनन्यासके कारण शरीर कमजोराने लगा, कहीं दूरी काह जानकी सोच ही रहा था कि एक आदमी जो कहीं टिग्न है या, अब ठठा और नजदीक आकर गड़ा हो गया । पहले तो आश्चर्य हुआ कि इस बगल में आदमी हो सकता है । उसकी उम्र मेरे बराबर ही होगी, और दस बरं ज्यादा होना भी असम्भव नहीं है । टिगना, बुराणा-प्लव, छोरेका रंग बहुत पतला जाना मही है, पर दुँहका नीचेका हिस्सा जैसे बहुत ही छोटा है । जोरोंकी हानों मीहें मी देखी ही अचानकविच रूपमें विस्तीर्ण हैं । मनुष्य, रहनी वही, फनी और मोटी मीहें मी मनुष्यकी होती हैं, यह सब मुझे इसके पहले म था । पहले ही चिह्न हुआ कि प्रार्थने मन्त्रकमें होयके करने

धनैः धनैः झरती और कीर्तन लगात हो गया। कच्चाभी बड़ी बैष्णवी जाकर बड़े बालों प्रसाद रस गई, पर जिसकी राह रेत रहा था उसके दर्शन नहीं मिले। बाहर जोगोंकी बातचीत और आने-जानेकी आवाज भी धमधमान हो गई। वह सोचकर कि अब उसके आनेकी सम्भावना नहीं है, भोजन किया और हाथ-मुँह धोकर हीन कुत्ता छो गया।

छावर उठ बछ बहुत रात थी, कानोंमें मलक पड़ी, “नये गुस्सारे !”

जगकर उठ बैठा। कमरकारमें लड़ी कमरकटा आदिछा-आदिछा बोझी, “भारं नहीं, इतना धायद मन ही। मन बहुत गुस्सी हो रहे हैं—क्यों नये गुस्सारे !”

कहा, “हो, गुस्सी हुआ हूँ।”

उबमरके लिए बैष्णवी चुप रही, फिर बोली, “जंगलमें वह जादमी तुमसे क्या कह रहा था ?”

“तुमने देखा था क्या ?”

“हो।”

“कह रहा था कि वह तुम्हारा पति है—अर्थात्, तुम्हारे सामाजिक आचारोंके मुताबिक तुम्हारी उसकी कपटी-बदली हुई है।”

“तुमने विश्वास किया ?”

“नहीं, नहीं किया।”

उबमरके लिए फिर मौन रहकर बैष्णवीने कहा, “उसने मेरे स्वभाव और चरित्रके बारेमें कुछ हलचल नहीं किया ?”

“किया था।”

“और मेरी आठिका ?”

“हो, उसका भी।”

बैष्णवीने कुछ ठहरकर कहा, “मुनीरो मेरे वचनका इतिहास। छावर तुम्हें पूछा हो क्या ?”

“तो रहने दो, मैं नहीं मुनया चाहता।”

“क्यों ?”

“उसने क्या चायका कमरकटा ? तुम मुझे बहुत मन्दी लगी हो। यहाँके कल पका जालेंगे और चायद फिर कभी हम जोगोंकी मुलाकात ही न हो। तब

ले इत धनसे जगनको निरर्थक हो नष्ट करनेसे क्या पाबन्दा होगी, क्या भोगो ?”

इत बार वैष्णवी बहुत बेरतक बोल रही । यह समझमें न आया कि अन्ध-कारमें बुलबुल लड़ी वह क्या कर रही है । पूछा, “क्या सोच रही हो ?”

“सोच रही हूँ कि कब मुझें नहीं जाने दूँगी ।”

“तो फिर क्या करने होगी ?”

“क्या करूँगी न दूँगी । पर जब बहुत रात हो गई, तो आओ । मछली जख्मी छत्रसे लगी हुई है न ?”

“क्या पता, राखद लगी है ।”

वैष्णवीने हँसकर कहा, “छाबद कभी है । चाद, लूट हो ।” यह कह ठकने करीब आकर अन्धकारमें ही हाथ बढ़ाकर बिछीनके चारों ओरोंकी परीक्षा कर ली और कहा, “तोओ गुनारें, मैं जाती हूँ ।” यह कहकर वह दबे पैरों बाहर निकल गई और बाहरसे बहुत ही सावधानीके साथ दरवाजा भी बन्द कर गई ।

७

वैष्णवीने आज सुनसे बार-बार जापण करा ली कि उसका पूर्वनिश्चय मुनकर मैं पूजा नहीं करूँगी ।

“मुनना मैं चाहता नहीं, पर अगर मुझे तो पूजा न करूँगी ।”

वैष्णवीने तबाल किया, “पर क्यों नहीं करोगे ? मुनकर औरत-मद सब ही तो पूजा करते हैं ।”

“मैं नहीं जानता कि तुम क्या कहोगी, तो भी अम्माब क्या कहता हूँ । यह जानता हूँ कि ठले मुनकर औरतें ही औरतोंसे लपटे करादा पूजा करती हैं और इतका कारण भी जानता हूँ, पर तुम्हें यह नहीं बताना चाहता । पुरख भी करते हैं, किन्तु बहुत बार यह छल होता है और बहुत बार आत्मवचना । तुम जो कुछ कहोगी उसमें भी बहुत बजादा मरी बातें मीने खु- तुम जगोंके दूरसे मुनी हैं और अम्मी औलो भी देखी है । पर तो भी मुझे पूजा नहीं छोटी ।”

“क्यों नहीं देखी ?”

“छाबद यह मेरा स्वभाव है । पर कब ही तो तुमसे कहा है कि हल्की बस्त्र मरी । मुननेके लिए मैं क्या भी उम्मुक मरी ।—हल्की अम्माब कीन

कहाँका है, वह सब कहानी सुनने नहीं भी करी तो क्या दर्ज है ?”

बैष्णवी काफ़ी बेरखक हुए हो कुछ सोचती रही। इसके बाद अन्यान्य पृष्ठ बैठी, “अच्छा गुस्साई, तुम पूर्वजन्म और अगले जन्मपर विश्वास करते हो ?”

“नहीं।”

“नहीं क्यों ? क्या तुम सोचते हो कि ये सब बातें सबसुख नहीं हैं ?”

“मेरे सोचनेके लिए दूसरी बहुत बातें हैं, चायब यह सब सोचनेके लिए मुझे समय ही नहीं मिलता।”

बैष्णवी फिर खामर मोन रखकर बोली, “एक पढ़ना तुम्हें क्याकैसी विश्वास करोगे ? टाडुरजीकी ओर मुँह करके कहती हूँ कि तुमते हठ नहीं फूँगी।”

मिने हँसकर कहा, “करँगा।”

“तो कहती हूँ। एक दिन मोहर गुस्साईके मुँहसे सुना कि उनकी पाठशाळा का एक मित्र उनके घर आया है। सोचा कि जो अक्षरमी एक दिन भी वहाँ आवे बिना नहीं रह सकता, वह अपने बेचपनके मित्रके साथ छह-सात दिन कैसे मूक्य रहा ? फिर सोचा कि वह कैसा आश्चर्य मित्र है जो अन्यायास ही मुक्तमान के घर पड़ा रहा किसीके भी नहीं डर। उसका क्या करी भी कोई नहीं है ? बुझनेपर मोहर गुस्साईने भी ठीक वही बात कही। कहा कि संसारमें उसका अपना करने अवक कोई नहीं है, इसलिये उसे डर नहीं है, बिन्ता भी नहीं है। मन ही मन ख्याल किया कि ऐसा ही होया। पूछा, गुस्साई तुम्हारे मित्रका क्या नाम है ? नाम सुनकर जैसे धौंक गई। जानते तो हो गुस्साई, यह नाम मुझे नहीं सेना चाहिए।”

हँसकर बोला, “जानता हूँ। तुम्हारे मुँहसे ही सुना है।”

बैष्णवीने कहा, “पूछा, तुम्हारा मित्र देखनेमें कैसा है ? उम्र क्या है ? गुस्साईने जो कुछ कहा उसका कुछ हिसा तो जानोंमें यथा, बीर कुछ मही। पर हृदयके भीतर भड़कन होने लगी। तुम ख्याल करते होगे कि ऐसा जादमी तो मही हैजो जो नाम सुनकर ही पागल हो जाय। पर यह सब है। तिरु नाम सुनकर ही औरते पागल हो जाती हैं गुस्साई ?”

“उसके बाद ?”

बैष्णवीने कहा, "उसके बाद खुद भी रहने जगती पर भूख न सकी। सब काम-काजोंमें मुझे बैष्ण एक ही बात याद माने जगती कि तुम सब आओगे, हमें अपनी आँखोंसे सब देख सकूंगी।"

मुनकर चुप रहा, पर उसके चेहरेकी ओर देखकर ईस न सका।

बैष्णवीने कहा, "अभी तो सब कामको ही तुम आवे हो, पर आज इस संसारमें मुझे ब्यापार हमें कोई प्रेम नहीं करता। पूरकम अगल सब न होता तो सब एक दिनमें यह अलम्पन बात सम्भव हो सकती।"

कुछ देरकर उसने फिर कहा, "मैं जानती हूँ कि तुम अपने नहीं आवे हो और खोते भी नहीं। आवे भिजनी भी प्रार्थना क्यों न करें, तुम हो-एक दिन बाद चने हो आओगे। पर मैं बैष्ण वही सापसी हूँ कि इस रन्याको मैं कप्तक सँभासे रहूँगी।" यह कहकर उसने लक्ष्य आँकड़ोंसे आँखें पोंछ डालीं।

मैं चुप हो रहा। रहने बोले समझने, रहनी रस और प्रसन्न भावमें हमकीके प्रथम निवेदनकी कहानी हमके पहले म हो कभी किताबमें पढ़ी थी और न हममेंकी सुनानी ही मुनी थी। और अपनी आँखोंसे ही देख रहा हूँ कि यह अभिन्न भी नहीं है। कमकटा देखनेमें सुन्दर है, निरुध मूर्त भी नहीं है, उसकी बात-चीत, उसका धाना, उसका आदर-भार और उसकी अतिविशेषकी आन्तरिकताके कारण वह मुझे अपनी जगती है और इस जगते कहनेका प्रमाण और रसिकताकी अत्युक्ति के साथ करनेमें मैंने कंझी भी नहीं की है। पर हमने ही देखत यह परिवर्ति रहनी गहरी हो आगयी, बैष्णवीके आवेदनसे, आम-जैनसे और मायुयके अनुष्ठित आत्मप्रकाशन साथ मन देती निष्कलसे परिपूर्ण हो आया—यह कहा समयमें भी पहले जानता था। मागों में रहकुदि हो गया। यही नहीं कि विद्वत्कालसे ही साथ खीर समर्पित हो गया हो, बल्कि एक प्रकारकी अनजान विन्की आराधनासे हृदयमें भर करती दानि और निराकुला न रनी। पता नहीं कि किस अग्रम मुहूर्तमें काशीसे पना था जो एक पूँछका बाज होकर चुली पूँछके चनेमें चुपे लपक गिया। इधर उग्र बैष्णकी भीमा गाय रही है ऐसे अनमरमें अनाचित्त नारी प्रेमकी ऐसी बात का गई कि लोच हो न लपक कि कहीं मायकर आत्मप्रकाश करें। चन्ना भी म की थी कि पुनरुत्थित मुनी-२५

इतनी अस्वस्थ हो सकती है। सोचा, एकाएक मेरा मूल इतना कैसे बढ़ गया ! क्या एककक्षीका प्रयोजन भी मुझमें शेष नहीं होना चाहता,—वही भीमांश दुर्दै कि वह अपनी वज्रमुष्टि को मेरा भी धीका कर मुझे निष्कृति नहीं देगी। पर अब यहाँ और नहीं रहना चाहिए। धातु-संग तिर-मामे, यही स्थिर किया कि इस स्थानको कब ही छोड़ दूँगा।

एकाएक वेणवी बहिर हो उठी, "अरे बाह ! तुम्हारे बिस्व बाव को देखाई है गुनाई ?"

"कहती क्या हो ? क्यों मिथी ?"

"आहमोको चार मेरा था। चारों, टीवार करके के चारों, देतो, कहीं मयम न जाना।"

"नहीं लेकिन बनाना जानती हो ?"

वेणवीने कहाव नहीं दिया कि तिर दिखाकर हँसती हुई बची गई। उसके कले जानेके बाद उस और देखनेपर हृदयमें न जाने कैसे एक बाढ-सी लगी। बावचन आभासकी व्यवस्था नहीं है, धारद मनाही है, तो भी उसे वह खर लगा गई कि वह चीज मुझे अच्छी लगती है और धारमें आहमी मेककर उसने मीमा भी ली। उसके विगत जीवनका इतिहास नहीं जानता और वर्तमानका भी नहीं। वेक वह आमतल मिक्य है कि वह अच्छा नहीं है वह निन्द्यके योग्य है—तुननेपर कायोंको पूजा होती है। तथापि, वह उस कहानीको मुझसे छिपाना नहीं चाहती, तुनानेके बिस्व बार बार बिद कर रही है, तिर में ही तुननेको राखी नहीं है। मुझे कुतूहल नहीं है, क्योंकि प्रयोजन नहीं है। प्रयोजन उसीका है। अकिते बैठ हुए इस प्रयोजनके सम्बन्धमें सोचते हुए स्थित होता कि मुझे क्यावे और उसके हृदयकी क्लानि नहीं मिलेगी,—मममें वह किसी तरह भी बक नहीं पा रही है। सुना है कि मेरा 'भीकांत' माम कमजोरता उच्चारण नहीं कर सकती। पता नहीं कि कौन वह उसका परमपूज्य गुरुजन है और उसने कब इस लोकमें स्थित हो ली है। हमारे नामको इस वैश्व एकताने ही धारद इस विपत्तिकी सृष्टि की है और उसने सबसे ही कस्बनाम गत जम्मके स्वप्नवागमें हुबकी कमाकर लंछार की लव बधार्मकाओंको सिमावकि दे दी है।

तो भी ऐसा लगता है कि इसमें निस्वयकी कोई बात नहीं। रक्की अथ

पनामें आकृष्ट-मन रहते हुए भी उसकी एकांत नाच-प्रकृति आज भी शाबद रहका तब नहीं पा सकी है, वह जलहाय अपरितुष्ट प्रकृति इस निरवच्छिन्न मास-विक्रमके उपकरणोंको संग्रह करनेमें शायद आज हान्य है,—दुविधासे पीड़ित है। उसका वह पयःपद्म विप्रान्त मन अपने अनजानमें ही न जाने क्यों अकस्मय स्नानमें प्राणपणसे डूबा हुआ है,—बैष्णवी उसका पता नहीं जानती इतीन्द्रिय आज वह बार-बार पीककर अपने विगत-कर्मके रूढ़ द्वारपर हाथ देगाकर अन्तर्धकी सान्धना मोंग रही है। उसकी बातें सुनकर समस्त सज्जन हैं कि मेरे नाम 'भीकान्त' को ही पायेव बनाकर आज वह अपनी नाच छाड़ देना चाहती है।

बैष्णवी चाय से आई। सब जई व्यवस्था है पीकर बहुत आनन्द भिजा। मनुष्यका मन कितनी आसानीसे परिवर्तित हो जाता है।—अब मनीं उसके लिम्पक कार्यं प्रकाशित नहीं।

पूछ, "कमलकला, तुम क्या कहवार हो?"

कमलकलाने ईतकर कहा, "नहीं, सुनार-बनियो। पर तुम्हारे निकट तो कोई प्रेम है — दोनों ही एक हैं।"

"कमसे कम मेरे निकट तो एक ही हैं। दोनों ही एक क्यों बल्कि लगे एक हो जानेर मी कोई मुकलान नहीं।"

बैष्णवने कहा, "ऐसा ही तो लगता है। तुम्हने तो गौहरकी मोंके हाथका भी रखा है।"

"उ-है तुम नहीं जानती। गौहर बापकी तरहका नहीं है, उसे अपनी मोंका लम्बाव भिजा है। इतना घान्त, अपनेको भूष्य हुआ, ऐसा अच्छा मनुष्य कभी देख है। उसकी मी ऐसी थी। एक बार बचपनमें गौहरके पिताके साथ उनके लगदकी बात मुझे थाक है। उन्होंने किसीको छिगाकर बहुत-से रुपये हैं दिये थे। इनी बहरसे लगता पादा हुआ। गौहरके पिता बदमिस्वय आदमी थे। हम तो डरके मारे भाग गये। कुछ पन्ने बाद पीरे पीरे आकर देला कि गौहरकी मी कुपचाव पैठो हैं। गौहरके पिताके बारेमें पूछने-र पढ़ने तो उन्होंने कोई बचाव नहीं दिया। पर हमारे मुँहकी ओर लाकते हुए वे एक बार छिन्न-रिक्ताकर हँस पड़ीं। जीनोंसे पानीकी कुछ बूँद नीचे गिर पड़ीं। यह उनकी आदत थी।"

बेजबानीने प्रश्न किया, “इतमें हैंसनेको कौन-सी बात हुई ?”

“हमने भी तो यही सोचा । पर जब हैंसि रूक गई तो वे पोटीसे लों पीछ कर बोली, ‘मैं कैसी मूर्ख बोरत हूँ क्या ! वे तो मझेसे पेट भर कर कुर्सी के खे हैं और मैं बिना लाये उपवास कर गुस्सेमें जल-मुन रही हूँ, क्या लो इसकी क्या बकरत है ? और इस कहनेके साथ ही सनका साथ धमिम्यान भी ओप कुछ-कुछकर खफ हो गया । वह मुक्तमोगीके जलजवा और कोई ना जानता कि औरलोंका वह फिटना क्या गुण है ।”

बेजबानीने प्रश्न किया, “तुम क्या मुक्तमोगी हो, गुलार ?”

मैं कुछ सितस्मय गया । वह नहीं सोचा था कि उसको छोड़कर वह प्र मेरे ही स्त्रि का पड़ेगा । कहा, ‘सब कुल का खुर ही मोमना फड़ा कमकलता, दूसरोंको देखकर भी तो सीखा जाता है ! इस मोदी मीठोबा बादमीके निकट क्या तुमने कुछ नहीं सीखा !”

बेजबानीने कहा, “पर वह तो मेरे लिए परवा नहीं है !”

और कोई प्रश्न जब मेरे मुँहसे नहीं निकल,—बिस्कुल निस्तब्ध हो गया बेजबानी खुद भी कुछ बेर चुप रही । फिर हाथ जोड़कर बोली, “तुम किन्ती करती हूँ गुलार, एक बार मेरी झुलकी बातें सुन लो—”

“मज्जी बात है, कहो ।”

पर जब कहने लगी तो ऐसा कि कहना उठना आस्य नहीं है । मेरे लह मुँह नीचा किये हुए उसे भी कापी देखकर चुप रहना पड़ा । पर उस बार नहीं मानी । अन्तर्हन्तमें बिजली होकर जब उठने एक बार मुँह ऊपर उठाकर ऐसा तो मुझे भी ऐसा लगा कि उसके स्वाभाविक बेहरेपर मैं एक लपट बमक आ गई है । बोली, “जहंकार मत कर मैं नहीं मरता गुलार ! हमारे बड़े गुलार कहते हैं कि वह मानो पूसकी आग है जो हुसकर भी ना हुसती । रात द्यते ही नजर आता है कि पक-बक बबक रही है, पर इसीलिए इसे फूँक देकर क्या तो नहीं लफटी । फिर तो मेरा इस पपपर आना ही सिम्ब हो जायगा । मुनो । किन्तु औरत हूँ न, इसलिये धावत लव बातें जोलकर न म कर लूँ ।”

मेरे संकोचकी सीमा न रही । अन्तिम बार किन्ती कर कहा, “औरलों पर फिटलनेके विचारोंमें मुझे रिकपली नहीं है, उलुब्धता भी नहीं, और उ

मुन्ना मुझे कभी अच्छा भी नहीं लगा कमकठता । मुझे नहीं मालूम कि तुम्हारी वैष्णव-साधनामें आईकारके नाचके लिए कौन-से मागका निर्देश महाकर्मोंने किया है, पर अपने गुप्त पापोंको अनाहत करनेकी स्थिति बिनब ही अगर तुम्हारे प्राथमिकता विधान हो तुम्हें अनेक व्यक्ति भिन्न व्यक्तियों जिन्हें ऐसी सब कथा निर्वा मुन्ना बहुत अधिकतर लगता है । मुझे माफ़ करो, कमकठता, इसके अन्वया में चापल कठ ही चला आउंगा, चापल फिर जीवनमें कभी हम लोगोंकी मुन्ना काठ भी नहीं होगी ।”

वैष्णवीने कहा, “तुमसे तो पहले ही कहा है गुम्हार, प्रयोजन तुम्हारा नहीं, मेरा है, पर यह क्या तुम सब कर रहे हो कड़के बाद हमारी मुख्यकाम नहीं होगी ?—नहीं ऐसा कभी नहीं हो सकता । मेरा मन कहता है कि फिर मुख्यकाम होगी,—मैं यही आशा लेकर रहूँगी । पर क्या वास्तवमें मेरे बारेमें कुछ भी जाननेकी इच्छा तुम्हारी नहीं है । हमेशा क्या सिर्फ एक अनुमान और सन्देहका ही विषय रहोगे ।”

प्रश्न किया, “आज इनमें किस आदमीसे मेरी मुख्यकाम हुई, जिसे तुम आश्रममें मुझने नहीं देखी, जिसके उपरान्त तुम मागना चाहती हो,—यह क्या वास्तवमें तुम्हारा कोई मही होता । निश्चय पराया है ।”

“किसके बारे में माग रही हूँ, यह तुम समझ गये गुम्हार ।”

“हाँ, ऐसा ही तो समझा है । पर यह है कौन ।”

“यह कौन है । यह मेरे हर और परन्त्येकही नरक-यन्त्रण है । हरीप्रिय तो निरन्तर रोकर मगवान्ने कहाती हूँ प्रभु, मैं तुम्हारी दासी हूँ,—मनुष्यके शक्ति इतनी बरदास्त हुना मेरे मनसे निकाल हो, जिससे मैं फिर आसानीसे लौट केन्द्र भी सही । नहीं तो मेरी लारी साधना व्यर्थ हो जायगी ।”

उसकी आंखोंसे जैसे आत्मकानि पृष्ठ पड़ी, मैं चुन हा रहा ।

वैष्णवीने कहा, “फिर भी, एक दिन उल्लेखना मेरा अपना कोई नहीं था,—उत्तरमें इतना प्यार किसीने भी किसीका नहीं किया होगा ।” उसका कपन मुनकर निस्संकोच सीमा नहीं रही और इस मुख्य रमणीकी मुन्नामें वह प्रेमके पावकी सुखित और मही शत्रुको स्मरण कर मेरा मन बहुत ही अनुक्ति हो गया ।

सुदृढी वैष्णवीने मेरा मुँह देखकर यह ताद किया । कहा, “गुम्हार, यह तो

उत्तका सिर्फ बाहरका परिचय है,—उसके भीतरका परिचय तुमने ।”

“कहो ।”

बैष्णवीने कहना शुरू किया, “मेरे और भी दो छोटे भाई हैं, पर माँ-बापकी मैं इकलौती बेटा थी । हम भीहड़के रहनेवाले हैं, पर क्योंकि भिखारी व्यापारी आदमी थे, उनका व्यापार कलकत्तेमें था, इसलिए बचपनसे ही मैं कलकत्तेमें पसी हुई । एहस्थीके साथ माँ गौँवके मकानमें ही रहती थीं । मैं पूजाके दिनोंमें अगर कभी गौँव जाती तो महीने-भरसे ज्यादा न रह पाती । वहाँ रहना मुझे अच्छा भी न लगता । कलकत्तेमें ही मेरी शादी हुई और लगभग बर्षकी उम्रमें कलकत्तेमें ही मैंने उनसे लो दिया । उनके नामकी बच्चे ही गुलार, तुम्हार नाम गौहर गुलारके मुँहसे सुनकर मैं चौंक पड़ी । इसलिए ‘नये गुलार’के नामसे पुकारती हूँ, वह नाम बुचानपर नहीं का लफ्फा ।”

“यह मैं समझ गया, उसके बाद ।”

बैष्णवीने कहा, “आज जिसके साथ तुम्हारी मुलाकात हुई थी उसका नाम मम्मथ है वह हमारा सुनीम था ।” कह कर वह लजभरके किए मौन रही, फिर बोली, “जब मेरी उम्र इकतीस सालकी थी तब मेरे संतान होनेकी संभावना हुई—”

बैष्णवी कहने लगी, “मम्मथका एक गिरुहीन भतीजा हमारे ही मकानमें रहता था । भिखारी उसे काँकेजमें पढ़ाते थे । उम्रमें मुझसे बड़ा छोटा था । वह मुझे इतना प्यार करता था जिसकी सीमा नहीं । उसे बुझकर कहा, ‘बहीन तुमसे और कभी तो कुछ मँगवा नहीं दे माई, इस विपत्तिमें अंतिम बार मुझे थोड़ी-सी मदद करो । मुझे एक रुपयेका बहर लीद कर लो ।’ पढ़ते तो वह मेरी बात नहीं समझ, पर जब उसकी उम्रमें आधा तो उत्तका बहण मुँहकी तरह पीका पड़ गया । कहा, ‘देखो मत करो माई, तुम्हें थमी लीदकर का देना होगा । इसके अलावा मेरे किए और कोई बूटण पका नहीं है ।’

“यह सुनकर फटीनके रोमेछ छे क्या कहना । वह मुझे देकर समझाया था और बीबी कहकर बुझाया था । उसे कितना आश्चर्य, कितनी मरवा हुई, उसकी झलकोंका पानी जैसे लाल ही नहीं होना चाहता था । बोझ, ‘उपरा पीरी, आम्पणतले बड़कर और कोई माहापाप नहीं है । एक पापके कंधेपर और

एक कवरदस्त पाप जादकर तुम रास्ता खोजना चाहती हो ! पर कम्यते बचनेका यह तरीका ही अगर तुमने स्थिर किया हो खीरी, तो मैं कभी मदद नहीं करूँगा । इसके अतिरिक्त और जो कुछ भी तुम आदेश दोगी, उसका मैं उदात्त पावन करूँगा ।' उनीके कारण मैं मर न सकी ।

"अमरः मिताबीके बानोंमें बात पहुँची । वे जैसे निद्रावाग्बैठे हो शान्त और निरीह प्रकृतिके मनुष्य थे । मुझसे कुछ नहीं कहा पर बुझते, धर्मसे दो तीन दिवसक बिछोनेसे म उठ लड़े । फिर गुहरेवके परामर्शसे मुझे लेकर नवहीर आये । यह टहरा कि मैं और मम्मय बीजा लेकर बेधव हो आवे और सब पूर्योकी माका और कुम्भीकी माका भदक-बदककर नई गीतिसे हमारी छाती हो । ठलसे पापका प्रपरिचय होगा या नहीं, यह महीं जानती थी पर इस मरतेपर कि जो शिष्ट गधमें आया है उसकी मी होकर हत्या नहीं करनेकी पड़गी, मेरी आधी बेचना दूर हो गई । उद्योग आयोजन होने लग्य, दीया कहे या भेर कहे, या और कुछ कहे, मेरा धया नामकरण हुआ—कमलकटा । किन्तु, सब भी यह मासूम नहीं था कि वह हमर बरवे देनेका बचन लेकर ही मिताबीने मम्मयको खीरी किया है । पर एकाएक न जाने क्यों छादीका दिन आगे बढ़ा दिया गया,—छापद एक छाहा । मम्मय बहुत कम दिखार पड़ता, नवहीरके मधनमें मैं अकेली ही रहती थी । ऐसे ही कई दिन बह गये, इसके बाद फिर छम दिन आया । स्नान करके पवित्र होकर छान्त मन्ते ठाकुरको अर्पित माका हाथमें क्रिये प्रतीक्षामें बैठी रही । उद्यम बेरतेसे मिताबी एक बार देल गये, पर मम्मयका जब मबीन रैनवके बेधमें देखा, तो अजानक लारे मनके भीतर बिजली शोक गई । यह ठीक वही जानती कि वह आनन्दकी थी या अघाकी, छापद दानोंकी ही थी । पर इच्छा दूर कि ठठकर ठठके दैतोंकी धूब मादेर बगा न । पर धर्मके कारण देखा मी हो लडा ।

"हमारी बहलतेकी पुरानी दाही बहुत-से बीजे से आर । ठरने मेरी परवरण की थी उनीके मूरत दिन बह अजानका कारण गुना ।"

ठिठनी पुरानी बात है, तो भी गह्य मारी हो गया और ठठकी अोरोंमें आगू ला गये । दूर छिपकर दैतोंकी अर्तु पोंछने लगी ।

पाव-छर मिनट बाद दूध, "ठरने क्या कारण बतया !"

बेधवोंने कहा, "ठरने बताना कि मम्मय अजानक दल हमरके बरते

बीत हथार रूपोंकी योग्य वेग कर बैठा। मुझे कुछ मात्स्य नहीं था, हल्किए चौककर पूछा कि क्या मम्मय रूपोंके बहते राजी हुआ है। और पिताजी भी बीत हथार रूपसे देनेकी तैयार हैं। बातीने कहा, 'उपाय क्या है बीबी रानी! मम्मय भी तो आत्मान नहीं है, बाहिर हो जानेपर बाति, कुछ, मम्म—एक चक्का आया।' मम्मयने अलसी बात अन्तमें बाहिर कर दी। कहा कि हल्के हिए वह तो विमोक्षार है नहीं, विमोक्षार है उल्टा मसीह यहीन। क्या यदि बिना होफे उसे अपनी बाति छोड़नी ही है तो बीत हथारसे कममें नहीं छोड़ सकता। फिर, हूलेके कड़केका पितृत्व स्वीकार करना,— यह भी तो कम मुश्किल नहीं है।

'यहीन अपने कमरेमें बैठा पढ़ रहा था, उसे गुब्बार बात सुनाई गई। सुनकर पहले तो वह हवा-बहा-वा हुआ लड़ा रहा। फिर बोझ हठी बात है। चाचा मम्मय गर्ज उठा, 'घपी, नीच, ममकहराम! जो व्यक्ति मुझे खाना-कपड़ा और काखेमें पका-किलाकर आदमी बना रहा है, उसके दूने खानाया किया। जैसे काखे लौपको मैं मासिकके घरमें लाया।—तोच था कि भौं-घा-हीन कड़का आदमी बनेगा। जी ली,'—वह कहनेके साथ ही खाय वह छाती और सिर पीटने लगा। बोझ 'यह बात उधाने कुर अपने मुँहसे क्यो है और तुम हथार करते हो।'

'यहीन चौक उठा और बोझ, 'उपा बीबीने कुर सेव नाम किया है। पर वह तो कमी हूँ नहीं बोझी,—इतना बड़ा हूँ अन्धकार तो उनके मुँहसे कमी बाहर नहीं निकल सकता।'

'मम्मय और एक बार चित्त उठा, 'अब भी हन्कार करता है पाजी, मम्मय, रीतान, अपने मासिकसे तो पूछ, वे क्या कहते हैं।'

'मासिकने अनुमोदन करते हुए कहा, 'हाँ।'

'यहीनने पूछा, 'कुर बीबीने मेरा नाम किया है।'

'मासिकने फिर सिर हिलाकर कहा, 'हाँ।'

'पिताजीको वह देखता-सुनता मानता था। हल्के बाद उठने और कोई प्रतिवाद नहीं किया। खम्ब हो कुछ देखकर बड़े खनेके बाद धीरे-धीरे पल गया। क्या सोचा, यह बरी जाने।

'रातको किसीने उणकी खबर नहीं की। सुबह ही किसीने आकर खबर

ही। सब सोच पड़ और ऐसा कि हमारे दूरे अज्ञानके एक कोनेमें गलेमें रखी बाँधे यतीन छूट रहा है।”

देवकीने कहा, “यह माँ जानती कि मनीषिकी आत्महत्याके लिए धर्ममें क्या-कैसे लिए खोजकी बिधि है या नहीं गुम्हारें। शायद न हो, या शायद दुष्टकी जगानेते ही शुद्धि हो जाती हो, या कुछ भी हो, शुभ दिन सिर्फ कुछ दिनोंमें लिए और आगे टक गया। इसके बाद गंगा-स्नानसे शुद्ध और शक्तिशाली, माया और ठिक्क जगाने हुए मन्मथ गुम्हारें पापिनीके पाप-विमोक्षणका शुभ संकल्प किये हुए नवजीवमें आकर हाजिर हो गये।”

एक मुहूर्तके लिए मौन रहकर देवकी फिर कहने लगी, “उत्त दिन ठाकुरजी अर्द्ध माया ठाकुरजीके पादपद्मोंमें ही बीदा आई। मन्मथकी अर्थावस्था दूर हो गई, पर पापिनी उपाकी अगतिवता इस जीवनमें दूर न दूर नये गुम्हारें।”

मैंने कहा, “उत्तके बाद।”

देवकीने मुँह खोल दिया, कोई जवाब नहीं दिया। समझ गया कि अब उसे धर्मज्ञानमें देर लगेगी। काफ़ी देरतक हम दोनों ही चुप बैठे रहे।

उत्तका दोष अथ मुननेका आग्रह प्रकट हो उठा। पर सोच रहा था कि प्रसन्न करना उचित है या नहीं। देवकीने आई मनु कण्ठसे सुद ही कहा, “गुम्हारें, जानते हो, संसारमें पाप नामकी चीज इतनी मरकर क्यों है।”

“जाने सगर्भोंके मुताबिक एक ठगसे जानता हूँ, पर गुम्हारों पारनाके नाम शायद वह न मिले।”

उत्तने प्रत्युत्तरमें कहा, “नहीं जानती कि गुम्हार क्या फगल है। पर उत्त दिनते मैंने अकेले ही अपने सगर्भोंके अनुसार समझ लिया है गुम्हारें, कि गर्भोंके साथ गुम कितने ही लोगोंको कहते हुए मुनोगे कि कुछ भी नहीं होता। वे अनेक आदर्शियोंका उदाहरण देकर अपनी बात प्रमाणित करना चाहते। पर इसको ठाँ कोर अकरत नहीं। इसका प्रमाण है मन्मथ और प्रमाण हूँ मैं सुद। अब भी हम लोगोंका कुछ नहीं हुआ। अगर कुछ होता तो मैं इसे इतना मरकर न कहती, पर ऐसा तो नहीं है, इसका स्पष्ट स्पष्टते दे निरन्तर और निर्दोश लोग। यतीनको आत्महत्याका बड़ा डर था, पर उसीसे वह अपनी बीबीके अन्तर्पक्ष प्रभावित कर गया। कहो गुम्हारें, इससे और अधिक मरकर

तब निष्ठुर लंछारो कहा है ?—पर ऐसा ही होता है, इसी तरह ममबान् खबर अपनी सुविधि रचा करते हैं ।”

इस विषयमें बहस करनेसे कोई फायदा नहीं । युक्ति और माध, —कोई भी प्रामाण्य नहीं है, तथापि वही अवाक किया कि कुल्लूविही शोकाच्छन्न स्मृतिन खबर इसी पत्रपर पढ़कर पाप-पुण्यकी उपलब्धि अर्जन की है और ठठठे खन्खना पाई है ।

“कमकठता, ठठठे बाद क्या हुआ ?”

यह सुनकर वह खरसा मानो ब्याकुल होकर कह उठी, “अब क्याओ सुनाई, इसके बाद भी मेरी बातें सुननेकी इच्छा होती है ।”

“तब ही कह रहा हूँ, होती है ।”

बैजवीने कहा, “मेरा मन्त्र है जो इस काममें तुम्हारे बर्धन फिर हुए ।” वह कह कुछ देरतक चुपचाप मेरी ओर देखते-देखते वह फिर कहने लगी, “कोई बार दिन बाद एक मग हुआ कम्का पैरा हुआ । उसे गंगाके किनारे स्थित कर मंगलमें नहाकर घर बाँट आई । पिताजीने रोकर कहा, ‘अब तो मैं नहीं रह सकता हूँ ।’

“हो पिताजी अब आप मत रहिए, आप घर बाँट जाइए । बहुत दुःख दिया, अब आप मेरी फिक्र न करें ।”

पिताजीने पूछा “जीवनमें लखर होगी न बेटी ?”

“नहीं पिताजी मेरी लखर छेनकी अप्र अब बेधा न कीविएगा ।”

“पर उगा, तुम्हारी मी अब भी जोवित है ।”

“मैं मर्यादा नहीं पिताजी पर मेरी लखी-मर्यादा मति कह देना कि उपा मर गई । मीको दुःख तो होगा, पर लड़की बिधा है, अवनकर और मो ज्वादा हुआ होगा । अंतर्लीके अम्प पोंछकर पिताजी कलकलते बसे मये ।”

मैं चुप बैठा रहा, कमकठता कहने लगी, “पासमें बपपा बा—मकानका फिटाया चुकाकर मैं भी निफक पड़ी । लंगी-लाथी भिड गए, तब श्रीहनुमानचाम बा रहे थे, मैं भी लाम हो ली ।”

बैजवीने कुछ रुककर कहा “इसके बाद फिटने लीच, फिटने पब और फिटने पेड़ोंके नीचे अनेक दिन कर गये—”

“पर क्याथा हूँ, पर लैकईं ताबुलोंकी मीलोंकी इष्टिका विवरण तो तुमने

बतावा ही नहीं, कमलकला ।”

देवकी ईश पत्नी । बोली, “बाबाजी ओगोंकी छवि अतिशय निर्मल है, उनके बारेमें अमर्याकी बातें नहीं करना चाहिए गुनार ।”

“नहीं-नहीं, अमर्या नहीं । अतिशय अमर्याके साथ उनकी कहानी सुनना चाहिए है कमलकला ।”

इस दफा वह नहीं हँसी, पर खी हुई हँसी छिग मी न सकी । बोली, “जो बाबाजी प्रम करते हैं उनसे सब बातें लोकर नहीं करी जायीं, हमारे वैष्णव शास्त्रमें मनाही है ।”

“तो रहने दो । सब बातोंका काम नहीं, पर एक बात बताओ । गुनारजी शरिकावाल क्यों मिले ।”

कमलकलाने संकोचते बीम काटकर और कपाळपर हाथ देकर कहा, “मनाक नहीं करना चाहिए, वे मेरे गुरुदेव हैं गुनार ।”

“गुरुदेव ! तुमने उन्हें ही कहा ही है ।”

“नहीं, दीछा तो नहीं थी है, पर वे उतने ही पूजनीय हैं ।”

“पर इतनी लारी वैष्णवियों—सेवाशक्तियों कहा—”

कमलकलाने फिर बीम काटकर कहा, “वे सब मेरी ही तरह उनकी शिष्या हैं । उनका भी उन्होंने ही उद्धार किया है ।”

“निश्चय ही किया है पर ‘अकीया साधना’—या कुछ ऐसी ही जो एक साधना-प्रकृति तुम ओगोंकी है—उसमें तो कोई दोष नहीं—”

वैष्णवीने मुन रोकर कहा, “तुम ओगोंने सिद्ध हुए रहकर हमारा हँसी मनाक ही उड़ाया है, मजदूरोंक आकर कभी कुछ देना तो नहीं, इसीलिए असावीठ धन्य कर सकते हो । हमारे बड़े गुनारजी संन्यासी हैं, उनका उपास करनेसे पाप हटा है गृहन गुनार,—ऐसी बातें फिर कभी अज्ञानपर मत करना ।” उसकी बातोंसे और गम्भीरतासे कुछ हतप्रभ हो गया । वैष्णवीने यह बतस कर अग मुत्सरात हुए कहा, “जो दिन हम ओगोंके पास यही छो न गुनार । देख रहे गुनारजीकी भिष ही नहीं कह रही हैं, मुझे तो तुम प्यार करते हो, और कभी यदि गुनारका म हो तो कमसे-कम यह सा देख आओ कि कमलकला सप्तमूर्ध्मे कहा मेकर संगारमें रह रही है । पतीनको मैं आज भी नहीं भूली हूँ—जो दिन रहो, मैं कहती हूँ कि तुम शपथमें मुन होओ ।”

हुए था। इन लोगोंके बारेमें एकदम ही कुछ न जानता होऊँ, तो बात नहीं है। अतः वैष्णवकी कड़की उगारकी याद आ गई। किन्तु मन्त्रक करनेकी क्षम और प्राप्ति नहीं थी। गरीबके प्रावरिपत्तकी पटना जारी आओबनाके बीच ख-ख कर जैसे मुझे उम्मना कर देखी थी।

वैष्णवीने अचानक प्रश्न किया, “क्यों गुलार्, इस उम्रतक भी क्यमुच तुम्हने कमी किसीको प्यार नहीं किया ?”

“तुम्हारा क्या क्या होता है कमलकाया ?”

“मेरा क्या होता है, नहीं। तुम्हारा मन अलखी बैरागीका मन है—उदासीनका—लिखीकी तरह। तुम कमी किसी क्यवको नहीं मन्गेगे।”

मैंने ईसकर कहा, “लिखीकी उम्र तो अच्छी नहीं है कमलकाया, यह तो तुमनेमे बहुत-कुछ गाथी बैसी है। मेरा प्रेसपात्र लखमुचमें ही यदि कहीं कोई हो तो उसके काबोंमें इसकी मनक पड़नपर अमर्ष हो जायगा।” वैष्णवी ईसी, बोली, “हरकी कोई बात नहीं गुलार्, बालकमें यदि कोई होगी, तो मेरी बातका वह विश्वास नहीं करेगी और तुम्हारी मधुमिथित आबाकी भी वह व्यक्त नर नहीं पकड़ सकेगी।”

“तो फिर उसे कुछ किछ बातका ! हो न आकाकी, परन्तु उसके निकट तो बही ली खेमी।”

वैष्णवीने फिर हिसकर कहा, “ऐसा नहीं होय गुलार्। लखका स्नान छड़ कमी नहीं छे सकता। वे मन्त्र ही न समझे, कारण मन्त्र ही उनके किय, स्वर न हो तो भी उनके अन्तर निरन्तर अमुमुल ही खेगा। मिष्पाका काब तो देखते ही हो इसी तरह इस राखेन म जाने कियने लोग आये। वह पय जिनके किय कम नहीं है, उनकी लारी आका कड़की धारके लखकी खली बाखी तरह हमेशा ही अलग-अलग रही है, कमी एकन नहीं हुई।”

कुछ ठहर कर वह मानी अचानक मन ही मन बोध उठी, “वे रतने सम्यक तो पहुँचने नहीं, इसीलिए प्राणहीन निर्भीक मूर्तिकी निरर्षक सेवा करते करते उनका भी हो दिनमें ही हौक उठता है,—तोचते हैं कि वह किछ मोरके अन्ध-कारमें अपनेको दिन-रात ठगते हुए मरे जा रहे हैं। ऐसे लोगोंको देखकर ही तुम लोग हमारा उदाहण करना सीलने हो—पर मैं यह क्या प्यकर बातें बक रही हूँ गुलार्, इस लख अलखन प्रकाशकी एक बात भी तुम नहीं समझोगे। पर

परि तुम्हारी कोई ऐसी है, तो तुम उसे मने ही भूख खाओ, पर वह तुम्हें नहीं भूख लड़ेगी, और न कभी उसके आँखोंका पानी ही लूनेगा ।”

मैंने स्वीकार किया कि उसके बलव्यक्त प्रथम अंश मैंने समझा, पर अन्तिम अंशके प्रतिपादने कहा, “तुम क्या मुझसे यही कहना चाहती हो कमबख्ता, कि मुझको प्यार करनेका नाम ही है दुष्ट पाना ।”

“दुष्टकी बात तो नहीं करी गुनहारे करी है आँखोंके पानीकी बात ।”

“पर कमबख्ता, वे दोनों तो एक ही हैं किन्तु शम्शोंका हेर-नैर है ।”

बैम्पसीने कहा, “नहीं गुनहारे, वह दोनों एक नहीं हैं । न तो शम्शोंका ही हेर-नैर है और न मावका ही । औरतें न हलसे बरती ही हैं, और न उलसे बचना ही चाहती हैं । पर तुम समझोगे कैसे ।”

“बस कुछ मही समझूँगा तो फिर मुझसे वह सब करती ही क्यों हो ।”

“दिना कह रहा भी नहीं थावा भी । प्रेमकी वास्तविकताको लेकर मर्त्योंका एक सब अपनी बड़ाई किया करता है, सब सोचती हैं कि हमारी व्यति उनसे अलग है । तुम लोगोंके और हम लोगोंके प्यारकी प्रकृति ही भिन्न है । तुम लोग चाहते हो विस्तार और हम चाहती हैं सम्पर्कता, तुम लोग चाहते हो उल्लास और हम चाहती हैं शान्ति । जानते हो गुनहारे, कि प्रेमके नयेसे हम मीठर ही मीठर फिटना बरती हैं । उसके उम्मादसे हमारे हृदयकी चड़चड़ नहीं बढ़ती ।”

मैं कुछ प्रश्न करना चाहता था, किन्तु उसने मेरी ओर ध्यान ही नहीं दिया और आँखोंके आगेमैं सोचना आगे रक्खा, “वह हमारा स्वामी नहीं है, हमारा भगवान् भी नहीं है । वह दोड़-गूँघकी बचकता भिन्न दिन बढ़ती है, केवल ठीक दिन इस निश्वास छोड़कर आराम पाती हैं । ओ ओ नये गुनहारे, प्रेमकी बड़ाई बड़ी प्राप्ति, मित्रोंके भिन्न, निमरताकी अनेका और कुछ नहीं है । पर यही सब तुम लोगोंसे कोई कभी नहीं पती ।”

“यह निश्चयपूर्वक जानती हो, कि नहीं पती ।”

बैम्पसीने कहा, “निश्चयपूर्वक जानती हूँ । इसीलिए तो तुम्हारी बड़ाई मुझे गान नहीं होती ।”

आधप हुआ । कहा, “तुम्हारे निकट बड़ाई तो कभी नहीं की कमबख्ता ।”

उत्तरे कहा, “धन-भूतपर मही की, पर तुम्हारा वह उदासीन पैरंगी मन,

अभ्रमें इससे बढ़कर आईकारते मरा हुआ और भी कुछ है क्या ?”

“पर इन दो दिनोंमें ही तुमने मुझे इतना कैसे जान लिया ?”

“जान गई, क्याकि तुम्हें प्यार हो किमा है।”

सुनकर मन ही मन कहा, तुम्हारे हुआ और ओलोंके अभुञ्जीय प्रभेद इतनी देर बाद अब समझा है कमलकृता ! भावम होता है, अविभाम पूरा और रसद्वी अरावनाका परिणाम ऐसा ही होता है।

“प्यार किमा है, यह क्या सच है कमलकृता ?”

“हाँ सच है।”

“पर तुम्हारा जय-उप, तुम्हारा कीर्तन, तुम्हारी एत-दिनकी ठाकुर-सेवा,— इन सबका क्या होमा, क्याओ ?”

वैष्णवीने कहा, “तब ये सब मेरे किए और भी सब, और भी बार्बक हो उठेंगे। बसमे न गुत्ताई, सब-कुछ छोड़-छाड़कर दोनों जनों रास्तेपर निश्चल पड़ें।”

मैंने फिर हिम्माकर कहा, “यह नहीं होमा कमलकृता, कल मैं कल का रहा हूँ। पर जानेके पहले गौरके बारेमें जाननेकी इच्छा होती है।”

वैष्णवीने सिर्फ निमेषात छोड़कर कहा, “गौरके बारेमें ? नहीं, ठठे मुझेका तुम्हारा काम नहीं। सचमुच ही कल जाओगे ?”

“हाँ, तब ही कल जाऊँगा।”

सबमरके किए सत्य रह कर वैष्णवीने कहा, “किन्तु इस अभ्रममें यदि तुम फिर कभी जाओगे गुत्ताई, तो कमलकृताको न लोच पाओगे।”



इस नियममें सम्येह म का कि अब वहाँ एक सच रहना भी अधिक नहीं। पर ठली समझ आनों कोई भाइमें लड़ा होकर जीव बन्द कर हथपरेते निदेश करता है। कहता है ‘आओये क्यों ? यही लोचकर तो आये थे कि कल-सात दिन रहेंगे —रहो म। तबभीक तो कुछ है नहीं।’

रातको बिल्लेनेसर भेया हुआ सोच रहा था कि ये कौन हैं जो एक ही छतरे में बात करके एक ही बग टीक उठती रात देते हैं। कितनी बात क्याका सच है ? कौन क्याका अन्ता है ? विवेक, बुद्धि, मन प्रवृत्ति,—येसे ही जाने कितने नाम हैं, इनकी न आये कितनी आधुनिक व्याख्याएँ हैं, पर सबको आज भी

कोन निःसंशय प्रमाणित कर सका है ! जिसको सोचना है, कि अपना है, अपना
आकर बहीपर पर बढ़ानेमें बाधा क्यों डालती है ! अपने ही अन्दरके इस विरोध,
—इसका रोग क्यों नहीं होता ! मन करता है कि मेरा क्या जाना ही मेरस्कर
है, अन्य जाना ही कल्याणकारी है । तो फिर दूसरे ही क्षण ठन मनभी दोनों
आँसोंमें क्यों क्यों भर आते हैं ! बुद्धि, विवेक, प्रज्ञा, मन, इन सब बातोंकी
सृष्टि करके तभी सोचना क्यों रह जाती है ?

फिर भी जाना ही चाहिए, पीछे हटनेका काम नहीं पड़ेगा । और तो भी
कह ही । यही सोचने लगा कि इस जानेको कैसे संभल करूं । बचनका एक
पल्ला जानता हूँ वह है गायब हो जाना । बिनाभी बाणी नहीं होकर आनेकी
छुनी दिशाका नहीं कारणका प्रदर्शन नहीं, प्रगोचनका, — कर्तव्यका विस्तृत
विवरण नहीं लिखें मैं या और अब मैं नहीं हूँ, इस तरह घटनाके आविष्कारका
भार ठन कोशोंपर छोड़ देना जो पीछे रह गये हैं, यह । निश्चय कर लिया कि
अब सोना तो होगा नहीं, ठापुरजीकी संग्रहालयकी शुरू होनेके पहले ही अन्य
कारमें धीरे धीरे प्रगति कर दूंगा । पर दिक्कत है कि पंद्रह दशकका रूपका
छन्दे वेगलमेव कमकमकायका पाठ है । लेकिन ठने रहने दो । बहकतने, और
नहीं तो बर्माने बिना मेरा दूंगा, ठने एक काम यह भी होगा कि बहुतक उन्हें
और म देमी बहुतक कमकमकायको बाहर होकर यही रहना पड़ेगा, पक्ष-निर्णय
जानेका मुयोग नहीं मिलेगा । जो कुछ हमने मेरे कुरतेकी ओरमें पड़ है, वे कड़-
कटैतक पहुँचनेके लिए काफी हैं ।

बहुत रात इसी तरह कट गई । चूँकि बार-बार संकल्प किया था कि सोईगा
नहीं चापड इसी कारण न जाने क्या भी गया । पता नहीं कि कितनी देरक
सोया, पर अचानक ऐसा लगा कि स्थानमें गाना सुन रहा हूँ । एक बार रसाल
किया कि रातका गानावा चापड अमीरक समाप्त नहीं हुआ है, फिर सोचा कि
चापड प्रगोचकी संग्रहालयकी शुरू हो गई है, पर कौनके पक्षका मुगर्भित
हुनद निवार नहीं है । अगम्य अग्रितुम निद्रा दूट कर भी नहीं दूखी, आँसू
रोककर देगा भी नहीं या लफटा । किन्तु, जानोंमें प्रगोचकी सुरमें सीटे कष्टका
गारा भीमा आह्वान पहुँचा :

आगिय गौराव छाव, पंछी बन पाडे ।

रखनीकी अमृत मयी, दिनने पट ग्योले ॥

“गुसार्थी, और कितनी देखाऊ सोओगे ! उठो ।”

विष्णुनेपर लठ बैठा । मछरी उठाई, पूर्वकी शिखरी लुकी हुई है—
 धाम्नेकी आम्न-धाकाओंमें पुष्पित कवंग-मंझरीके कई बड़े-बड़े गुच्छ नीचेतक
 झर रहे हैं । उनकी संघर्षमेंसे दिखाई दिया कि व्याकाधमें कई बगल इसके बगल
 रंगका आम्न है, जैसे जैसे रातमें सुदूर ग्रामके अन्तमें आग लग गई हो ।—
 मनमें कहीं कुछ व्या-सी होने लगी । कुछ कमगीदर उड़ करके अपने व्यावाले-
 को खीर रहे हैं । उनके पेलोंकी फड़फड़ाहट बार-बार कानोंमें आने लगी ।
 ऐसा लगने लगा कि राशि काय हो रही है । वह नीकटस्थी, कुकुब्ज और स्वाभ्य
 पक्षियोंका देश है । मानो, यह उनकी राजधानी ‘ककुब्जा छत्र’ है और वह
 विष्णु बकुल-वृक्ष (मैमिषी) उनके जैन-देन और काम-काजका ‘बड़ा बाग़ार’
 है जहाँ दिनके बकुली मीठ देखाकर जवाब हो जाना पड़ता है । तरह-तरहकी
 शष्प, तरह-तरहकी माया और रंग-विरंगी पोशाकका बहुत ही विचित्र समावेश
 है । रातको अन्तारेके चारों ओरके वनमें डाक-डाककर उनके आगमित बड़े हैं ।
 नींद कुछ जानेकी आहट कुछ-कुछ पाई गई । उससे आत्म हुआ कि मानो
 हाथ-सुँह चोकर वे ठेकरी कर रहे हैं । अब खरे दिन खजनेवाले नाच-गानका
 मधोत्सव शुरू होया । वे सब कलकलके उत्साह हैं जो पड़ते भी नहीं और कल
 रत भी बन्द नहीं करते । खीर वैष्णवोंका कीर्तन घायर कभी बन्द भी हो
 क्या, परन्तु बाहर हल बज्जके बन्द होनेकी सम्भावना नहीं है । यहाँपर जेठे
 बड़े, मले-बुरेका विचार नहीं है । इच्छा और समय बाहे हो या न हो, गाना
 दुर्भे मुन्ना ही पड़ेगा । इस देशकी, आत्म होता है, यही व्यवस्था है, बड़ी
 निबम है । बाह व्याया, कल छापी होपहरी-मर पीठके बॉलके वनमें हो
 पपीठके उष्ण गलेकी ‘पिवा-पिवा’ पुकारकी अभिधात सेइते मेरी विधा
 निद्रामें कापी विज हुआ था । इसपर मेरी ही तरह सुम्ब हुआ कोई कल-काक
 नदी-किनारेके बूझपर खीर भी कठोर कण्ठसे बार-बार उनका तिरस्कार करके
 भी उन्हें चुप नहीं कर सका था । मान्य जगता था कि इस देशमें मीर नहीं
 हैं नहीं तो उनके इस जलबके अन्तारेमें आ पहुँचनेपर तो मनुष्य टिक हो नहीं
 पाता । तो जो भी हो दिनका उपवास अब भी शुरू नहीं हुआ था । बाहर
 और भी बोझ-सा निर्धन हो चक्या, किन्तु इसी समय गल रात्रिका संकल्प बाह
 था मया । परन्तु, अब चुपचाप तिसक पकनेका भी मौका नहीं था, महरिपीकी

लठकपाते काम बिगड़ चुका था। नाराज होकर बोध, “मैं ‘गोपाळ’ भी नहीं हूँ और मेरे बिछीनेमें जाऊ भी नहीं हूँ। इस समय आपी रातको सोतेते जगन्नेकी मध्य करो तो क्या करूँ तो ?”

देवकीने कहा, “रात क्यों है गुजारे, गुमराही तो आज सुबहकी गादीसे बज्जटसे जानेकी बात थी। सुंदराय था जो, मैं चाप तैयार कर रखी हूँ। नदाना नहीं। आदत नहीं है, बीमार पड़ सकते हो।”

“हाँ, बीमार पड़ सकता हूँ। सुबहकी गादीमें जब मेरी दृष्टा होगी चका चकैगा, पर यह तो बताओ कि मुझे इस निरसमें इतना उल्लाह क्यों है ?”

उसने कहा, “और किसीके उठनेके पहले मैं तुम्हें बड़े रास्तेतक पहुँचा जो जाना चाहती हूँ गुजारे।” उसका चरण स्वयं नहीं दिखाई दिया, पर बिजुरे हुए बाकीकी ओर देखकर कम्बेकी इतनी कम रोपनीमें भी यह जान गया कि वे सीते हैं, झानते निबटकर देवकी तैयार हो गई है।

“मुझे पहुँचाकर फिर आभसमें ही ध्येय आभोगी न।”

देवकीने कहा, “हाँ।”

रपोंकी उस छोटी-सी देखीकी बिछीनेर रग उसने कहा, “यह रहा गुमराय बैग। रास्तेमें होधिवाही रगना, —करये एक बार देस को।”

एकएक मुठ करनके लिए रग न रुत। फिर कहा, “कम्बड्डा, गुमराय इस रास्तेर जाना मिप्या है। एक दिन गुमराय नाम था उध, आज भी वही उध हो, —अप भी नहीं बदल सकती हो।”

“क्यों, बताओ।”

“तुम भी कहो कि मुझसे करये गिननेके लिए क्यों कहा। गिन सकता हूँ यह क्या तुम सब समझी हो। जो सचते कुछ और हैं और करते कुछ और हैं उन्हें कपरी करते हैं। जानेके पहले मैं जो गुमराईकीसे सिद्धपत कर चकैगा कि आभसमें ल्यातेने गुमराय नाम काट है। तुम देवकी-दरके लिए कम्बड्ड हो।”

बह पुन रही। मैं भी वणमर मोन रहकर बंजा, “आज सुबह मेरी जानकी दृष्टा रही है।”

“नहीं है। तो मोही देर और तो बा। उठनेस दुसरे गबर देन

“पर तुम अभी क्या करोगी।”

आत्मके बाहर खड़ी दूर पर खड़े का बगीचा है। बने आवाहल आत्म-बनके मंदारों का है। सिद्ध अन्धकारके कारण ही नहीं बल्कि अपने पदोंके डरोंके कारण पदही रेखा बिजुल हो गई है। बैचरी आग-आगों ओर मैं लौटे-लौटे चला, ता हार अपने बग कि कहीं खैर देर न पड़ जाय।

कहा, “कमलका, रास्ता था नहीं मूढोंकी।”

“नहीं, अपने कम आग ता दुम्हारे बिंदु रास्ता परवानकर बचना पड़ेगा।”

“कमलका एक अनुपम रसोपी।”

“कौन-सा अनुपम।”

“बहलें तुम और कहीं नहीं आओपी।”

“आनेसे दुम्हाण क्या मुकमान है।”

कहा नहीं दे कहां, तुम हो गहा।

“दुम्हाणें ठाढ़ने कहा है कि ‘ह कपी करने कर खेड बाधो, किनेने खेडो दूर सी मर कर करनेका लो दिया है, उनें तुम सब क्या समझली हो।’—
दुम्हाई, दमको तुम कहकसे पडे आओगे, और जब यही आपद एक मारसे मारा डार न लगे,—क्यों।”

“का पता, परसे मुह ता हाने बा।”

बैचरीन बचाव नहीं दिया, कुछ देर बाद गुनगुनाकर गान करी—

बगिचदास कहे मुन बिनादिनी, मुख-मुख दोनों माह।

मुखक कारण प्रीति करे जा, मुख भी ता दिय अह॥

रजनर कहा, “इतके बाद।”

“इतके बाद और नहीं बाद।”

कहा, “तो कुछ और गाओ—”

बैचरीने देते ही मूढ मरमै गाहा—

बगिचदास कहे मुन बिनादिनी, प्रीतिषों बात न माह।

प्रीतिक कारण प्रान गैबाहै, आगिर प्रीति ही पाहै॥

रज बार उन्के रकनेर बोला, “इतके बाद।”

बैचरीने बचाव दिया, “इतके बाद और नहीं है, यही बाद है।”

रकने एक नहीं कि दो ही है। दोनों चुप हो गे। बहुत देखा देने बारी

कि द्रुपदहोते नकदीक जाकर और कुछ कहकर इस अन्धकार-मयपर उठका हाथ फेरकर पड़े। जानता हूँ कि वह नाराज नहीं होगी, बाधा नहीं देगी, पर किसी भी तरह पैर नहीं चले, मुँहसे भी एक शब्द नहीं निकला। जैसे जब खा या जैसे ही धीरे धीरे चुपचाप बाज़ारके बाहर आ पहुँचा।

एस्तेके किनारे बोलेंके बीते पिया हुआ आधमका पूर्येका एक बगीचा है। ठाकुरबीकी हैनिक पूजाके लिए बहोते पूज आते हैं। खुदी हुई अगरमें अन्धकार नहीं है पर अन्धकार भी उठना नहीं हुआ है। फिर भी देख कि अन्धकार किसे हुए जमेकीके कृत्यके साथ बगीचा मानो सपेय हो रहा है। ठाकुरके पते सपे हुए मुझे जमेकी काक्यमें तो पूज नहीं हैं, परन्तु, उल्लेख प्राप्त ही कहीं कुछ रजनीमन्दाके पूज अन्धकारमें पूज रहे हैं किन्ती मधुर मन्त्रों से उस मुटुकी पूर्ति हो गई है। और सबसे अधिक मनका हुआ केनेबाध्य का बीजका दिव्य। एस्तेके अन्तमें इस मुँहके आशोकमें पश्चाने जाते ये एक-दूसरेसे मिडे हुए छत्रके छत्र छत्रके साथ—किन्ती देहभार पूज के और जो तरहसे पैरों हुई काक ओल्लेते बगीचेकी दिशाओंकी और मानो एक रहे थे। पहले कभी इतने लंबे रास्ता छोड़कर नहीं उठा था, वह समझ हमेशा निराश्रय बाढ़ाकी अचेतनामें बह जाता है। बता नहीं सकता कि आज किन्ता अन्धकार कम। पूर्वके उत्तम दिशामें अतिरिक्तका आश्रय मिल रहा है, और उल्लेख महिमासे साथ आकाश शांत हो रहा है। पर अल्लेखकी और पत्थरों, शोभा और सौरभसे और अवाचित कृत्यसे परिभास सम्मुखका अन्धकार,—श्री मित्रकर देखा गया कि जैसे वह रात्रिकी समाप्तप्राय वाक्पात्रिनि विद्याकी अमुक भाषा हो। कल्या, ममता और अवाचित आश्रयसे मेरा समस्त अन्तर फेर भाषे ही परिपूर्ण हो उठा, लक्ष्य कह उठा, “कल्या कल्या, जीवनमें हमने अनेक दुख-दर्द जाने हैं, प्रार्थना करता हूँ कि इस बार हम मुन्नी होमो।”

कैरकी पूर्येकी इतिहासों रात्रिकी अन्धकार काका कर ठाकुरकी बाढ़ अन्धकार को छोड़ रही थी कि उल्लेख आश्रयसे औरकर देखा और कहा, “अन्धकार हमें दो बरा मया गुठार।” अपनी बात जाने ही कानोंमें न जाने कैसी पैदागी लग रही थी, उल्लेख उल्लेख लक्षितप्राय अन्धकार मन ही मन बहुत अग्रतिम हो गया। कोई अन्धकार नहीं रहा, अन्धकारकी उल्लेखके लिए एक अर्थहीन ईश्वरी श्रेष्ठ भी ठीक

तब एक नहीं हुई, अन्तर्गत्तु हो रहा ।

बैष्णवीने भीतर प्रवेश किया, चाय ही मिली । पूछ लोकेते हुए उसने बुद्ध ही कहा, "मेरे सुलभ ही हूँ गुहार । किन्तु पाद-पथोंमें अपनेको निवेदन कर दिया है वे शरीरका कभी परिचाय नहीं करेंगे ।"

उन्नेह हुआ कि कर्म काशी साफ नहीं है, पर यह कहनेका चाहत भी नहीं हुआ कि स्वयं करके कहो । वह मृदु स्वरसे गुनगुनाने लगी—

गलेमें इमाम भाजिकोंकी मज्जु माछाये डालूँगी,
और कानोंमें नखकुंडल, इयाम-शुण-यसके धारूँगी ।
इयामके ही अनुराग-रैंगे, पीत पट सुन्दर पहनूँगी,
योगिनी बन करके बन बन, और पथ पथपर भटूँगी ॥
कहे बहुनाथवास—

भीत रोक्ता पड़ा । कहा, "बहुनाथवासको रहने दो, उधर हृदयीकी आवाज सुन रही हो, लोभोगी नहीं ।" उसने मेरी ओर देखकर मृदु हाससे स्तिर झुक कर दिया—

धर्म और कर्म सभी जावें, नहीं बरही हूँ मैं इससे ।
कहीं इस जन्ममें पड़कर, हाम था बैरूँ भीतमसे ॥

"अच्छा, नये गुहार, जानते हो कि बहुत-से मठे आदमी औरतोंका गाना नहीं सुनना चाहते, उन्हें बहुत दुःख लगता है ।"

मैंने कहा, "जानता हूँ । किन्तु मैं उन 'मठे बरतों'में नहीं हूँ ।"

"तो बाबा बाककर मुझे रोका क्यों ?"

"तब तो धामद आखी झुक हो गई है—मुझसे न रहनेसे उसमें कभी रह आगयी ।"

"यह भिन्ना छज्जा है गुहार ।"

"छज्जा क्यों है ?"

"क्यों, तो तुम भी जानते हो । पर यह बात तुमसे कही किन्तु कि मेरे न रहनेपर ठाकुरजीकी सेवामें लक्ष्मण ही कभी हो सकती है । इसपर क्या तुम विचार करते हो ?"

"करता हूँ । तुमने कही नहीं कमलका, मैंने बुद्ध अपनी बाँसोंसे

देता है।”

उसने और कुछ नहीं कहा, न जाने कैसे अन्वयमनस्क भावसे सचकायत वह मेरे मूर्खकी ओर टाकती रही और उसके बाद फूट छोड़ने लगी।

इतिहास भर अपनेपर बोझी, “वह, अब और नहीं।”

“गुणव नहीं बुने।”

“नहीं, उन्हे हम नहीं छोड़तीं वहींसे मयबान्को निवेदन कर देती हैं बबो, अब पकें।”

ठक्कन हो गया है। पर वह मठ प्रान्तके एकान्तमें है,—इसको कोई क्या आवा-जाता नहीं, इसलिए तब भी वह पब जन-हीन या और अब भी है खकत-बकते एक बार फिर वही प्रश्न किया, ‘तुम क्या तबतुब वहति क्या जायायी।’

“बार-बार यह बात पूछनेसे तुम्हीं क्या काम होगा गुहार।”

इत बार भी कथा न दे सका, किन्तु अपने-आपसे पूछा, तब तो है, बार बार यह बात क्यों पूछता हूँ।—इससे मेरा काम।

मनमें खेदकर देता कि इस बीच सभी काम खरब दिनक काममें क्या सं है। उत बड़ मजदूरीकी आवाजसे मस्त होकर हुआ ही किसी मचाई की मजदूम हुआ कि वह मजदूर-आवती नहीं थी किन्तु ठाकुरजीकी निशान मंग करनेक बाबू था। वह उन्हें ही सुझाव है।

हम दोनोंको अपने-अपने देता, पर किसीके भी देखनेमें कुछ नहीं था कम-उम्र होनेके कारण किन्तु पचा एक बार मुल्कपार्ह और फिर मुँह नीचा क किया। वह ठाकुरजीकी माका लूँछी है। उसके पास इतिहास रखकर कमक ब्याने उसने कोतुबसे उर्जन करके कहा, “हँसी क्यों कमजुही।”

किन्तु उसने मुँह खर नहीं उठाया। कमकब्याने ठाकुरजीके कमरेमें प्रवेश किया, और मैं भी अपने कमरेमें वासिक हुआ।

स्नान और बाहार यद्यपि और यथासमय सम्पन्न हुआ। धामकी माझीरे मेरे जानेकी बात थी। पैरवीकी ओरने गया तो देता कि वह ठाकुरजीके कमरेमें है और उन्हें लज्जा रही है। मुझे देखते ही बोली, “नवे गुहार, बरि आये हो तो कुछ मेरी सहायता भी करो। पचा शिरहर्द केकर पड़ी है और किसी सरसरी रोटी बहिनीको एकएक गुजार आ गया है, क्या होया कुछ समझते

नहीं आता। बाकसी रंगके इन दो कपड़ोंमें चुन्नट बाक हो न गुसार्।”

अतएव ठाकुरके कपड़ोंमें चुन्नट बाकने बैठ गया। उस दिन बाना य हो लका। दूसरे दिन भी मही और उसके बादवाले दिन भी नहीं। मैं बड़े खरी बैयबीके पूछ तोड़नेका साथी बन गया। प्रयागमें, मध्याह्नमें, सन्धाको,—कुछ-कुछ काम वह मुझसे करा ही जाती है। इसी प्रकार स्वप्नकी तरह दिन कटने लगे। सेवामें, सहायतामें, आनन्दमें, आराधनामें, पूजोंमें, गन्धमें, कीर्तनमें, पक्षियोंके गानमें,—कहीं भी कोई छिन्न नहीं, फिर भी अशिष्ट मन बीच-बीचमें सज्जा हो मूर्तना कर उठता है कि यह क्या सिक्काइ कर रहे हो! बाहरके तारे सम्बन्ध तोड़कर इन बोहे-से निर्बीज सिक्केनीके पीछे वह कैठा पामकम्पन कर रहे हो! इतनी बड़ी आत्म-बचनमें मनुष्य भीति कैसे रहता है! फिर भी वह अन्धक जगता है, ‘बाऊँ बाऊँ’ करके भी पैर नहीं बढ़ा पाता। इस तरह मूर्खीया कम है, फिर भी इस समय अनेक लोग अकम्पन हो रहे हैं। गौहर सिर्फ एक दिन आया था, फिर नहीं आया। उसकी लोब-लवर देनेका समय भी नहीं निकाल पाता! वह मेरी दसा अच्छी हुई।

छसा मन भय और विचारसे भर गया,—वह मैं कर क्या रहा हूँ! कंगडि-होपसे क्या एक दिन वह लज्जित मान बैठेगा! स्थिर किता, कम नहीं, पाहे कुछ भी क्यों न हो, कम यह जगह छोड़कर मुझे मागना ही पड़ेगा।

हर रोज रातके अन्तमें बैयबी आकर जगा देती है। प्रयागीके स्वरमें बैयबी कविबोंका नींद उड़ा देनेवाला वह गीत भक्ति और प्रेमका किटना लकड़क आवेदन होता है। इन्हात् उत्तर नहीं देता, कान जगाकर सुनता रहता हूँ। जॉल्लोंके कोनोंमें आँसू आ बाना चाहते हैं। मछरी उठाकर जब वह सिक्की और दरवाजा लोब देती है तब नाराज होकर उठ बैठता हूँ, और तब दो कपड़े बदलकर ताब चक देता हूँ।

कई दिनोंकी आदतकी बजहसे आज अपने-आप ही नींद खुल गई। कमरेमें अचकार है। एक बार ऐसा जगा कि रात अभी लम्ब नहीं हुई है, परन्तु फिर लदेह हुआ। बिछोना छोड़कर बाहर आया,—देखा हूँ कि रात कहीं है, सवेरा हो गया है। किसीके लहर देते ही कमलकटा आकर लड़ी हो गई। उसका ऐसा अलगाव अपलुत चेहरा इसके पहले नहीं देखा था।

दरते पूछ, “गुहारी लबीसत क्या अच्छी नहीं है।”

उसने म्यान हँसी हँसकर कहा, "गुस्साई, आब तूय भीत मये ।"

"क्या मो कैसे ।"

"तरीबत आब बैसी लम्बी नहीं बलपर महीं उठ लकी ।"

"तो आब पूछ तोड़ने कौन गया ।"

जॉमनके एक ओर एक अपमरे तगरके पेड़में कुछ बोड़े-स पूछ ज़नो ये, उन्होंनेको दिखाकर बोली, "इत बल तो किसी तरह इन्हीसे काम बल आबया ।"

"पर ठाकुरके गलेकी माका है ।"

"माका आब न पहना लईगी ।"

मुनकर मन न जाने कैसा हो गया,—उन्हीं निर्वीज सिद्धियोंके लिए ! कहा, "नहाकर मैं तोड़ आया हूँ ।"

"तो क्या मो पर इतने छेरे मचा नहीं लझेये । बीमार पड़ आजीये ।"

"बड़े गुस्साईबी नहीं दिखलाई देते ।"

बैजवीने कहा, "ये तो यहाँ महीं, परतों अपने गुददेखते मिम्ने मराहीय गये हैं ।"

"कब लौटेंगे ।"

"बह तो पता नहीं मुगार्ह ।"

इसने दिनोंसे मठमें रहते हुए भी बैरागी हारिकाचरके साथ परिचय नहीं हुई, कुछ तो मेरे अपने सोचते और कुछ उनके निर्मित स्वभावके कारण । बैजवीके मुँहसे मुनकर और अपनी आँखोंसे देखकर जान गया हूँ कि इस आदमीमें न कपट है, न अनाचार और न मास्सरी करनेका भाव । उनका अधिक चांच समय अपने निर्बन कमरेमें बैजव बर्ममन्थाके साथ व्यतीत होता है । इन लोगोंके बर्म-मलम न मेरी आस्था है न विश्वास । पर इत व्यक्तिकी बात इतनी नम्र, देखनेकी मंगी इतनी स्वच्छ, गम्भीर तथा निष्ठा और निश्चये अर्द्धिध ऐसी भरपूर रहती है कि उनके मत और पथके बिम्ब आश्रयना करनेमें किर्क संकोच ही नहीं पक्षि गुप्त होता है । अपने आप ही यह समझमें आ जाता है कि यहाँ तर्क करना बिल्कुल निष्फल है । एक दिन एक मामूली-सी हथौडा करने पर वे मुसुराते हुए इत तरह चुपचाप दिग्गने रह गये कि कुम्हाके बारे में मुँहसे और शब्द ही न निकले । उनके बाहते ही मैं यथासाध्य उमते बचकर बस हूँ । फिर मैं एक दुर्गुण बना रहा । हस्त थी कि अपनेके पहले इतनी मारिबीसे बि-

घनेपर भी निरवश्वित्यन उसके अनुशीलनमें निमग्न रहनेपर भी, चित्तकी शान्ति और देशकी निर्मलताको अक्षुण्ण बनाये रहनेका रहस्य उनसे पूछ आऊँगा। पर वह गुप्ताय इस यात्रामें अब छायाब नहों भिरेगा। मन ही मन सोचा कि फिर कभी यदि जाना हुआ, तो बेका अपराध।

बैष्णवीके मठमें भी ठाकुरजीकी मूर्तिको अग्र तौरपर प्राणधर्म के अन्तर्गत और कोई स्थान नहीं कर सका, पर इस आश्रममें वह रीति नहीं है। ठाकुरका एक वैष्णव पुण्यरी बाहर रहता है, आज भी वह आकर यथाशीति पूज्य कर गया। पर ठाकुरकी सेवाका भार आज बहुत-कुछ मुझपर आ पड़ा। वैष्णवी बतलाती जाती है और मैं सब काम करता आता हूँ, पर यह-यहकर सारा हृदय तिक हो उठता है। मुझपर यह क्या पागलपन सवार हो रहा है। आज भी जाना कन्दा रहा। अन्तेको धरपर यह कहकर समझाया कि जब हमने दिनोंसे नहीं हूँ, तब इस विपत्तिके समय इस जागीको कैसे छोड़ आऊँ ? संसारमें कृतकृता मामलों में तो कोई बीज है !

और भी दो दिन कट गये, किन्तु अब और नहीं। कमकठता स्वरूप हो गई है, पछा और कस्ती-सरस्वती दोनों बहिनोंकी तत्परता भी टूट हो गई है। शारिकाबाबू कल अग्रको लौट आये हैं, उनसे विश्व मँगाने गया। गुप्तार्थीने कहा, “आज आमीने गुप्तार्थी ! अब कब आमीने ?”

“यह तो नहीं जानता गुप्तार्थी !”

“लेकिन कमकठता तो रो-रोकर अबमयी हो आयगी।”

यह जानकर मन ही मन बहुत विगड़ा कि इनके कानोंमें भी हमारी बात पहुँच गई है। कहा, “यह क्यों रोने लगी ?”

गुप्तार्थीने अब हैतकर कहा, “आमद तुम नहीं जानते ?”

“नहीं।”

“उतका स्वभाव ही ऐसा है। किसीके पले जानेपर वह थोड़में अबमयी हो जाती है।”

यह बात और भी लुपी लगी। कहा, “चित्तकी आदत हो थोड़ करनेकी है यह तो करेगा ही। मैं उसे थोड़ कैसे सका हूँ ?” पर यह कहा और उनकी आँखोंकी तरफ देखकर मुँह फेर ही था कि देखा, मेरे पीछे कमकठता लड़ी है।

शारिकाबाबूने कुम्भित स्वरमें कहा, “उत्तर नाराज न होना गुप्तार्थी, मुझ

है कि ये सब तुम्हारी सेवा नहीं कर सकें और बीमार पड़कर तुमसे बहुत काम किया अनेक कष्ट भी दिये। वह कम मुझसे इसके लिए स्वयं ही दुःख प्रकट कर रही थी। और फिर वैष्णव-वैरागियोंके पाठ सेवा-सकार करने अवक है ही क्या। किन्तु अगर कभी तुम्हारा वहाँ जाना हो तो मिलारियोंको दर्शन दे आना। वे आओगे न तुम्हारे ?”

फिर हिचककर बाहर निकल आया, कमककसा वहींपर बैठी ही लड़ी रही। पर अकरमात् यह क्या हो गया ! बिना सेनेके वक्त न आने किठना क्या करने और तुमनेकी कसना कर सकती थी।—सब नष्ट कर दी। अनुभव कर रहा था कि जिसकी दुर्बलताकी म्यानि अन्तरमें धीरे-धीरे लपित हो रही है किन्तु स्वप्नमें भी नहीं सोचा था कि हँसतावा हुआ अचानक मन पेली अयोमन सस्रवाते अपनी मर्वादा नष्ट कर बैठगा।

नवीन का पहुँच। वह गौहरकी ललाटमें आया है, क्योंकि वह कभी अस्तक पर नहीं लेटा है। वहा अचरम हुआ, “वह क्या नवीन, वह तो वहाँ भी अब नहीं आया।”

नवीन किधेर निबलित न हुआ। बोझ, “तो किसी वन-बंगलमें घूम रहे होंगे, महाना-साना बन्द कर दिया है, अब कहीं सँरके काटनेकी लहर मिलेगी तो निबलित हुआ आया।”

“पर नवीन, उसकी ललाट करना तो करती है।”

“मासूम है कि करती है, पर ललाट कहीं कहीं। बाबू, बाटलमें घूम घूमकर मैं अपनी आन तो दे नहीं सकता। पर वे क्यों हैं ? एक बार उनसे और पूछ लें।”

“वे ? कौन ?”

“वही कमककसा।”

“पर उसे क्या मासूम होगा नवीन ?”

“वे नहीं आनती ! तब आनती हैं।”

और ललाट बहत म करके मैं उल्लेखित नवीनको मठके बाहर छे आया। वहा, “बाटलमें नवीन, कमककसा कुछ नहीं आनती। कुछ बीमार होनेके कारण वह तीन-चार दिनोंसे अलाइके बाहर भी नहीं निकली।”

नवीनने बिनाच नहीं किया। माराज होकर कहा, “नहीं आनती ! पर

सब जानती है। बेवफाी कौन-सा मंजर नहीं जानती !—वह क्या नहीं कर सकती ! यदि कहीं वह नबीनके फस्ते पड़ी होती तो उसका बॉल-मैर मरफाना और कीर्तन करना सब बाहर निकाल देता। खोजने बापके इतने रूप-पैसे यान्ही जादूते उड़ा दिये ।”

उसे शान्त करनेके लिए कहा, “कमलधरा रुपये लेकर क्या करेगी, नबीन ? बेवफाी है; मरुमी खती है, गाना गाकर, मौल मौलकर ठाकुर-देवताकी सेवा करती है। सो दफे दो मुडी खाती ही तो है और क्या। इतकिय मुसे तो ऐसा नहीं क्या कि वह रुपोंकी निवारिणी है नबीन ।”

नबीन कुछ ठंवा होकर बोध्य, “अपने किए नहीं—वह तो हम भी जानते हैं। देखनेमें भी वह मझे बरखी बड़की कैती लगती है। बेवफा ही बेवफा और बेसी ही बातचीत। बड़े बाबाजी भी बोली नहीं हैं, पर उन्होंने बेवफाियोंका पूरा एक छुन्दका-छुन्द को पाक रखा है। ठाकुर-सेवाके नायपर उन कोयोंको हल्ला-दूही और हू-भी रोक बाहिये। नवनबाँद बरखतीके मुँह पर कुलकुल सुनी है कि अलादके नाम बीत बीषा बमीन करीबी गई है। कुछ भी नहीं खेया बाबू, जो कुछ है सब एक दिन कैरगियोंके पेटमें चबा जायगा ।”

कहा, “पर वह कमलाह शान्त सब नहीं। और तुम्हाय वह नवन बरखतीं भी तो कम नहीं है ।”

नबीनने औरत स्वीकार कर कहा, “नर ठीक है। वह बूँत ब्रह्मचर बहा छोटैबाक है। पर कहिए, धियात कैसे न करै ! उस दिन लामम्बाह से ही बड़केके नाम इत बीषा बमीन दान कर दी। बहुत मना किबा पर नहीं सुना। मानता हूँ कि बाप बहुत रस गया है, पर बाबू, इस तरह बौटनेसे कितने दिन चलेगा ! एक दिन क्या कहा, जानते हैं ? कहा, हम चन्दोरके बंसके हैं, चन्दोरी तो हमसे कोई छेन नहीं लेगा ! जीबिए, सुनिए इनकी बातें ।”

नबीन चब्य गया। एक बातपर प्मान गया। वह उछने एक बार भी न पूछा कि मैं कितकिए इतने दिनोंते मरुमें पड़ा हुआ हूँ। नहीं जानत्य कि पूछता तो मैं क्या करता, पर मन ही मन शर्मिन्दा हुआ। उससे ही और एक खबर मिली कि काहिदात बाबुके बड़केका प्माह कक भूमपायसे हो गया। सत्तारित हाटीनफ्र मुसे प्माक ही न रहा।

नबीनकी बातोंपर मन ही मन विचार करते करते अकलमत् ।

एक खिन्न उठ लड़ा हुआ,—बैष्णवी किसलिए कभी जाना चाहती है। कहीं उस मोटी मीठीबाजे कुम्ह आरम्भीके बरसे तो नहीं, जो कभी बदककर पाये हुए पतितका दावा करता है। और वह मोहर ! मेरे यहाँ रहनेके सम्बन्धमें ही धावद इसीलिए बैष्णवीने उस दिन लक्ष्मीपुत्र कहा था कि गुहार, मैं अगर तुम्हें पकड़कर रखे रहूँ तो वे नाशक नहीं होंगे। नाशक होनेवाले आरम्भी वे नहीं हैं। पर अब वह क्यों नहीं आता ! उसने अपने मन ही मन जाने क्या सोच किया है। संसारमें मोहरकी आसक्ति नहीं है, अपना करनेको भी कोई नहीं है। अपना-मेला, मन-बोझ तो उसके लिए ऐसे हैं यानों उन्हें कुम्ह देनेपर ही उसे बौन मिलेगा। प्रेम अगर उसने किया भी हो तो इस बरसे वह मुँह जोककर धावद किसी दिन करेगा भी नहीं कि कहीं पीछे किसी अपराधका स्पर्श न हो जाय। बैष्णवी वह जानती है। उस अनतिशय बाधासे विरहित प्रपञ्चके निष्कल विच-हाते इस घात और लम्बको मूछे हुए मनुष्यको बचानेके लिए ही धावद वह बहति माय जाना चाहती है। नवीन सत्य गया है और मैं बहुलके भीचे बैठकर उस दूरी बेबीके ऊपर अनेक बैठे हुए लीन रहा हूँ। बड़ी जोककर देखी। यदि पाँच बजेकी ड्रेन पकड़ना है तो अब और देर नहीं की जा सकती। पर हर रात न जाना ही इस तरह धावदमें दालित हो गया था कि जल्दीसे उठकर जक देनेके लिए आज भी मन पीछे हटने लगा।

चाहे क्यों भी रहूँ, पैंटके बहु मासके समय पहुँचकर अज प्रथम करनेको बाध किया था और आगे हुए मोहरको जोख जाना मेरा कर्तव्य है। इतने दिनोंतक अनावश्यक अनुपेक्ष बहुत माने हैं, पर आज अब उम्मा करव निश्चयन है तब मान्य करनेको कोई नहीं। देखा पया था रही है। करव जाकर बोली, “तुम्हें एक बार दीदी तुझ रही हैं, गुहार !”

फिर झेड आया। आँगनमें लगे होकर बैष्णवीने कहा, “कलकसे पहुँचनेमें तुम्हें रात हो जायगी, नने गुहार। ठाकुरजीका पोड़ा-या प्रधाद लया रला है, कम्मेमें आभो।”

रोजकी ही तरह लावधानीसे तैयारी की गई थी। बैठ गया। बहों छानेके लिए मगाने और मोर शकनेकी प्रथा नहीं है, आवापक होनेपर सौम छेना होता है। बाकी नहीं छोड़ा गया।

ज्येन्ने के बच वैष्णवीने कहा, “नये गुहारै, फिर आओगे न ?”

“तुम रहोगी न ?”

“तुम बटाओ, मुझे कितने दिन तक रहना होगा ?”

“तुम ही बताओ कि कितने दिनों बाद मुझ यहाँ आना होगा ?”

“नहीं, वह मैं तुम्हें नहीं बताऊँगी ।”

“न बताओ, पर एक दूसरी बात का जवाब दोगी, ओओ !”

इस बार वैष्णवीने कहा ईश्वर कहा, “नहीं, वह भी मैं न दूँगी । इस समय तुम्हारी जो इच्छा हो सोच ओ गुहारै, एक दिन अपने आप ही उसका जवाब मिल जायगा ।”

कई बार हम शायदोंने जवानपर आज्ञा पाया, कि जब तो बच नहीं है कमजोरी, कब आऊँगा,—पर किसी भी तरह कह नहीं पाया । वही कहा कि “जाया हूँ ।”

पता निकल आकर लकी हो गई । कमजोरी की देलादेखी उसने भी हाथ जोड़कर नमस्कार किया । वैष्णवीने उसने मारुज होकर कहा, “हाथ जोड़कर नमस्कार क्या करती है बकसूँरी, पैरों की धूल लेकर प्रणाम कर ।”

इस बातसे मानी मैं चौंक पड़ा । उसके मुँह की ओर नजर करते ही ऐसा कि उसने दूसरी ओर मुँह फेर दिया है । तब और कुछ न कहकर मैं उनका आग्रह जोड़कर बाहर बच दिया ।

९

आज के-वच कमजोरी पहुँचनेके लिए निकल पड़ा । उसके बाद इच्छे भी आशा शुभसम है बर्माका निर्वाचन । बर्मासे ईश्वर आनेका शायद समय भी न होगा और प्रयोजन भी न होगा । शायद वह आया ही अस्थिर जाना हो । गिनकर देता, वह दिन बाकी है । इस दिन जीवनके बिहाबसे कितने से हैं ! तथापि, मनमें सन्देह नहीं रहा कि इस दिन पहले ओ यहाँ भया या और आज ओ विरा सेकर आ रहा है, दोनों एक नहीं हैं ।

बहुतोंको ऐसेके साथ कहती हुए सुना है कि यह कितने छोटा या अमुक यदि ऐसा हो जायगा,—अर्थात्, अमुकका जीवन मानी दुर्लभ और अल्पमूल्य की तरह उसके अनुमानके पंचाममें ठीक-ठीक गिनकर बिना हुआ है,

उसका ठीक न मिलना सिर्फ अनिष्ट ही नहीं, बहुत भी है,—मानों उनकी बुद्धि के हिसाब-किताब के बाहर दुनिया में और कुछ है ही नहीं। वे नहीं जानते कि संसार में कैसा विभिन्न मनुष्य हैं नहीं हैं, बसिक इसका पता लगाना भी कठिन है कि एक-एक मनुष्य भी कितने विभिन्न मनुष्यों के रूप में स्थापित हो जाता है,—परोपर एक क्षण भी तीक्ष्णता और तीक्ष्णता में समस्त जीवन को अधिकृत कर लेता है।

×

×

×

×

धीरे-धीरे एक-एक कर-करके उन-उन रास्ते के चक्कर लगाता हुआ स्थिति का रहा था—बहुत-कुछ उसी तरह जिस तरह बचपन में पाठशाळा को आया करता था। ड्रेन का बच्चा नहीं जानता, उसकी जगह भी नहीं है,—सिर्फ यह जानता है कि वहाँ पहुँचने पर कोई-न-कोई ड्रेन, जब भी मिले, मिल ही जायगी। चकटे-चकटे एकाएक ऐसा लग कि वह रास्ते के पदचाने हुए है, मानों कितने दिनों तक कितनी बार इन रास्तों से आया-गया है। पहले वे बड़े थे, जब न जाने क्यों छोटी-सी और छोटे हो गये हैं। अब यह क्या, यह तो खो-खोया हुआ बाग है। अब, वही तो है। और यह तो मैं अपने ही जीवन के क्षणों के मुहल्लों के किनारे से आ रहा हूँ। उसने न जाने क्या-क्या अपने-आपके मारे इस हमल्लों के पेड़ों के ऊपर की जागी रस्ती बाँधकर आत्महत्या कर ली थी। की थी वा नहीं, नहीं जानता, पर प्रामा और वह योंनी-सी तरह यहाँ भी यह अनुभूति है। पेड़ रास्ते के किनारे है, बचपन में इससे नजर पड़ते ही स्तर में कटि उठ जाते थे, और बन्द करके एक ही रौद्र में इस स्थान को पार कर जाना पड़ता था।

पेड़ पैदा ही है। उस बच्चा ऐसा लगता था कि वह इससे पेड़ का वह मानों पछाड़की तरह है और माया आकाश से आकर उड़ता रहा है। परन्तु आज ऐसा कि उस बैचारे में गर्व करने कायक कुछ नहीं है, और जिन अन्य हमल्लों के पेड़ होते हैं पैदा ही है। अनन्त प्रामा के एक और एकाकी निष्पत्ति लड़ा है। दीर्घ में अन्तिम काशी बराबा है, आज बहुत क्यों बार के प्रथम लक्ष्य में उसने माने बन्धु की तरह मौल भिन्नता कर मजाक किया, कही मेरे बन्धु, बैठे हो, दर ही नहीं लगता।

मैंने पाठ आकर परम स्तर के साथ उसके शरीर पर हाथ डेरा। मन ही मन

बचन ही हैं माई । हर क्यों जगेगा, तुम तो मेरी बचपनके पड़ोसी हो,—
शास्त्रीय ।

सन्ध्याका प्रकाश बुझता था रहा था । मैंने बिना छेते हुए कहा, भग्य
य था जो भवानक मुखाकात हो गई, अब जाता हैं बन्धु ।

भेजीबदा बहुत-से बगीचोंके बाद बरा लुब्धी जगह है । अम्यमनस्क होता तो
भी पार कर जाता, किन्तु सहसा अनेक दिनोंकी भूखी हुई-सी परम्परा परिचित
बहुत ही सुन्दर मीठी गन्धसे पीक पड़ा—इधर उधर निहारते हो नजर
गई,—बाह । यह तो हमारी उसी बघोदा शैष्यकी आकृत पृथ्वीकी गन्ध
बचपनमें इनके किए पछोटाकी कितनी आरक्ष-मिश्र नहीं की थी ! इस
वेक पेड़ इधर नहीं होता, क्या माझम कहाँते जाकर उसने इसको अपने
मनके एक कोनेमें जगया था । देही-मैदी और गार्दीबाजी, बूँदे आरामी
उसकी शकल थी । उस दिनकी तरह आज भी उसकी वही एकमात्र सज्ज
ता है और ऊपरके कुछ थोड़े-से हरे पत्तोंके बीच बैठे ही थोड़े-से कुछ लफेंद
हैं । इसके नीचे पछोटाके स्वामीकी समाधि थी । शैष्य ठाकुरको हमने
देला था, हमारे कमरे पहले से स्वर्गधाम सिंघार चुके थे । उनकी छोटी
मनिहारीकी वृक्षान तक उनकी बिबहा ही बचती थी । वृक्षान तो नहीं थी,
एक डकियाम बघोदा छोटी-छोटी आरुसियाँ, कपिल्य, नारं, महावर, ठेकके
मसे, काँबके सिन्धोने, दीनकी बंधी इत्यादि भरकर घर-घर घूमकर बेचा करती
। इसके सिंघार उसके पास मजबूती पकड़नेका सामान भी रखा था । अविच
न, एक-एक थो-थो पैसेकी डोरियाँ और कटि । इन्हें खरीदने जब हम उसके
जाते, तो बहुत घूम मचाते । इस आकृतके पेड़की एक सुली डाकपर बनाये
र मिट्टीके आलेपर बघोदा सन्ध्याके समक हीपक जगती थी और पृथ्वीके किए
सज्ज करनेपर वह हमें समाधि दिखाकर कहती, “नहीं बच्चा, ये मेरे देवताके
हैं तोड़नेपर माराज होये ।”

शैष्यकी अब मही है, पता नहीं कि वह कब भर गई,—शाबर बहुत दिन
ही हुए । पेड़के एक किनारे और एक छोटे पत्तुतेपर नजर पड़ी, शाबर यह
छोटाकी समाधि होगी । बहुत सम्भव है कि शुदीर्ष प्रसीलाके बाद उसने भी
उके पास ही अपने किए थोड़ा-सा रक्षाम कर लिया हो । लूपकी कुरी हुई
ही जगह उर्वर हो जानेके कारण रिष्कू बह हो गये हैं और पेड़को अम-

गीदड़ोंने छा दिया है,—सँभलनेवाला कोई नहीं है।

एक ओढ़कर रोधनके उठ परिचित बूढ़े पेड़के पाठ आकर लड़ा हो गया।
 ऐसा कि घामको जलनेवाला वह शीपक नीचे पड़ा है और उसके ऊपरकी वह
 लाली दाढ़ आब मी मैली ही ठेकते काभी हो रही है।

मधोराका लोड-सा घर समीतक पूरी तरह टूटा नहीं है,—तरस-छिन्नपर
 और बीर्ज-शीर्ष पूतका छप्पर दरवाजेको टुककर भीगा पड़ा हुआ आब मी
 आबनबते रखा कर रहा है।

बीस-पच्चीस वर्ष पहलेकी म आने कितनी रातें पाद आ गई,—बैठोंके
 घेरते पिछ हुआ किया-मुखा मधोराका आंगन, और वही छोटा-सा कमरा।
 उसकी आब वह टूटा है। पर इसके मी बहुत आवाज एक कदम बलु अब मी
 देखनेको बाकी थी। अकस्मात् ऐसा कि उसी परके दूरे छप्परके नीचेसे एक
 कंकाल-रोग कुत्ता बाहर निकला। मेरे पैरोंकी आबाजसे बकित होकर आबद
 उसने मेरे अनधिकार-प्रवेशका प्रतिवाद करना चाहा। पर उसकी आबाज
 इतनी क्षीम थी कि उसके मुँहमें ही रह गई।

कहा, "क्यों है, मैंने अभ्यास तो नहीं किया।"

उसने मेरे मुँहकी ओर देखकर न आने क्या सोचा और फिर दूँध दिखना
 शुरू कर दिया। मैंने कहा, "अब भी तु वही है।"

उसने प्रत्युत्तरमें सिर्फ़ दोनो मस्किन आँसू खोककर अवन्त निरप्यवकी तरह
 मेरे मुँहकी तरफ़ देखा।

इसमें शक नहीं कि वह मधोराका कुत्ता है। फूझदार रंगीन किनारीका
 मल-पड़ा अब मी उसके गलेमें है। मैं समझ ही म लका कि उस निश्चिन्तान
 रस्मीके एकान्त छेदका बन वह कुत्ता आब मी इस परिस्थित कुटीमें क्या
 लाकर भीक्ति है। गुराँहोंमें आकर छीन-साट कर जानेका बार तो उसमें है
 नहीं, आदर मी नहीं है, और स्वागतके साथ मेक रखनेकी धिम्मा मी उसे नहीं
 मिली। कियाज मूला और अपभूला रहकर वहीं पड़ा-पड़ा बैचाव घायद
 उसीकी राह देख रहा है, जो उसको एक दिन प्यार करती थी। लांछा होमा
 कि कहीं-न-कहीं गई है, एक-म एक दिन बीटकर आयेगी ही। मन ही मन
 कहा, बरी क्या पेला है। इस मायायाको निककुल ही पीछ छोड़ना संसारमें क्या
 रहना आसान है।

जानेके पहले छप्परकी छेपमेंसे एक बार भीतरकी ओर दृष्टि डाली । अन्य कारमें और तो कुछ भी दिखाई न पड़ा, बीबारपर चिपकी हुई कुछ तसवीरें नजर आ गईं । बाबा-पानीसे छेकर नाना आदिके देवी-देवतामोंतकी तसवीरें हैं । कपड़ेके नये धातोंमेंसे निकाल-निकालकर यथोदा इन्हें तैयार करती थी और इस तरह वह अपना तसवीरोंका शौक मिटाती थी । याद आया कि बचपनमें इनको अनेक बार मुग्ध रहिसे देखा है । बारिखसे भीगकर, बीबारकी मिट्टीसे बिगड़कर, ये आब भी किसी तरह टिकी हुई हैं ।

और पड़ी हुई है पासके ही छींकेपर बैठी ही दुर्दशामें वह रंगीन हँडिया जिते देखते ही मुझे वह बात याद आ गई कि इसमें उसके आँखोंके बंदक रहते थे । और भी हफ्त ठहर क्या-क्या पड़ा था, अन्यकारमें पता नहीं पड़ा । वे सब चीजें मिलकर प्रायःपणसे मुझे न जाने किस बातका इंगित करने लगीं, पर उस प्रायःसे मैं अनजान था । कुछ ऐसा क्या कि मज्जानके एक कोनेमें मानों किसी मृत शिशुका कियेना-बर है । पर-पड़खीकी नाना दूरी-दूरी कीलोंसे यन्त्रपूर्णक सज्जमे हुए इस भुज संस्कारको वह छोक गया है । आज उन चीजोंका आदर नहीं है, प्रयोजन भी नहीं, आँखोंसे बार-बार झाड़ने-पोंछनेकी बख्तर भी नहीं—पड़ा हुआ है चिह्न बंझाक, इसलिये कि किसीने उसे मुक्त नहीं किया है ।

वह कुछा कुछ देखक लाय-लाय आवा और उठर गया । बरतक दिखाई पड़ा तपतक बेबाय इस ओर टकरकी जगाने लड़ा देखता रहा । उसके लायका यह परिचय प्रथम भी है, और अन्तिम भी । फिर भी वह कुछ आगे बढ़कर बिदा देने आया है । मैं आ रहा हूँ किसी बन्धुहीन, बन्धुहीन प्रवालके किनारे, और वह डीठ आया आने आन्धकारपूज निरासे दूरे हुए मज्जानमें । दोनोंके ही संस्कारों ऐश कोई नहीं है जो यह देखते हुए प्रतीक्षा कर रहा हा ।

बागीचेके पार हो जानेपर वह आँखोंसे ओसल हो गया, परन्तु पोंब ही मिनरके इन अमामे लायीके किन्तु हृदय भीतर ही भीतर रो उठा, ऐसी दशा हो गई कि आँखोंके आँसू न रोक सका ।

बसते-बसते सोच रहा था कि ऐश क्यों होता है ! और किसी दिन वह सब देखता तो शायद कुछ विशेष लक्षण न आता, पर आज मेरा हृदयाकाश मेरीके मारते मारतार हो रहा है—जो उन ओलोंके गुणकी जगह ^ चापलोंमें बरत पड़ना चाहते हैं ।

खेचन पहुँच गया। भाग्य अकस्मात् था, उसी वक्त गाड़ी मिला गई, कचकचे के निवासस्थानपर पहुँचनेतक क्या-क्या बातें न होगी। टिकट खरीद कर बैठ गया और उसने छोटी देकर यात्रा शुरू कर दी।—खेचनके प्रति उसे योह नहीं, कबल खोलीसे बार-बार धूमकर देखनेकी उसे जरूरत नहीं।

फिर वही पाद भार्गव—मनुष्यके जीवनमें इस दिन कितने-से हैं, फिर भी कितने बड़े हैं।

कल सुबह कमकसता अकेली ही फूल तोड़ने जावगी और उसके बाद उसकी छारे दिन पकनेवाली देह-सेवा शुरू हो जयगी। क्या मासूम, इस दिनके राखी नये गुहारोंको मूँहमें उसे कितने दिन बगी।

उस दिन उसके कहा था, 'मुन्ने ही तो हूँ गुहारें। कितने पाद-पर्वोपर अपने आपको निवेदन कर दिया है वे बासीकर कभी परिणाम नहीं करेंगे।' तो, यही हो। ऐसा ही हो।

बचपनसे ही मेरे जीवनका कोई कस नहीं है, बचपूँर्वक किसी भी चीजकी कामना करना मैं नहीं जानता,—सुख-दुख-सम्पत्ती मेरी चारबा भी अस्मग है। त्वारि इतनी उम्र कर गई किन्हीं दूरीका अनुकरण करनेमें,—दूरोंके विद्यालय और दूरोंका दुष्म वामीक करनेमें। इसलिये कोई भी काम मेरे हाथ जल्दी उख निर्धारित नहीं होता। बुनियाते दुर्बल मेरे चारे संचय और चारे उपयोग थोड़ी ही दूर बचते हैं और ठोकर खाकर रास्तेमें हो बूर-बूर हा बचते हैं; उन समी कहने लगते हैं, 'आकली है, किसी कामका नहीं।' धावद हलैकिये उन किजम्मे बेधमियोंके अलाइमें ही मेरा अन्तरवासी अवर्धित कम्पु अटकुट जवा कर्म मुझे बर्चन दे गया, मैंने बार-बार नायक हाफर हूँ। फिर किश और उसने बार-बार स्मित हासके हाथ दिव्य दिव्यकर न बचने क्या इच्छा किया।

और वह बेभरवी कमकसता। उसका जीवन भारी प्राचीन मेक्स कवि निरुद्धे औनुर्मीका गीत है। छन्दोंमें गेल नहीं, व्याकरणमें भूँठे हैं, भाषामें भी अनेक छुट्टियाँ हैं, पर उसका विचार तो उस ओरसे यही किया था कस्य। भारी उषीका दिवा दुष्म कीर्तनका सूर है,—कितने मर्ममें पैठा है, उसे ही उसका फल चमत्ता है। वह भारी मोधुर्कि जाकाशकी रंगभिरंगी तन्वीर है। उसका माम मही, लता नहीं—कलाशास्त्रके ल्योंके अनुसार उसका परिचय देना भी विजम्बना है।

मुझसे कहा था, 'जबो न गुहार, बहोते पक्ष हैं, गीत गाते गाते पक्ष ही पक्षपर दोनोंके दिन कट जायेंगे।'

उसे कहनेमें तो कुछ नहीं लगा, वह वह मुझे लटका। मेरा नाम रक्सा है उसने 'नये गुहार।' कहा, 'असल नाम तो मैं मुँहसे निकाल नहीं सकती गुहार।' उसका विश्वास है कि मैं उसके विगत-जीवनका बन्धु हूँ। मुझसे उसे डर नहीं, मेरे पास रहते हुए उसकी साधनामें बिग्न नहीं आ सकता। वैरागी शारिकावासीकी वह शिष्या है, मालूम नहीं उन्होंने उसे किस साधनासे विभिन्न काम करनेका मन्त्र दिया है।

एकाएक राजकुमारीकी याद आ गई और उसकी उस कठोर चिट्ठीका स्मरण आ गया जो स्नेह और स्वार्थके मिश्रणसे भरी हुई थी। तो मैं जानता हूँ कि इस जीवनके पूर्व विरामपर वह मेरे लिए रोष हो गई है। शायद वह अपना ही दुःख है। किन्तु उस शून्यताको भरनेके लिए क्या करी मैं कोरूँ है। सिङ्कीके बाहर अन्धकारको ताकता हुआ चुपचाप बैठा रहा। एक-एक करके न जाने कितनी रातें और कितनी पड़नायें याद आ गईं। भिकारके आबोजनके लिए लड़ा किया हुआ कुमार सारथका वह तन्मू, वह दक-दक और अनेक बरोंके बाद प्रवासमें उस प्रथम साक्षात्के दिनकी सीत काजी ओंछोंमें उसकी वह विराम-विमुक्त दृष्टि। जिसे जानता था कि मर गई है, जिसे वह पान नहीं सका,—उस दिन अन्धकारके पक्षपर उठीने कितनी अग्र-आकुल विनयी की थी और अन्धमें कुछ निराशाका वह कैसा सौम्य अमिमान था। रास्ता रोककर कहा था, 'जाना चाहते हो इसीलिए क्या मैं तुम्हें जाने दूँगी। देखो, कैसे जाते हो। इस निदेशमें यदि कोई विपत्ति आ पड़ी, तो कौन देखमाक करेगा। वे वा मैं ?'

इस दृष्टि उसे पहचाना। वह और ही उसका हमेशाका सच्चा परिचय है। जीवनमें वह उससे फिर कभी न भूल्य,—इससे उसके निकट कभी किसीको अन्नादिति नहीं मिली।

रास्तेके एक किनारे मरनेको पड़ा था कि नींद दृष्टनेस ओंसें लोभकर देखा हूँ कि वह छिछाने बैठी है। वह तारी बितारें उसे लँकर ओंसें बन्द कर ले गया। यह घर उसका है, मेरा नहीं।

गौतमके मरानमें आकर बीमार पड़ गया। बहो

पूछा, “अच्छे हैं बाबूजी !”

“हाँ तुम्हरी बात, अच्छा है । तुम अच्छे हो ।”

प्रभुचरणों फिर उठने बैठा ही नमस्कार किया । तुम्हरी मुँगेर बितेका है, जलका कुम्भी, ब्राह्मण होनेके नाते वह बराबर गंगाजी रोहिसे मेरे पैर बूझ प्रणाम करता है ।

हमारी बातचीतकी बग़लसे छायाह और भी एक हिन्दुस्तानी नौकरकी नौद कुछ गई, रतनके ओरसे बग़लनेके कारण वह बैचारा हक्का-बक्का हो गया । बिना कारण वृत्तोंको डरा-बमका कर ही रतन इस बग़लनेमें अपनी सर्वांश कायम रखता है । बोला, “अच्छे आये हो, लाजी लोठे हो और रोटी लाते हो, तम्बाकूतक बिजममें लबाकर नहीं रत लकठे ! आओ बरही—” वह आदमी नबा है, डरते बिजम लबाते चौक गया । ऊपर सीढ़ीके छामनेवाला बराबरा पार करनेपर एक बहुत बड़ा कमरा मिला, गैरके ठगलक मकानसे आच्छेकित । बायें ओर कापेट बिज हुआ है, उसके ऊपर फूकदार बग़ल और हो-बार तकने पड़े हैं । पास ही मेरा बहुमलक अस्पन्त प्रिय हुआ और उसके बोझी ही बुरस मेरे लरीके बग़लसे मलमली लीपर साबधानीसे रते हुए हैं । ये राजकमलीने अपने हाथसे बुने थे और पछासमें मेरे एक कम्मदिनके अन्तरपर उप्पार दिये थे । पासका कमरा भी सुख हुआ है, पर उसमें कोई नहीं है । कुछे दरवानेसे एक बार लौककर देला कि एक ओर नई लरीहो हुई लाटपर बिछैना बिजा हुआ है और बूली ओर बेसी ही मई लौटिसर लिके मेरे ही कपड़े डेने हैं । गंगामयी बानेसे पहले ये सब तैयार हुए थे । बाह भी न थे, और कमी काममें भी नहीं आये ।

रतनने पुकारा, “मौ !”

“अपटी है,” कहकर राजकमली लामने आकर लही हो गई और पैरोंकी पूछ छेकर प्रणाम करके वाली, “रतन, बिजम तो मर का, तुसे भी इबर कई दिनोंसे बड़ी लकलीक थी ।”

“लकलीक कुछ भी नहीं हुई मौ । राजी-सुधी हन्ने पर लोय लाया, यही मेरे लिए बहुत है ।” कहकर वह नीचे पला गया ।

राजकमलीको नई औलोंसे देना । लरीमें कप नहीं लमाता । उत दिनकी निपारी पार आ गई । इन कई बग़लके कुल-खेकके औली-रुधनमें नहाकर मानी

उठने नया रूप धारण कर लिया है। इन चार दिनोंके इस नये मकानकी व्यवस्थासे पकित नहीं हुआ, क्योंकि उसकी सुव्यवस्थासे पेड़-तछेका बाघ-स्थान भी सुन्दर हो उठता है। किन्तु राजकुमारीने अपनी-आपको भी इन चार दिनोंमें मिठाकर छिसे बनाया है। पहले वह बहुत गहने पहनती थी, बीचमें तब लोह सिंघे थे,—मानी सम्पासिनी हो। लेकिन आज फिर पहने हैं,—कुछ थोड़े-से ही,—पर देखनेपर ऐसा लगा मानो वे अविद्यम कीमती हैं। फिर भी चोटी स्यादा कीमती नहीं है,—मिथकी चाड़ी,—बालो पहर वस्त्र पहननेकी। माथेमें आँखकी किनारीके नीचेसे निकलकर छोटे-छोटे बाल गालोंके इर्द-गिर्द हल रहे हैं। छोटे होनेके कारण ही बाबद ने उसकी आला नहीं मानते। देखकर अवाक हो रहा।

राजकुमारीने कहा, “इतना क्या देख रहे हो।”

“तुमको देख रहा हूँ।”

“नहीं हूँ।”

“देख ही तो क्या रहा है।”

“और मुझे क्या क्या रहा है, जानते हो।”

“नहीं।”

“इच्छा हो रही है कि खनके पिछम तैयार कर जानेसे पहले ही अपने दोनों हाथ तुम्हारे गलेम बांध दूँ। बाक देतेस करा करोगे बख्खो।” कहकर हँस पड़ी। बोली, “उठकर बाहर तो नहीं बैठ दोगे।”

मैं भी हँसी न रोक सका। कहा, “बाककर देख ही ओ न। पर इतनी हँसी —कहीं मौम तो नहीं ला बी है।”

छीड़ियोंपर पैरोंकी आनाक सुनाई दी। मुदिमान् रतन करा आरते पैर पटकता हुआ खड़ा रहा था। राजकुमारीने हँसी दबाकर करा बसिसे कहा, “पहले रतनको चमे जाने दो, फिर तुम्हें बताऊँगी कि मोग सार् है या और कुछ लाया है।” पर कहते-कहते अचानक उसका गला घायी हो गया। कहा, ‘इत बल जान लगाहमें चार-पाँच दिनको मुझे अकेला छोड़कर तुम पहुँची घायी कराने गये थे। मायूम है, ये चार-दिन मेरे किस तरह कटे हैं।’

“मुझे क्या मायूम कि तुम अधानक ला जाओगी।”

“हाँ बी हों अधानक तो करोगे ही। तुम क्या जानते थे।”

करनेके लिए ही पड़े गये थे ।”

छानने आकर दुपका विवा, बोझ, “बात तब हुई है मौं, बाबूका प्रसाध पट्टेगा । रसोइयेसे खाना खानेके लिए कहा हूँ । रातके बारह बज गये हैं ।”

बाबू सुनकर राजकस्मी व्यस्त हो गई, “रसोइयेसे नहीं होगा, मैं खुद खाती हूँ । तुम मेरे सोनेके कमरेमें थोड़ी-सी जगह कर दो ।”

खानेके लिए बैठते बरत मुझे गंगायाटीके अन्तिम दिनोंकी बात बाबू आ गई । तब परी रसोइयाँ और बरी रतन मेरे खानेकी देख-रेक करते थे । राजकस्मीको मेरी खबर लेनेको बरत नहीं मिलता था । पर आब इन जोगेसे नहीं होमा,—रसोइयाँमें खुर खाना होना । पर वह उसकी प्रकृति है, वह भी विद्वति । समझ गया कि कारण कुछ भी हो, किन्तु उसने अपनेको फिर पा लिया है ।

खाना कत्म होनेपर राजकस्मीने पूछा, “पूँटकी घाटी कैसी हुई ?”

“औँखोंसे नहीं देखी पर कानोंसे सुनी है, अच्छी तरह हुई ।”

“औँखोंसे नहीं देखी ? इतने दिनों फिर कहाँ थे ?”

विवाहकी खरी घटना लोकाकर सुनाई । सुनकर खजमरके लिए मात्सर हाथ रखते हुए उसने कहा, “तुम्हने तो अनाधू कर दिया । खानेके पहले पूँटकी कुछ उपहार देकर नहीं आने ?”

“मेरी तरफते वह तुम दे देना ।”

राजकस्मीने कहा, “तुम्हारी तरफते क्यों, अपनी तरफते ही खजमरीको कुछ भेज दूँगी । पर ये कहो, वह तो क्याया ही नहीं ?”

कहा, “मुगरीपुरके बाबाजीके आजमकी बाबू है ?”

राजकस्मी कहा, “है क्यों नहीं । वैष्णवियों बहिसि तो सुरसे-मुसलमें मीस भोगने खाती थीं । बचपनकी बातें तुम कह बाबू हैं ।”

“वहाँ था ।”

सुनकर जैसे राजकस्मीके शरीरमें कोई उठ आये, “उहाँ वैष्णवियोंके अनाथेमें ? जर मेरी मौं !—क्या कहते हो बी ! उनके निम्नमें तो मरकर गम्भी राहें सुनी हैं ।” कहकर वह सहसा ठब कण्ठते हँस पड़ी । अन्तमें हँसमें जोबब दबाकर बोली, “तो तुम्हारे लिए असाध्य काम कोई नहीं है । अराममें जो दृगरी मूर्ति देखी है,—भायेमें बरा, चारे शरीरमें स्त्राचकी भावा, हाथोंमें

पीतलके,—बह अतमुत—”

बात करन न कर सकी, हँसते-हँसते ओट-पोट हो गई। नाराज होकर उसे बैठा दिया। अन्तमें हिन्दी लेकर मुँहमें कपड़ा ठूँसनेपर जब बड़ी मुरिदलसे हँसी बकी तो बोली, “बैष्णवियोंने तुमसे क्या कहा ? अपटी नाकौंवाली और मोहनोवाली वहाँ बहुत-सी रखती हैं न बी—”

द्विर बैठा ही हँसीका फौवारा झूटनेवाला था, पर उत्सर्क कर दिया, “इस बार हँसनेपर ऐसा कहा बण्ड ईगा कि कल नौकरोंको मुँह न दिखा सकोगी।”

राजकर्ममी डरते दूर हट गई, और मुँहसे वाली, “बह तुम सरोखे बीर पुरुषों का काम नहीं है। खुद ही धर्मके गारे जाहर नहीं निकल सकोगी। संसारमें तुमसे ज्यादा भीड़ पुरुष और कोई है।”

कहा, “तुम कुछ भी नहीं जानती बम्मी। तुमने भीड़ कहकर भ्रमना की, पर वहाँ एक बैष्णवी मुझसे कहती थी आईकारे—बम्मी।”

“क्यों, उसका क्या किता था ?”

“कुछ भी नहीं। उसने मेरा नाम रखा था ‘नवे गुहार’। कहती थी, ‘गुहार, तुम्हारे उदासीन बैरागी मनकी अनेछा अधिक बम्मी मन दृष्टीमें और बूझा नहीं है।’

राजकर्ममीकी हँसी रुक गई, “क्या कहा उसने ?”

“कहा कि इस तरहके उदासी, बैरागी-मनके मनुष्यकी अनेछा अधिक बम्मी व्यक्ति बुनियातमें खोजनेपर भी नहीं थिकेगा। अर्थात् मैं दुर्जन बीर हूँ, भीर कहई नहीं।”

राजकर्ममीका चेहरा धम्मिर हो गया। परिहासकी और उसने ध्यान ही न दिया। बोली, “तुम्हारे उदासीन मनकी खबर उस हरामखोरीने कैसे पा ली।”

“बैष्णवियोंके प्रति ऐसी अधिक भाषा बहुत आपसिजनक है।”

राजकर्ममीने कहा, “यह जानती हूँ। पर उसने तुम्हारा नाम तो रखा ‘नवे गुहार’, और उसका अपना नाम क्या है ?”

“कनककटा। कोई-कोई प्रेमसे कमलीकटा भी करता है। लोग करते हैं कि वह बानू प्यनती है, उसका कौतन सुनकर मनुष्य पागल हो जाता है और वह जो चाहती है वही दे देता है।”

“तुमने सुना है ?”

“सुना है। भगन्तार।”

“उसकी उम्र क्या है।”

“अन पढ़ा है तुम्हारे ही बराबर होगे। कुछ व्यास भी हो सकती है।”

“देखनेमें कैसी है।”

“अच्छी। कमसे कम स्वयं तो नहीं कही जा सकती। भिन पपटी नाकों और गोदनाचक्रियोंको तुमने देखा है उनके बच्ची वह मही है। वह भल परकी बच्ची है।”

राजकुमारीने कहा, “मैं उसकी बात सुनकर ही समझ गई। जबतक तुम उसे लकड़ तुम्हारी सेवा करती थी न।”

“हाँ। मेरी कोई शिक्षायत्त नहीं है।”

राजकुमारीने एकाएक निश्वास जोड़कर कहा, “सो करने दो। जिस साधनासे तुमको पावा आया है उससे तो भगवान् भी मिल सकते हैं। यह वैष्णव-वैद्यियोंका काम नहीं है। मैं करने आउँगी न जाने कहींकी इस कमलकासे। छी।” कहकर वह उठी और बाहर चली गई।

मेरे मुँहसे भी एक तीर्थ निःस्राव निकल गई। थायद कुछ बेमन हो गया था, इस व्याससे होशमें आया। मोटे तर्कियोंकी सीख बिल छेदकर हुआ पीने लगा।

ऊपर एक छोट-सा मकड़ा घूम-घूम कर आक नुन रहा था। गैरके उलझक प्रकाशमें उसकी छाया बहुत बड़े बीमल अशुकी तरह मकानकी कक्षियोंपर पड़ रही थी। आलोकके व्यवधानसे छाया भी कई गुनी आवाको अतिरिक्त कर जाती है।

राजकुमारी खड़ेकर मेरी ही तर्कियोंके एक कोनेमें कोहनिवोंकी रक्त छत्रकर बैठ गई। हाथ लगाकर देखा कि उसके कपाळके बाक मीमे हुए हैं। थायद अभी अभी ओल मुँह जोकर आई है।

प्रश्न किया, “कस्सी एकाएक इस तरह कलकसे क्यों पड़ी आई ?”

राजकुमारीने कहा, “एकाएक पड़ा नहीं। उस दिनके बाद रात-दिन जोशीत पड़े मन न जाने कैसा होने लगा कि किसी भी तरह रहा न गया, हर लगा कि कहीं हार्ट-नेक न हो जाय,—इस अयमें फिर कभी जौलौंते नहीं देल गई,” कहकर उठने हुकियोंकी नयी मेरे मुँहसे निकालकर दूर चेंक सी।

कहा, “अप ठहरो । पुर्णैके मारे मुँहक बिलाई नहीं देता, ऐसा अन्धकार कर रता है ।”

हुकूमती नसी तो गई पर बहरेमें मुलीमें उसका हाथ आ गया ।

पूछा, “बंदू आकल क्या करता है ?”

राजकस्मीने कहा ग्यान हँसी हँसकर कहा, “बहुओंके आनेपर सब बदके को करते हैं, बरी ।”

“उससे क्या कुछ नहीं ?”

“कुछ नहीं तो नहीं करती, पर वह मुझे कुछ बचा देगा । कुछ तो सिर्फ हमीं दे सकते हो । तुम लोगोंके अन्धा आँखोंको समझका कुछ और कोई भी नहीं दे सकता ।”

“पर मैंने क्या कमी कोई कुछ दिया है कस्मी ?”

राजकस्मीने अनादरक ॥ मेरे कपड़ोंमें हाथ अन्धा और उसे पोंछकर कहा, “कमी नहीं । बल्कि, मैंने ही आकल तुमको न जाने किन्ने कुछ दिये हैं । अपने सुनके लिए लोगोंकी मर्जीमें तुम्हें देव बनाया, प्रहसिषा तुम्हारा अस्मान होने दिया,—उठका ही दण्ड है कि जब दोनों किनारे डूबे या रहे हैं । रेल तो रहे हो न ?”

हँसकर कहा, “कहाँ, नहीं तो ?”

राजकस्मीने कहा, “जो किसीने मस्तर पकड़ तुम्हारी दोनों आँखोंपर पराई डाल दिया है ।” फिर कुछ चुप रहकर कहा, “उठने पाप करके भी संसारमें मेरे जैसा भाग्य किसीका कमी देता है ? पर मेरी आधा उससे भी नहीं मिटी । न जाने कहाँसे आ कुछ कर्मका पागलपन और शायद आह कस्मी अपने देरीते डुकरा ॥ । गंगामाटीसे आकर भी चैतन्य नहीं हुआ, काँधीसे तुम्हें अनादरके साथ बिछा कर दिया ।”

उठकी दोनों आँखोंसे उप-उप आँख गिरने लगे, मेरे उन्हें हाथसे पोंछ देने पर बोली, “अपने ही हाथसे बिपका पीछा अन्धाया था, अब उठमें कल अग गये हैं । ला नहीं लकड़ी, सो नहीं लकड़ी, आँखोंकी नीब हराम हो गई, न जाने कैसे-कैसे अस्मद उर होने लगे किन्ना न सिर म पैर । गुदरेव सब मकानमें थे, उन्होंने कोई कबल जैसा हाथमें बाँध दिया, कहा, बेरी, कुछ एक ही आसनपर बैठकर तुमको दस हजार बार इस नामका कर करना ।

कर कहाँ सकी ! मनमें तो आग जल रही थी, पूजापर बैठते ही शान्ती झौलौंते झौलौंते की धार बह चकती,—उसी समय आई तुम्हारी चिट्ठी और तब इतने दिनों बाद रोग पकड़ गया ।”

“कितने पकड़ा,—गुस्सेबने ! इत बार धामर उन्हींने फिर एक कबज किस दिया !”

“हाँ जी, किस दिया है और उसे तुम्हारे गलेमें बाँधनेके लिए कहा है ।”

“ऐसा ही करना बाँध देना, अगर तुम्हारा रोग थपका हो जाय ।”

एकदमस्तीने कहा, “उस चिट्ठीको लेकर मेरे दो दिन कटे । कैसे कटे वह नहीं जानती । रतनको बुझाकर उसके हाथों चिट्ठीका ब्याज मेल दिया । बंगा स्नानकर अन्नपूर्णाके मन्दिरमें खड़े होकर कहा, ‘सौ, ऐसा करो कि समय रहते उनके हाथों चिट्ठी पहुँच जाय, मुझे आत्महत्या न करनी पड़े’ ।” मेरे मुँहकी ओर देखकर कहा, “मुझे इस तरह क्यों बोधा या बोझी !”

छूट्ट इस विश्वासका उत्तर न दे सका । इसके बाद कहा, “तुम बीरोंके हाथ ही वह सम्भव है । हम वह सोच भी नहीं सकते, समझ भी नहीं सकते ।”

“स्वीकार करते हो !”

“हाँ ।”

एकदमस्तीने फिर एक बार अजमरके लिए मेरी ओर देखकर कहा, “बाकई विश्वास करते हो कि यह हम लोगोंके लिए ही सम्भव है, पुरुष यथार्थमें ऐसा नहीं कर सकते !”

कुछ देरतक दोनों खाम रहे । एकदमस्तीने कहा, “मन्दिरसे बाहर निकल कर देखा कि हमारा प्यनेका कलमन लाहू लड़ा है । मेरे हाथ का बनारसी कपड़े बेधा करवा था । पूजा मुझे बहुत आहता था और मुझे बेटी कहकर पुकारता था । आश्चर्यान्वित हो बोझ, ‘बेटी, आप नहीं !’ मुझे मात्स्य था कि कलकत्तेमें उठकी वृक्षान है । कहा, ‘साहूजी, मैं कलकत्ते आऊँगी, तब किए एक मकान ठीक कर सकते हो !”

उत्तने कहा, “कर सकता हूँ । बंगाभी मुहस्तेमें मेरा अपना एक मकान है, जलेमें लपटा था । जाओ तो उत्तने ही कपड़ोंमें वह मकान दे सकता हूँ ।” वह धर्म-भीरु व्यक्ति है, उसपर मेरा विश्वास था, राजी हो गई । धरसर बुझाकर रुपये दे दिये और उत्तने रतन मिल कर दे सी । उसीके आदमियोंने यह ल

भीलें लीद ही हैं। छह-सात दिन बाद ही रतनको साथ लेकर यहाँ बसी आई। मन ही मन कहा, “मैं अन्नपूर्णा, तुमने सुझाव दिया की है, नहीं तो यह सुझाव कभी न मिलता। मुझे उनके दर्शन होंगे ही” और आशिर्य दखन हो गये।”

कहा, “पर मुझे तो बस्ती ही बर्मा जाना होगा बस्ती।”

“राजकस्मिने कहा, “ठीक है, तो बसो न। वहाँ अमरा है, सारे देशमें बुद्धदेवके बड़े-बड़े मन्दिर हैं,—उन सबको देख आऊँगी।”

कहा, “पर क्या पक्का देश है बस्ती, छवि-नायुप्रस्त लोगोके आचार विचार वहाँ नहीं पकड़े। उस देशमें तुम कैसे आओगी।”

राजकस्मिने मेरे कानपर मुँह रक्कड़ पीर-पीर न आने कहा, अन्धी तरहसे समझमें नहीं आया। कहा “क्या खोखले कहो तो सुनाई दे।”

राजकस्मिने कहा, “नहीं।”

इतके बाद यह अन्धरा धावसे उसी तरह पड़ी रही। किन्तु उसके उन्ध बन निःश्वास मेरे गलेपर और मेरे गालोंपर आकर पड़ने लगे।

१०

“अभी, उठो। कपड़े बदलकर हाथ-मुँह धो लो। रतन बाव किसे लगा है।”

मेरा उत्तर न देनेपर राजकस्मिने फिर बुझाया, “किन्तु दोर हो गई है,—अब कब तक सोओगे।”

करबट बदलकर मैंने अबस कण्ठसे कहा, “तुमने सोने ही क्या दिया। अभी-अभी तो सोया हूँ।”

इतनेमें कानोंमें आधमी कटोरीकी आवाज सुँपी। बिस्ते रतन मेजर रत्नकर शायद स्वप्नके सारे माग गया था।

राजकस्मिने कहा, “हाँ जी, तुम कितने बेइया हो। आधमीको छड़मूठ ही अप्रतिम कर सकते हो। खुद रातभर कुम्भकर्णकी तरह सोने, बस्ति मैं ही आग-कर पंखा करती रही कि गर्मिसे कहीं तुम्हारी भीड़ न कुछ आर और मुससे भी अब ऐसा कहते हो। बस्ती उठो, नहीं तो ऊपर पानी डाल दूँगी।”

उठ बैठा। मध्य दिर नहीं हुई थी तो भी खेरा हो गया था, लिङ्गिनों सुनी हुई थी। माताकाकके उक्त लिङ्ग प्रकाशमें राजकस्मिनीकी मरुभूत —

बिस्तार दी। उसका स्नान और पूजा-पाठ समाप्त हो चुका है, गंग-वाहके तड़िया पन्हेका जमाया हुआ लोख और जल पन्हनका टीका उसके मस्तकपर है, छरीपर नई जल बनारसी छाड़ी है, पूर्वकी सिङ्गीसे आई हुई घोड़ी-सी सुनहरी धूप गिराई होकर उसके मुँहकी एक तरफ पड़ रही है, उसके होठोंके कोनेमें लज्जकल कौतुककी हसी हुई हँसी है, फिर भी दुर्निम ओपसे सिङ्गी हुई मँटोके नीचे पंख ज्योंकी हडि मानों उड़कते हुए बागेगते जगमगा रही है,—देखकर आज भी आश्चर्यकी सीमा न रही। एकाएक उसने कुछ हँसकर कहा, “अच्छा बताओ तो कि कैसे इतने गौरसे क्या देख रहे हो !”

“तुम्हीं बताओ न कि क्या देख रहा हूँ ?”

राजकस्मीने फिर कुछ हँसकर कहा, “घायब वह देख रहे हो कि पूँछ मुझसे अधिक सुन्दर है या नहीं, या कमजबान देखनेमें ज्यादा अच्छी लगती है कि नहीं,—क्यों, है न वही बात ?”

“नहीं। वह बात ज्यादातर करीब लकड़ी है कि समझे बिनाकसे तो कोई तुम्हारे पाछक नहीं कटक सकता। इसके लिए इतने गौरसे देखनेकी आवश्यकता नहीं।”

राजकस्मीने कहा “अच्छा, कमकी बात जाने दो। पर गुलमें ?”

“गुलमें ? हाँ, वह मानना ही होगा कि वह निपयमें मयमेरकी सम्पादना है।”

“तुम्हींके बारेमें तो सुना है कि वह कीर्तन कर सकती है।”

“हाँ, बहुत बढ़िया।”

“वह तुम्हने कैसे समझा कि बढ़िया है ?”

“बाह—वह भी नहीं समझ सकता। विशुद्ध ठाक, कम, घुर—”

राजकस्मीने बाधा देकर पूछा, “हाँ जी, ठाक किसे कहते हैं ?”

“ठाक उसे कहते हैं जो बचपनमें तुम्हारी पीठपर पड़ती थी। बाद नहीं है।”

राजकस्मीने कहा, “क्या कहा,—बाद नहीं ! लूट बाद है। कल सायम्बाह भीड़ करकर तुम्हारी निन्दा कर जायी। कमजबानाने किहें तुम्हारे उदासीन मन का ही पता पाया है, घायब तुम्हारी बीछाकी कहानी नहीं सुनी।”

“नहीं, क्योंकि आत्मप्रपेठा खुद नहीं करनी चाहिए। वह तुम सुना देना।

पर उसका यत्न मीठा है, इसमें सन्देह नहीं।”

“मुझे भी सन्देह नहीं है।” कहनेके साथ ही एकाएक प्रचण्ड क्रोधसे उसकी ओर्लिंग बमक उठी। बोली “हैं बी, तुम्हें वह माना याद है? वही जिसे पाठशाळाकी छुट्टी होनेपर तुम माते से और हम सब मुख होकर सुनते थे—वही, ‘कहाँ गये प्राणोंके प्राण हे बुधोपन रे—ए—ए—ए—ए—’”

हैंसी बचानेके लिए उसने ओर्लिंगसे मुँहको छिपा किया, मैं भी हँस पड़ा। राजकस्मीने कहा, “पर माना बहुत ग्राह्यमय है। तुम्हारे मुँहसे सुनकर मनुष्योंकी तो कौन करे, गाय-बकड़ोंलकड़ी ओलोंमें पानी आ जाता था।”

रतनकी मैरोंकी ब्राइट मुनार्ह थी। अचिन्त्य ही दरवाजेके पास रुके होकर उसने कहा, “बापका पानी फिर बड़ा दिवा है मों, तैमार होनेमें देर नहीं लगेगी।” वह कह कम्मेके अन्दर बाहिर हो उसने बापकी कटोरी उठा ली।

राजकस्मीने मुससे कहा, “अब देरी मत करो, उठो, इस बार फिर बाप केँके अन्देपर रतन निद आगया। वह अत्यन्त सदन नहीं कर सकता, क्यों ठीक है न रतन?”

रतन भी बचाव देना जानता है। बोला, “मों, आपका बचस नहीं कर सकता। पर बाबूके लिए सब-कुछ खान कर सकता हूँ।” कहकर वह बापकी कटोरी लेकर चला गया। ओरमें वह राजकस्मीको ‘आप’ कहता था, अन्यथा ‘तुम’ कहकर ही पुकारता था।

राजकस्मीने कहा, “रतन लघमुख तुमको बहुत प्यार करता है।”

“मैं तो भी पसी क्याक है।”

“हैं। जब तुम काशीसे चले आये तो उसने सगका करके मेरा काम छोड़ दिया। मैंने नाराज होकर कहा, ‘रतन मैंने त्रि साथ ओ लकड़ किया, उठका क्या वही प्रतिफल है?’ उसने कहा, ‘मों, रतन नमकराय नहीं है। मैं भी बयाँ ब्य रहा हूँ, बाबूकी सेवा करके तुम्हारा अण बुका दूँगा।’ तब उसका हाव पकड़ लिया और अपना अग्रयण लीकार कर उसे शांत किया।”

कुछ ठहरकर कहा, “इसके बाद तुम्हारे विवाहका निमन्त्रण-पत्र आया।” बापा देकर कहा, “छड़ न बोको। तुम्हारी राय जाननेके लिए—”

इस बार उसने भी बापा देकर कहा, “हैं बी हों, मादूम है। नाराज होकर यदि विवाह करनेको मिल देती तो कर लेते न।”

“नहीं।”

“नहीं क्या। तुम लोग सब-कुछ कर सकते हो।”

राजकस्मी कहने लगी, “एतन न अपने क्या समझा, देख वह देला कि मेरे मुहकी ओर देखकर उसकी आँखें छमछमा आई हैं। उसके बाद जब ठठे चिट्ठीका जबाब आकमें आकनेके लिए दिया, तो बोधा, ‘मैं, इस चिट्ठीको आकमें न आक सऊँगा, इसे मैं खुद ले जाकर उनके हाथमें दूँगा।’ मैंने कहा, ‘अपने अपने लख करनेसे क्या फायदा होगा मर्या?’ एतनेसे इधर आँखें पोंककर कहा, ‘मैं, मैं नहीं जानता कि क्या हुआ है, पर तुम्हें देखकर ऐसा भावम पड़ा है कि मैंने पछाका किनारा कमजोर हो गया है,—इतना कोई ठीक नहीं कि पेड़-पत्तों और मकानोंको लेकर वह सब पानीमें डूब जाय। तुम्हारी ब्यापे मेरे सब कोई कमी नहीं है,—वह अपने तुम होगी तो भी मैं न ले सऊँगा। अगर बिबनाय बाचने छि उठकर देल दिया तो मेरे गौबकी शौबकीमें अपनी घाटीको बोड़ा-वा प्रताप मेक देना, वह हज्यार हो जायगी।”

“नार्द-केस किटना क्याना है।”

मुनकर राजकस्मीने होठ हवाकर सिर्फ हँस दिया और कहा, “अच्छ, अब देरी मत करो जाओ।”

होपहरको जब वह मोहन करने बैठी तो मैंने कहा, “कल तो मामूली छाड़ी परने हुए थीं, पर आज खेरे ही वह बनारसी छाड़ीका ठाठ क्यों है, क्याओ मन्थ।”

“तुम्हीं क्याओ न।”

“मैं नहीं जानता।”

“कर जानते हो। इस छाड़ीको पहचान सकते हो।”

“हो, पहचान सकता हूँ। मैंने बसति लरीकर मेरी थी।”

राजकस्मीने कहा, “उसी दिन मैंने बिचार कर दिया था कि अपने जीवनके लते महान् दिनपर इसे पहनूँगी,—और कमी नहीं।”

“इसीलिए आज पहनी है।”

“हो, इसीलिए आज पहनी है।”

हँसकर कहा, “किन्तु वह तो हो गया। अब उठार दो।” वह शुन हो

यी । कहा, “तुना है कि तुम अभी-अभी काटीपाट जाओगी ?”

“राजदरमीने आभयके साथ कहा, “अभी ? यह कैसे हो सकता है ? तुम्हें सिद्धा स्थिरकर सुझानेके बाद ही तो बुझी भिजेगी ।”

“नहीं, तब भी नहीं भिजेगी । छन कह रहा था कि तुम्हारा खाना-पीना प्रायः बन्द-सा हो गया है । सिर्फ कुछ बरा-सा खाया था और आजसे फिर ठप बात शुरू हो गया है । मासूम है, मैंने क्या खिर किया है ? अपने तुम्हें कहे शास्त्रमें रज्जंगा । अब तुम्हारी जो बुझी होगी, न कर सकोगी ।”

राजदरमीने प्रस्थान मुस्तसे कहा, “देखा हो तो बी जाऊँ महाशयजी, तब बूझ लार्डनी-योर्डनी, किसी रीतमें न पकना होगा ।”

“इसीदिव्य आज तुम काटीपाट मी न कर सकोगी ।”

राजदरमीने हाथ जोड़कर कहा, “तुम्हारे पैरों पकटी हैं, सिर्फ आज मरके दिव्य भाग कर दो, आजकल पुराने जमानेके नवाब-बादशाहोंकी लरीली हुई लौंडीकी तरह रहूँगी,—इससे अधिक तुमसे और कुछ भी न चाहूँगी ।”

“अच्छा, यह तो बताओ कि इतना दिनच क्यों ?”

“दिनच नहीं, यह लम्बा है । अपनी ओकात समझकर नहीं पकड़ी, और न तुम्हें मानकर ही पकड़ी, इसदिव्य अपराधके बाद अपराध करते-करते ताहस बढ़ गया है । तुम्हारे ऊपर अब उस परदेवाजी अमीका अधिकार नहीं है,—अपने ही घोरसे लो पैडी हैं ।”

देला कि उठकी औलोंमें आँख आ गये हैं । कहा, “केवल आज-मरके दिव्य अपनेकी अशा दे दो मेरे राजा, मैं मँकी अरली देल अऊँ ।”

कहा, “देला ही है तो कल पकड़ी आना । तुम्हीं तो कहा, कि कल सारी रात बगकर मेरी सेवा करती रही । आज तुम बहुत पकड़ी हुई हो ।”

“नहीं, मुझे कतई थकावट नहीं है । केवल आज ही नहीं, कितनी ही बार बीमारीके मौकोंपर देखा है कि जगातार रातोंके बाद रात जागनेपर मी तुम्हारी सेवामें मुझे कोई कष्ट प्रतीत नहीं हुआ । मैं मासूम मेरी समस्त थकावटको कैन मिटा देता है । कितने दिनोंसे देखी-देखीयोंको भूल गई थी, किसीमें मी मन न लग सकी ।—मेरे राजा, आज मुझे न रोको, जानेकी आज्ञा दे दो ।”

“तो अबो दोनों एक साथ चलो ।”

राजदरमीकी दोनों ओर आनन्दसे जमक उठी । बोली, “तो अबो, पर

“महाँ ! इसी मकानमें !”

“विराज नहीं होता, प्रमाण हो ।”

“प्रमाण दूँगी तुम्हें ! मुझे क्या गरज पड़ी है !”

“किन्तु श्रुति शास्त्रों ऐसी बातें नहीं किया करती ।”

“देखो, श्रेष्ठ न दिखाओ । इस तरह बार-बार ‘श्रुति शास्त्र’ कहकर पुकार दो, तो अन्धम न होगा ।”

“अच्छा आओ, तुम्हें कुछ कर दिया जबसे तुम स्वाधीन हुई ।”

राजकुमारी फिर ऐसी बोली, “मैं कितनी स्वाधीन हूँ, तो इस दण्ड मत्त नभमें अनुभव कर रही हूँ । कल रातें करत-करत जब तुम सो पड़े, तब अपने गलेसरे तुम्हारा हाथ हथकर मी ठठ बैठी । हाथ ब्याकर देख, तुम्हारा माथा पलीनेसे तर हो रहा है, औंठजैसे फलीया पोंछकर मी पंखा केकर बैठ गई । मन्द प्रकाशको तीव्र कर दिया; उस समय तुम्हारे निद्रामिथुन चेहरेकी ओर झुककर औंठें हथ ही न छोड़ी । इसके पहले कभी नकर नहीं आया कि यह इतना सुन्दर है ! अबतक क्या अच्छी थी ! फिर सोचा यदि यह पाप है तो फिर पुण्यकी मुझे व्यवस्थापकता नहीं और यदि वह अपराध है तो क्यूँमें जब मेरी धर्मपत्नी, जीवनमें यदि यह मिथ्या है तो ज्ञान होनेके पूर्व ही किसके कदमसे मैंने इन्हें करण किया था ?—जरे यह बुरा, पीछे क्यों नहीं ? तारा दूध बेला ही पड़ा है ।”

“अब महाँ पिमा आया ।”

“तो कुछ कर ले जाऊँ !”

“नहीं, वह मी नहीं ।”

“किन्तु कितने दुःख हो गये हो !”

“यदि दुःखा ही मी गया हूँ, तो बहुत दिनोंकी जखरेलाते । एक दिनमें ही मुबारना चाहोगी तो स्वर्ग मारा जाऊँगा ।”

बैरनाते ठठका चेहरा पीछा पड़ गया, कहा “अब गलती न होती । जो दण्ड मिथ्या है उसे जब नहीं भूँगी । यही मेरा सबसे बड़ा काम है ।” फिर कुछ देर मौन रहकर बीरे-बीरे कहने लगी ‘प्रातःकाल होनेपर ठठ आई । माथसे कुम्भकर्णकी निद्रा बखरी महाँ दूरली, करना कोमलता आया ही तो दण्ड था ! तब दरबानको साव केकर गंगा महाने गढ़, मातृस पड़ा, मामो मराने समस्त पाप को डाला है । पर आकर जब पूजा करने बैठी तब जाना कि वैदिक

जैसे ही नहीं खींच आये हो, रात ही आ गया है मेरी पूजा का मंत्र, आ गये हैं मेरे शिष्य तथा और शिष्य, और आ गये हैं मेरे भावपूजक मेरा । आज भी मेरी ओरसे एक बहने आया, किन्तु वे अभी दुःख को मसोकर निचोड़े हुए नहीं थे, बल्कि वह तो आनन्दसे ठमड़े हुए करनेकी भाव थी जिसने मुझे सब ओरसे विमोह कर दिया ।—बाऊँ, कुछ पक के बाऊँ ! पास बैठकर अपने हावसे लपटाकर दुर्दै पक लिखाये बहुत दिन हो गये । बाऊँ, क्यों ?”

“अच्छा बाबो ।”

“राजकस्मी बैठी ही हुत गतिसे चली गई । मैंने एक बार फिर सोंठ छोड़कर कहा, “कहाँ वह और क्यों कमलकण्ठा ।”

न जाने किधने कमलके समय हवायी नामोंसे पुनः इसका राजकस्मी नाम रक्ता था ।

दानी किन्तु समय काहीपाठसे बीते उस समय एक नौ बज गये थे । राजकस्मी स्नान कर और कपड़े बदलकर वह आवासे पास आ बैठी । मैंने कहा, “राजसी पोशाक उतर गई । चम्पे, आन वही ।”

राजकस्मीने फिर विनाकर कहा, “हाँ, वह भी मैंने राजसी पोशाक ही है, क्योंकि मेरे राजाने जो ही है । अब मरूँ तो वही मुझे पदना देनेके लिए करना ।”

“देख ही होगा । पर तुम क्या आज सारा दिन स्वप्न देखनेमें ही बिता दोगी ? अब कुछ लाओ ।”

“लाती हूँ ।”

“मैं रखने पर देता हूँ कि तुम्हारा खाना खोखले हाथ नहीं मिलेगा ।”

“वही ! कैसी तुम्हारी हल्का । लेकिन मैं तुम्हारे सामने बैठकर कैसे लाऊँगी ? कभी लाते देखा है ?”

“देखा तो नहीं है, पर देखनेमें बुराई क्या है ।”

“अब देख भी नहीं होता है ! किसीका राजसी खाना तुम व्योमोंको हम देखने ही क्यों दोगी ?”

“देखो कस्मी, तुम्हारी वह बात आज नहीं खसेगी । तुम्हें लज्जित ही उन्मास नहीं करने दूँगा । खानेकी नहीं तो मैं तुमसे नहीं बोझूँगा ।”

“न बोझूँगा ।”

“मैं भी नहीं लाऊँगा ।”

राजकुमारी हँस पड़ी, बोली, “इत बार भीत गये, क्योंकि यह मैं न सह सकती हूँ।”

रखोइया मोहन से गया। पक, फूट मिथ्या। नाम-मात्र मोहन कर कर बोली, “रखनेने दिखावत की है कि मैं खाती नहीं हूँ, परन्तु तुम ही बताओ, मैं खाती क्योंकर? हारे हुए मुकद्दमेकी अपील करने कलकत्ते आई थी। रखन नित्य तुम्हारे महोत्से बापित आता था पर मरके आते कुछ पूछनेका चाहत ही मेरा न होता था, क्योंकि, वह कहीं वह न कह दे कि तुमकात हुई थी पर नाम्मात्त नही। जो दुर्मन्त्रहार किया है, उसके कारण मेरे पाठ तो कहनेके लिए कुछ है नहीं।”

‘कहनेकी आवश्यकता भी नहीं है। उत सम्य स्वर भर व्याकर, जिस प्रकार कौनकेका विम्वहको पकड़ ले जाता है, तुम भी ले जाती।”

‘तुम्हारा कौन,—तुम।”

“वही तो समझता हूँ ऐसा निर्दिष्ट बीच संसारमें और कौन है।”

एक क्षण चुप रहकर राजकुमारी बोली, “किन्तु तो मी, मन ही मन मैं किन्तु तुमसे डरती हूँ उतना और किसीसे नहीं।”

‘यह परिहास है। पर इतका कारण पूछ सकता हूँ।”

राजकुमारी फिर कुछ क्षणक मेरी ओर देखती रही, बोली, “कारण यह है कि मैं तुम्हें मन्दैर्मौलि पहचानती हूँ। मैं जानती हूँ कि किसीके प्रति तुम्हारी सचमुचकी आसक्ति क्या भी नहीं है, जो कुछ है वह केवल दिखानेका सिद्धांत है। संसारमें किसीके प्रति भी तुम्हें मोह नहीं है। पथर्ष प्रबोद्धन भी तुम्हें उतका नहीं है। तुम्हारे ‘ना’ कह देनेपर जिस प्रकार तुम्हें झोटाईमी।”

“हस्मी, इसमें थोड़ी-सी गूँह हो गई है। पृथ्वीकी एक वस्तुमें आज भी मेरा आदर है, और वह हो तुम। केवल यहाँपर ‘ना’ नहीं कहा जाता। तुमने जब तक भीकास्तकी वही बात न जानी कि केवल इसके लिए वह दुनियाकी सब वस्तुओंको त्याग सकता है।”

“हाथ भी आऊँ,” कहकर राजकुमारी अस्सीसे उठकर पड़ी गई।

बूते दिन दिन और दिनांशके सब काम निबटकर राजकुमारी मेरे पास आ बैठी। कहने लगी ‘कमलकाशी कहानी सुनींगी सुनाओ।’ जो कुछ

• हरे रंजन एक कविता।

अनता या, सब मुना बिबा, केवल अपने सम्पत्तिमें कुछ-कुछ छोड़ दिया, क्यों कि उससे गलतफहमी होनेकी सम्भावना थी।

मन लगाकर आचोपान्त जारी करते मुनकर उसने धीरेसे कहा, “बचीनकी मृत्यु ही उसे सबसे अधिक चुम्बी है, उसीके दोपसे वह मारा गया।”

“उसका क्या दोप ?”

“दोप कैसे नहीं है ! अपना कलंक सुपानके लिए उसीसे आत्महत्या करनेमें सहायता माँगी थी। उस दिन तो बचीन स्वीकार नहीं कर सका, किन्तु एक दिन अपना कलंक छिगानेके लिए उसे भी वही मार्ग सबसे पहले नजर आया। ऐसा ही होता है, इसीलिए पापमें सहायताके लिए किसी मित्रको नहीं बुलाना चाहिए। इससे एकका प्रायश्चित्त दूसरेके गले पड़ जाता है।—वह स्वयं तो बच गई, किन्तु उसके स्नेहका धन मर गया।”

‘मुक्ति कुछ समझमें नहीं आई, बन्सी।’

“तुम कैसे समझोगे ! समझा है कमलकान्ठाने और तुम्हारी राजकस्मीने।”

“ओ—ऐसा है ?”

“नहीं तो क्या। मन्म कहो तो हमारा जीवन किटना-सा है, उसका क्या मूल्य है, अब हम बेसुकी हैं तुम्हारी तरफ—”

‘किन्तु कल तुम्हने ही तो कहा था कि मेरे मनकी सब काबिल ताक हो गईं और अब कोई ध्यान नहीं है,—तो वह क्या छड़ था ?’

“छड़ ही तो था। काबिल ता मरनेपर ही पुछेगी, उससे पढ़े नहीं। मरना भी बारा था, केवल तुम्हारे ही कारण न मर सकी।”

“सब मासूम है, पर तुम यदि इसे लेकर बारम्बार दुःख दोगी तो मैं इस तरह मध्य मार्गेगा कि फिर ईश्वरपर भी न पाओगी।”

राजकस्मीने मयमीठ होकर मीरा हाथ पकड़ दिया और निरङ्कुश छातीके पास निरङ्कुश आर। बोली, “अब ऐसी बात कभी ईश्वर पर भी नहीं करना। तुम सब-कुछ कर सकते हो, तुम्हारी निष्पूरता कहीं भी बाधा नहीं मानती।”

“तब कहो कि अब ऐसी बात न कहोगी।”

“नहीं कहूँगी।”

“बोझो, सोचूँगी भी नहीं।”

“तुम भी कहो कि अब मुझे छोड़कर कभी नहीं आओगे।”

“मैं तो कभी गया नहीं कस्मी, और जब कभी गया हूँ उस केवळ इती किए कि तुमने मुझे नहीं चाहा।”

“बह तुम्हारी कस्मी नहीं, कोई और होगी।”

“उस किसी औरसे ही तो आज मय लगता है।”

“नहीं, अब उससे मत बरो, वह राखती भर चुकी है।”

बह कहर उठने में उछी हाथको खोले पकड़ लिया और चुपचाप बैठी रही। पोंच-सह मिनरतक इसी प्रकार बैठे रहनेके पश्चात् उसने बूझी चर्चा छेड़ दी, कहा, “तुम क्या तबमुख यमाँ खाओगे?”

“हाँ, तबमुख ही खाऊँगा।”

“आकर क्या कयोग,—नौकरी? पर हम ज्ये तो सिर्फ रो ही मानी है,— हम ज्येगौकी व्यवस्थाकहाँ ही कितनी है।”

“किन्तु उन कितनीज भी तो प्रस्थ करना होगा।”

“बह मगवान् दे दूँगे। पर तुम नौकरी नहीं करने पाओगे, यह तुम्हारे स्वभावके अनुकूल नहीं है।”

“नहीं कर सकूँगा तो नापिस बन्ध आऊँगा।”

‘बानदी हूँ, नापिस तो जाना ही पड़ेगा, केवळ मुझको कह देनेके स्थिर हठपूर्वक इतनी दूर ले जाना चाहते हो।”

“चाहो तो कह महीं भी करो।”

एककस्मीने एक कुछ कटाव कैफ कर कहा, “दिसो, पात्मकी मत्त करो।”

मैंने कहा, “बाबाकी महीं करछा, बज्जेसे तुम्हें बाखबमें कह होगा। मोहन पछाना, कर्तन मँजना, घर-बार छफ करना, बिछीने विछाना—”

एककस्मीने कहा “तब दार्-नौकर क्या करेंगे।”

“दार्-नौकर कहाँ? उनके किए रुपये कहाँ हैं?”

एककस्मीने कहा, “अच्छा, न खी। तुम मुझे चाह कितना ही भव दिसाओ, लेकिन मैं तो बहूँगी ही।”

“तो कबो। केवळ मैं और तुम, कामके मारे न मिलेगा शागड़ा करनेका मयतर और न मिलेगी पूजा तथा उपचात करनेकी पुछत।”

“न मिलने दो। मैं क्या कामसे बरती हूँ।”

“तब है; बरती महीं हो, पर तुम कर न सकोगी। वो बिम बार ही नापिस

आनेके लिए आपका अपना धुक कर योगी ।”

“इसमें भी क्या कोई डर है ! साथ लेकर जाऊँगी तथा साथ ही वापस ले जाऊँगी । कमसे कम तुम्हें छोड़कर तो न जाना होगा ।” कहकर वह एक क्षणके लिए कुछ सोचने लगी, फिर बोली, “हाँ यह ठीक रहेगा । एक छोटे-से घरमें केवल हम और तुम रहोगे, न कोई दास होगा न दासी । जो सामानको दूँगी वही लाओगे जो पहननको दूँगी वही पहनोगे ।—नहीं ! तुम बैलना, मेरी अपनेकी दासवद इच्छा ही न होगी ।”

तबता वह मेरी गोदीमें अपना सिर रखकर लेट गई और बहुत देरतक झोंलें बन्द कर निश्चिन्त पड़ी रही ।

“क्या सोच रही हो ?”

राजकस्त्री नेत्र स्वेदकर किञ्चित् मुस्कुराई और बोली, “हम लोग क्या बर्तते ?”

“इस मकानकी कुछ व्यवस्था कर दो, फिर कुछ दिन चाहो प्रस्थान कर दो ।”

उठने फिर विचार कर स्वीकृति जगाई और फिर नेत्र मूँद लिये ।

“फिर क्या सोच रही हो ?”

राजकस्त्रीने ठाकते हुए कहा, “सोच रही हूँ कि एक बार नुगरीपुर नहीं जाओगे ?”

“हाँ, विद्वेष जानेसे पूर्व एक बार उन्हें मिल आनेका वचन तो दिया था ।”

“तो चलो, कम ही चीनों चले ।”

“तुम भी चलोगी ?”

“क्यों, इसमें डर क्या है ! तुम्हें चाहवी है कमलवत्या और उसे चाहते हैं हमारे गीहर दास । वह तुम्हा लूट है ।”

“वह सब तुमसे किसने कहा ?”

“तुम्हीने ।”

“न, मैं नहीं कहा ।”

“हाँ, तुम्हीने कहा है, केवल तुम्हें वह ख्याल महीं है कि क्या कहा है ।”

तुमकर लंकावसे व्याकुल हो उठा । कहा, “निर, जो कुछ भी हो, पर तुम्हारा नहीं जाना उचित नहीं है ।”

“क्यों नहीं है ?

“उस बेसारीका मज्जाक करके तुम उसे छंग कर हासोगी ।”

राजकर्मिणी की झुकरी तन गई, उसने क्रोधित स्वरमें कहा, “अपठक तुम्हें मेरा मही परिचय मित्र है ! मैं क्या उसे इलीकिएर छिपित करूँगी कि वह तुमसे प्रेम करती है ! तुमसे प्रेम करना क्या अपराध है ! मैं भी तो स्त्री हूँ । वह भी तो हो सकता है कि जानेपर मैं भी उसे चाहने लग जाऊँ ।”

“तुम्हारे लिए कुछ भी अतम्मन नहीं है लक्ष्मी । प्यारे, तुम भी पढ़ो ।”

“हाँ, प्यारे, कठ सरोरकी गाड़ीसे ही हम दोनों पक हैं । तुम कोई चिन्ता न करो, इस बीबनमें मैं तुम्हें कमो बुझी न करूँगी ।”

इतना कहकर वह एक तरह विमना-सी हो गई । ओलें बन्द हो गई, छँस झूने छपे, सहसा न जाने वह कितनी दूर पड़ी गई ।

मनमौल होकर उसे दिखाकर पूछा, ‘वह क्या ?’

राजकर्मिणी ओलें लोखकर किबित् सुस्कराई खैर बोली, “क्यों, कुछ भी तो नहीं ।”

आज उसकी वह हँसी भी न जाने मुझे कैसी लगी ।

११

दूसरे दिन मेरी अनिच्छाके कारण जाना न हुआ किन्तु उसके अगले दिन किसी प्रकार मैं न अटका सका और मुसरीपुरके अन्नादेके लिए रवाना होना पड़ा । जिसके बिना एक कदम भी चलना मुश्किल है वह राजकर्मिणीका वाहन रहन तो खूब पक्का ही, पर रसोईपरकी डार्र लावकी मीं भी साथ पड़ी । कुछ बहने पीछे झुकर रहन सरोरकी गाड़ीस रवाना हो गया है । वहाँ पहुँचकर वह खेजानपर पहुँचोते से घोड़ा-गाड़ियों ठीक कर रसेगा । हम दोनोंके साथ वो सामान बाँचा गया है वह भी तो कम नहीं है ।

मैंने प्रश्न किया “कहाँ क्या घरबार बसाने जा रही हो ?

राजकर्मिणीने कहा, ‘कहाँ क्या दो-एक दिन भी न रहूँगे ? देखके बन-बहल, मही-नाये, पाद-मैदान क्या तुम अकेले ही देख जाओगे ? मैं क्या उस देशकी लड़की नहीं हूँ ! मेरी क्या देखनेको इच्छा नहीं होती ?’

“मानेता हूँ कि होती है, पर इतनी नीरस, इतने तरहका लाने-पीनेका

आयोक्त—”

‘तो तुम क्या यह कहते हो कि देवस्थानमें साक्षी हाथ बड़ा कम ! और तुम्हें तो कुछ सब ठोना नहीं है, फिर इतनी चिन्ता क्यों ?’

चिन्ता तो बहुत थी, पर कहता किससे ? सबसे अधिक मम इसी बातका था कि वह वैष्णवी-वैरागिणीका सुख हुआ देवताका प्रसाद माथेपर तो मन्त्रों के बाद केगी किन्तु मुँहमें न आयेगी । और कौन जानता है कि वहाँ आकर किस बहाने उपवास प्रारम्भ कर देगी या भोजन पकाने बैठ जायगी । केवल एक प्रयत्न है । राजकस्मीका मन सचमुच ही म्ल है । अन्धे गले पड़कर वह किसीको थोड़ नहीं पहुँचा सकती । यदि उसे कुछ ऐश करना भी हुआ तो प्रसन्न-मुक्त हास-परिहासके साथ इस प्रकार करगी कि मुझे और रतनको छेड़ कोई समझ भी नहीं पायगा ।

राजकस्मीके शारीरिक गठनमें बाहुस्य-भार कभी नहीं हुआ और फिर संयम तथा उपवासने उसे मानो कपुताकी एक बीसि दान दी है । विशेषकर आज उसकी साव-सज्जा कुछ विचित्र ही है । मीर होनेके पहले ही वह जान कर आई है, गंगाघाटके ठकिया पण्डेका मकपूर्वक व्यावा हुआ तिरक उसके मस्तकपर है, कर्नार रंगकी फूल-फूल तथा बेस-बूँदोंसे चिभित रुन्दानकी साड़ी पहन रखी है, छीरपर से ही कुछ चक्कि-स गहने हैं, मुखपर किम्ब प्रसन्नता है, और अपने काममें लगी है । वह अपने आरिने लगी दो आत्ममारियों करीद आई थी, आज जानेस पूव ठनमें लसली-लसली न जाने क्या रस रही है । काम करते-करते उसके हाथोंके कड़ोंकी शार्क मछलीकी आँखें बीच-बीचमें चमक उठती हैं, गलेमें पड़े हुए हारे-पलेके जड़ाऊ हारकी विभिन्न वर्णज्जटा किनारीके झक-जानसे झक उठती है । उसके कानोंके पाससे भी एक नीली आभा निकल रही है । मेजर चाय पीने बैठकर मैं एकटक उसी ओर देख रहा था । उसमें एक शोष था, परमें वह आकेट ध्वातक नहीं पहनती थी, अतएव जरा असावधान होनेपर उसकी गहन तथा बाहुका बहुत-सा अंग अनाहत हो पड़ता था । यदि इतके लिए करा गया तो वह हँसकर कहती,—बाबा, मुझे यह सब नहीं हो सकता । मैं उदरी गौबन्दी औरत, मुझे दिन-रात बीबियाना व्यर्थ नहीं हुआ । अर्थात्, हम श्रुति-आमुद्रका बीबोंके लिए कर्णोंका व्याघ्र पहनना काम है । आत्ममारीका पकड़ा बन्द करती हुए एकएक आरिने

मुहपर पड़ गई। शीश्यासे छाड़ी सैमाककर वह मेरी ओर बसकर खड़ी हो गई और नाराज होकर बोली, “फिर भी ठाक रहे हो ! जबकी बार-बार मुझे इतना क्यों ठाक रहे हो, कहो तो !” और कहकर ही वह हँस पड़ी।

मैं भी हँसा, बोला, ‘सोच रहा था कि बिधायाको परमाश्चर्य देकर न अपने फिटने तुम्हें गढ़वाया था।’

राजकमरमंनि कहा, “तुमने ! नहीं तो बुनियाते ऐसी निराखे पसन्दगी और फिटकी हो सकती है ! मेरे आनेके पौन-छह बप पूर्व तुम आये थे, और आते समय उन्हें बसाना दे आये थे। बाब नहीं है क्या ?”

“नहीं, किन्तु तुमने कैसे जाना !”

“बाजान करते समय बिधायाने ही जानमें कह दिया था। पर तुम जाब भी चुके ! हेर करोगे तो आज भी जाना नहीं होया।”

“न ली !”

“पर बलव्यभो, क्यों !”

“वहाँ मीकमें बापब तुम्हें हँड म पाऊँगा।”

राजकमरमंनि कहा, “तुमने तो तुम पा लोगे, पर मैं तुम्हें लोबकर पा जाऊँ तो गनीमत है।”

मैंने कहा, “यह भी तो ठीक नहीं है।”

उत्तने हँसकर कहा, “नहीं, ऐसा नहीं होगा। तुम्हें बचना ही पड़ेगा। तुना है कि ‘नये गुलार्’का वहाँ एक अलग कमरा है, मैं आते ही उठका कुब्बा लोडकर रक्त हूँगी। कोई मर वहाँ हँडना नहीं होगा,—बाकी तुम्हें यों ही मिक आपगी।”

“तो बडो !”

जित समय हम लोग मठमें पहुँचे उक्त समय बैयवाकी मप्पाद्वाराकीन पूजा समाप्त हो चुकी थी। बिना कुब्बाये, बिना लुपनाके अकस्मात् इतने प्राची शक्ति हो गये किन्तु फिर भी, उन लोगोंको इतनी लुची हुई कि कह नहीं सकता। नये गुलार् आभरमें नहीं हैं, गुब्बेबले मिकने फिर नयदीप गये हैं, किन्तु हत बीच ही हो बैरागियोंने आकर भी कमरमें अत्रु जमा किया है।

कमरबन्दा, पद्मा, जलमी, तरलकी तथा और भी करने आकर हम लोगोंकी लार अम्पर्यना की। कमरबन्दाने भो गलेले कहा, “नये गुलार्, तुम इतनी

कमती फिर हम लोगोंको दिखाई दोगे, ऐसी भाषा नहीं की थी।”

राजकस्मीने इस प्रकार बातचीत की, मानो न जाने कबका परिचय है। कहा “कमलकटा बीबी, इन कई दिनोंसे इनकी बगानपर कैबक तुम्हारी ही बसा थी। इससे पहले ही जाना चाहते थे, पर मेरे कारण ही ऐसा न हो सका। इसमें मेरा ही दोष है।”

कमलकटाका मुख कुछ खण्डे किए, काक हो गया, पछा हँस पड़ी और उठने आँखें फिर की।

राजकस्मीकी बेच-भूया तथा चेहरसे लमीने उसे मद्र परिवारका समझा, कैबक मेरे साथ उसका क्या सम्बन्ध है, वह निश्चन्देह कोई न जान सका। परिचयके लिए लमी तस्मुक हो खे। राजकस्मीकी आँखोंसे कुछ भी नहीं छिपता। उठने कहा, “कमलकटा दीदी, मुझे पहिचान नहीं सकी।”

कमलकटाने सिर दिखाकर कहा, “नहीं।”

“हुन्दावनमें कमी नहीं देखा।”

कमलकटा भी निश्चय नहीं है, उठने परिहास समझ किया और हँसकर कहा, “बाद हो नहीं पड़ रहा बहन।”

राजकस्मीने कहा, “बाद न पहना ही बगला है बीबी। मैं इसी देणकी बगली हूँ, हुन्दावन कमी नहीं गई,” कहकर वह हँस पड़ी। फिर कस्मी, तरबती तथा अन्य लकके लके बानेके बाद लसे दिखाकर कहा, “हम लोग एक ही गोंबमें एक ही लुबकी पाठशाळामें पढ़ते थे, दोनोंमें ऐसा प्रेम था जैसे माई-बहन हो। मैं मुखसेके रिश्तेसे ‘बाबा’ कहकर बुकाखी थी और वे मुझे बहनकी तरह प्यार करते। धीरेपर कमी हाथलक नहीं लगावा।” फिर मेरी ओर देखकर कहा, “बोबी, जो कुछ कह रही हूँ सच है न।”

पछा लुग होकर बोबी, “इसीसे तुम दोनों ऐलनेमें एक-ठे जगते हो। दोनों ही लेंगे और फलने, कैबक तुम मोरी हो और नये गुणई सोंबके।”

राजकस्मीने गम्भीर हाकर कहा, “हम लोगोंके ठीक एक-ठे हुए बिना काम कैसे चल सकता पछा।”

“बरी मिया। तुम्हें तो मिया नाम भी गावस है। नये गुणईने बता दिया है गवद।”

आओगे ! मुझे भी साथ ले जाओ । तुमसे तो कोई डर नहीं, एक शाम बैलकर कोई कलक भी न लगायेगा और यदि लगाया भी तो हर्ब क्या है, बिप नीलकण्ठके गलेमें ही रह जायगा पेड़में नहीं उठरेगा ।”

मैं बड़ा चुप न रह सका । औरतोंका यह किंत प्रकारका मन्त्रांक है, यह मैं ही जानें । ओषित होकर कहा, “अबुकिर्षीके साथ क्यों छूटा मन्त्रांक कर रही हो ?”

राजकन्याने मुझे मानुसकी तरह कहा, “सभा मन्त्रांक न हो तुम्हीं क्या हो । जो कुछ जानती हूँ, उसका मन्त्रे कह रही हूँ, इससे तुम नाराज क्यों होते हो ?”

उसका गाम्भीर्य देखकर गुस्से से कहती थी मैं हँस पड़ा, “हाँ, उसका मन्त्रे कह रही हो !—कमलकण्ठ, उसारों इतनी बड़ी चौखान और बाबाऊ तुम्हें लम्बा करनेपर भी बूझी नहीं थिजेगी । इसका कुछ-न-कुछ मतलब है, इसकी सब बातोंपर सहज ही विश्वास न कर लेना ।”

राजकन्याने कहा “निम्न क्यों करते हो गुनार ! तब तो मेरे सम्बन्धमें तुम्हारे मनमें ही कोई मतलब है ।”

“हाँ, है तो ।”

“पर मेरे मनमें नहीं है । मैं निष्कप निष्कलंक हूँ ।”

“हाँ, बुद्धिबिर ।”

कमलकण्ठ भी हँसी, किन्तु उसके बोलनेकी भंगिमापर । वह साबह ठीक ठीक कुछ समय न लगी, सिर्फ ठकानमें पड़ गई । कारण, उस दिन मैं तो किसी रमणीय अपने सम्बन्धका मैंने कोई आभास नहीं दिया था और देना भी किंतु तरह ! देनेके लिए उस दिन था ही क्या !”

“मेरा नाम राजकन्या है और ये पक्षेका लंघ छोड़कर करते हैं केवल ‘रुदमी’ । मैं हूँ ‘ए बी,’ ‘ओ ओ,’ ‘सुनो,’ कहकर पुकारती थी । किन्तु अब ‘नये गुनार’ कहकर पुकारनेके लिए कहा है । करते हैं इससे तृप्ति होगी ।”

पछाने लूता ठाढ़ी बजाकर कहा, “मैं समझ गई ।”

कमलकण्ठाने उसे बयानाकर कहा, “अबुकिर्षीके भारी बुद्धि है न । क्या तो, क्या समझी ?”

“निष्कप समझ गई । बताऊँ ?”

“बताना मही होगी, भा ।” कहकर उसने स्नेहके साथ राजकन्याका हाथ

पकड़कर कहा, “बातों-ही-बातोंमें देर हो रही है बहन, धूपमें मुँह धुल गया है। ग्यनती हूँ, कुछ खाकर भी नहीं आई। बबो, हाथ-मुँह धोकर देवताको प्रणाम करो, फिर सभी मित्रोंकर प्रसाद पायें। तुम भी सबी गुसाई—” कहकर वह उसका हाथ पकड़कर मन्दिरकी ओर लौट ले गई।

अबकी बार मन ही मन मुझे विपत्ति दिलाई थी, क्योंकि अब आसगा प्रसाद ग्रहण करनेका आह्वान। खाने-पीने और धूम्रपानका विचार राजस्थानीके जीवनके साथ इस प्रकार प्रयुक्त है कि इस विषयमें सत्वात्मिका प्रभु अवैध है। यह कैवल्य विचार नहीं है, उसका स्वभाव है। इसे छोड़कर वह भी नहीं सकती। वह कोई नहीं जान सकता कि जीवनके इस एकान्त प्रयोगकी सहाय और सक्रिय समीक्षा करने किन्ती बार कितने संकटोंसे उसकी रक्षा की है,—अपने आप वह बताएगी नहीं और जाननेसे कोई काम नहीं। कैवल्य में ही जानता हूँ कि एक दिन राजस्थानीको बिना आगे ही देखा पाया है और आज वह सभी प्रातः वस्तुओंसे बढ़कर है। किन्तु इस समय उस बातको जाने दो।

उसकी जो कुछ कठोरता है वह कैवल्य अपने लिए, उसमें दूसरेपर कोई जमाआर नहीं है। वह हँसकर कहती है, ‘बाबा, कसूरत क्या है इतना कह करनेकी! आसकलके समयमें इतना बचकर चलनेसे प्राण नहीं बच सकते।’ वह जानती है कि मैं कुछ नहीं मानता। वह इसीमें खुश है कि उसकी आँखोंके सामने कुछ भयंकर घटना न हो। मेरी प्रत्येक जमाआरकी कहानीसे कभी तो वह अपने दोनों कानोंको बन्द करके अपनी रक्षा करती है, या कभी गाऊँकर हाथ देकर अवाक होकर कहती है, मेरे बुमानसे तुम ऐसे क्यों हुए। तुम्हारे कारण मेरा सब-कुछ क्या।

किन्तु आजका मामला ठीक वैसा नहीं है। इस निर्जन मठमें जो कई प्राणी घूमते हैं वे सब दीक्षित वैष्णव-वर्मावधारी हैं। वे लोग आदि-भेद नहीं मानते और पूर्वाभ्यासों बातें कभी मनमें भी नहीं आते। इसीसे किसी अविवेकिके जानेपर वे लोग निर्दोषीय अज्ञापूर्वक प्रसाद वितरण करते हैं और आजकल किसीने भी प्रसादको बस्तीकार कर इन लोगोंका अपमान नहीं किया। किन्तु यह अभीष्टिकर काव यदि आज, बिना बुझये आकर, हमारे ही हाथ पड़ित हो तो बुलतकी सीमा न रहेगी,—और विधिपद्धति में वृद्धि वह मैं जानता था कि कमजोरी मुँहसे कुछ म करेगी, किसीको

न देवी,—और धावद बेचक एक बार मेरी ओर देखकर ही फिर फिर नीचा कर झन्बड़ कितक जायगी। तब उस मूक अभिमोगका क्या उत्तर होमा,—
कहा-कहा मैं यही सोच रहा था। इसी समय पद्माने आकर कहा, “क्यों नये गुठार, बीबी तुम्हें बुझ रही हैं। हाथ-मुँह धो लिया है।”

“नहीं।”

“तो क्या, मैं पानी देती हूँ। प्रखर दिया था रहा है।”

“आज क्या बना है।”

“आज बेकताको अन्न-भोग लगा है।”

मैंने मन ही मन कहा कि तब तो और भी खुशीकी लहर है। पूछ, “प्रखर किस काम दिया था रहा है।”

पद्माने कहा, “देखपरके बरामदेमें। तुम बाबाजी ओरोंके साथ बैठोगे और हम ओरोंके बाहरमें लावेंगी। आज हम ओरोंको स्वयं राजकस्मी की स्त्रोसेमी।”

“वे लावेंगी नहीं।”

“नहीं, वह तो हम ओरोंकी तरह बेचक नहीं हैं, ग्राहककी बड़की हैं। हम ओरोंका पुआ लानेसे उन्हें पाप कमठा है।”

“तुम्हारी कमककता बीबी नाराज नहीं हुई।”

“नाराज क्यों होगी, बरन् हैंने कगी। राजकस्मीसे बीबीन कहा, “आजसे कममें हम दोनों बहने एक ही मोंके फेठे कम केंगी। परहे मैं पैरा होऊँगी और तुम बाद। तब दोनों बहने मोंके हाथसे एक ही पचकसर लावेंगी। उस समय यदि आव नह होनेकी बात कहोगी तो मों कान मक देयी।”

मुनकर कुछ होकर सोचा, अब ठीक हुआ। राजकस्मीको बात करनेमें अभी तक कोई प्रतिहन्त्री नहीं मिला था। पूछ, “क्या कहाव दिया।”

पद्माने कहा, “राजकस्मी बीबी भी मुनकर हैंने कगी। बहने कगी, मों क्यों बीबी, तुम तो बड़ी बहन होगी ही, स्वयं कान मक देगा। छोटीकी इतनी हिमाकत किसी तरह बर्बाद न करना।”

प्रसुत्तर मुनकर चुप हो गया। मन ही मन प्रार्थना करता रहा कि कमककता इसके भीतरी अर्थको म समझ लके।

आकर देखा कि मेरी प्रार्थना मंगल हो गई। कमककताने उस बातपर कोई

प्यान नहीं दिया, बल्कि इस अमेरुको न मान कर ही इस बीच दोनोंमें खूब मेक हो गया है।

शामकी गाड़ीसे बड़े गुछाई इारिकावास आ गये और उनके साथ और भी कई बाबाजी आये। सर्दगमें छायाँका परिमाण और वैविध्य देखकर सम्येद न रहा कि ये भी अमेरुबाके पात्र नहीं हैं। यके गुछाई मुझे देखकर बहुत खुश हुए किन्तु उनके छाविनोंने मेरी कोई परवा न की। परवा करनी भी न चाहिए, क्योंकि, सुना गया, उनमेंसे एक तो क्पातिप्रप्त कीर्तनकथा हैं और दूसरे मुदक बन्दानेमें उस्ताद।

प्रसाद पाना समाप्त होनेपर मैं बाहर निकल पड़ा। वही सुखी नदी और वही बन-बंगल। चारों ओर बेणु और केतके कुम्भ हैं,—छपर बसाकर बटना मुश्किल है। आसन्न स्यास्तके समन किनारेपर बैठकर प्राकृतिकी क्रीडा निरीक्षण करनेका संकल्प किया, किन्तु बोब हुआ कि पास ही कहीं भरबी व्यतिके 'बेजिरेके माणिक' (पूछ) लिखे हैं। उनकी क- हुए मात जैसी बीभत्स दुर्गन्धने बैठने नहीं दिया। मन ही मन सोचा कि कवियोंको यह पूछ बहुत पसन्द है। कोर इन पूछोंको से अच्छर उगड़े उपहार क्यों नहीं देता? सन्ध्या होनेके पूर्व ही बोट आया। जाकर देखा कि वहाँ समारोहकी धूम है। ठाकुर-सर सजाया आ रहा है और आरतीके बाद कीर्तनकी बैठक होगी।

पछाने कहा, "नये गुछाई, कीर्तन सुनना तुम्हें अच्छा लगता है, अथवा मनोहरदास बाबाजीका माना सुननेपर तुम जबाब् हो आओगे। कैसा बहिया पाते हैं?"

बल्लुव मेरे लिए वैष्णव कवियोंकी पदावली जैसी जग्य कोई मयूर बल्लु नहीं है। कहा, "सब, मुझे बहुत अच्छा लगता है पछा। बचपनमें दो-चार कोसके भीतर कहीं भी कीर्तन होनेकी खबर सुनता था तो लफाठ रोड़ जाता था, किसी भी तरह परमें नहीं रहा सकता था। समझमें आये चाहे न आये, लेकिन अचलक बैठा रहता था।—कमकलया, आज तुम नहीं याओगी?"

कमकलवाने कहा, "नहीं गुछाई, आज नहीं। मेरी तो बीटी जिन्हा नहीं है, इरीछिए उनके सामने गाते हुए धर्म ब्याटी है। इसके अन्धबा उत बीमारसे मला इतना खराब हो गया है कि अमीतक ठीक नहीं हुआ।"

"पर बस्ती तो तुम्हारा गाना सुनने ही आई है। उतका बताव है कि मैंने

तुम्हारे विषयमें बड़ा-बड़ाकर कहा है।”

कमलकायाने कब्बाले कहा, “बड़ा-बड़ाकर तो जरूर कहा होगा गुहार।” इसके बाद सिद्ध हास्यके साथ राजकस्मीसे कहा, “तुम कुछ ख्याल न करना बहन, जो कुछ बोड़ा-बहुत आता है, वह किसी और दिन सुनाऊँगी।”

राजकस्मीने प्रसन्न होकर कहा, “अच्छ धीरी, तुम्हारी जिस दिन हल्का हो कुछ मेकना, मैं खुद आकर तुम्हारा घाना सुन आऊँगी।” मुससे कहा, “तुम्हें कीर्तन सुनना इतना अच्छा लगाता है, यह तो तुम्हने कभी नहीं कहा।”

उत्तर दिया “तुमसे क्यों कहता ? गंधामाटीमें बीमार पड़कर अब शय्यापर पड़ा था, तब तुम्हें और तुम्हें मैथानोंकी ओर देखते-देखते खोपराका बल बढ़ता था, और तुमर संस्था किसी तरह बँटते-कटना ही न चाहती थी—”

राजकस्मीने चट्टे में मुँहको अपने हाथसे दबा दिया। कहा “अगर और कुछ ख्याल कहा, तो पैरोंमें तिर पड़कर मर आऊँगी।” फिर खुद ही अप्रतिम हो सब हँसकर बोली, “कमलकायाने बोली, अपने बड़े गुहारेंबीठे कह आओ बहन, आज बाबाजी महाशयके कीर्तनके बाद ही मैं देवताको गाना सुनाऊँगी।”

कमलकायाने संदिग्ध कण्ठसे कहा, “केकिन बहन, बाबाजी बड़े टीका टिप्पणी करनेवाले हैं।”

राजकस्मीने कहा, “मझे ही छे, ममानाका नाम तो होगा।” सिद्ध मुखियोंको हाथसे दिखाते हुए कहा, “वे शाबर लुप्त हैं। और बाबाजीजीका तो मैं उठना खयाल नहीं करती बहन, पर मेरे वे बुधाता-देवता प्रत्यक्ष हो आये तो आनमें जान आए।”

“प्रत्यक्ष होनेपर केकिन बलघीय मिलेगी।”

राजकस्मीने समझ कहा “रखा करो गुठारें, कहीं तरफे आनने बलघीय देने मत आ जाना। तुम्हारे स्थिर असम्भव कुछ भी नहीं है।”

सुनकर वैष्णवियों हैंतने कमी, पचा कुछ हानेपर राखी बचाने लगायी है। बोली, “मैं क-म-क-ग-ई।”

कमलकायाने उत्तली तरफ ठुल्लेह बैसकर हैंतते हुए कहा, “दूर हट कल-हूँरी—हुप रू।” राजकस्मीसे बोली, “हते के आओ बहन, क्या म्यस्रम बना गक करा कर बैठे।”

देवताकी लम्पा-मारतीके बाद कीर्तनकी बैठक आयी। आज बहुत-से

हीन कह रहे थे। वैष्णव-समाजमें सुपरीपुरका आश्रम निरान्त अग्रस्थि नहीं। नाना स्थानोंसे कीर्तन करनेवाले वैरागियोंके बह आनेपर इस तरहका आयोजन अफसर हुआ करता है। मठमें सब तरहके वाद्ययंत्र मौजूद रहते हैं, देखा कि वे सब शब्दित कर दिये गये हैं। एक ओर वैष्णवियों बैठी हैं, सब परिचित हैं, दूसरी ओर अठारह-दुई-छील अनेक वैरागी-मूर्तिर्वा हैं, नाना उम्र और तरह तरहके चेहरोंकी। बीचमें फिखरात मनोहरदास और उनके गृहमन्त्रादिक आसीन हैं। मेरे कमरेपर हाथमें ही हस्तक करनेवाले नवमुनक बाबाजी हारमोनियममें सुर रहे रहे हैं। यह प्रकार हो गया है कि कलकत्तेसे एक संभ्रान्त सरकी मद्रिक् आई हैं,—वे ही गाना यादीगी। वे मुबती हैं और बनबती, उनके साथ आये हैं हास-हासी, आये हैं अनेक प्रकारके साथ-समूह और कोई एक नया गुस्सा भी आया है,—यह है वहाँका एक मुमकड़।

मनोहरदासकी कीर्तनकी मूमिका और गौर-चन्द्रिकाके बीच एकदमसी कमकमताके पास आकर बैठ गए। इन्हा, बाबाजी महोदयका हाथ कुछ कोंपकर लेंक गया, मृदंगपर मणकी मही पड़ी। यह एक निरान्त देवकी ही कीर्तन थी। तिकं द्वारिकदास दोवारके सहारे जैसे आँखें बन्द किये बैठे थे जैसे ही बैठे रहे। क्या माधम, शायद वे जान ही न पाये कि कौन आया और कौन नहीं।

राजकर्म्यी एक नीममन्त्री छाड़ी पहनकर आई है, और उरकी महीन करीको किनारीके साथ नीचे रंगका झमठक मिळकर एक हो गया है। बाकी सब बैठा ही है, तिकं सुनकरें उड़िया पड़ेकी जगाये हुए छाये इस बह बहुर कुछ मिट गये हैं,—जो छाये बाकी बचे हैं वे मानों आभिनके छिन्न मित्र मेघ हैं जो न जाने कब नीक आकाशमें किये आवेंगे। यह अति छिन्न ध्वन्त है, उरने मेरी ओर कदासते भी न सका,—मानों पहचानती ही नहीं तो भी क्यों उरने अपनी अना-सी ईसी दबा दी, यह वही जाने। अथवा मेरी भी सूँ हो सकती है—असम्भव तो है नहीं।

आज बाबाजी महाशयका शान्त जमा नहीं, पर यह उनके अपने दोपरे नहीं, जोगीकी असीछाके कारण। द्वारिकदासने आँखें लोक राजकर्म्यीका आधान कर कहा, "दीदी, हमारे देवताको अब हम कुछ निवेदन करके मुनाओ,

• जानेके रहते वैष्णवदेवकी कम्पा।

मुनकर हम भी मय्य हों ।”

राजकन्यामी ठसी ओर मुँह करके बैठ गई । इतिहासने मृदंगकी ओर झुकीये इशारा कर पूछा, “इससे कोई बाधा तो पैदा न होगी !”

राजकन्यामीने कहा, “नहीं ।”

यह सुनकर सिर्फ़ ये ही नहीं, बल्कि मनोहरराज भी मन ही मन कुछ विस्मित हुए, क्योंकि एक साधारण छींटे धावद उन्होंने इतनी ध्यान नहीं की थी ।

गाना शुरू हुआ । संकोचकी बहना,—बकताकी बुनियाद वहीं भी नहीं है,—नित्यव कण्ठ बसाव कण्ठोत्तकी तरह प्रसारित होने लगा । जानकर है,—इस विषयमें वह सुविचिता है,—यह उसकी जीविका थी, पर कनाक नहीं था कि बसावके अपने संगीतकी इस धारापर भी उठने इतने बड़े काव्य अधिकार कर रहा है । किसे मायम था कि प्राचीन और आधुनिक वैष्णव कवियोंकी इतनी विभिन्न पदार्थजियोंको उठने कण्ठज कर रहा होगा । सिर्फ़ सुर-राज और कममें नहीं, बल्कि वाक्यकी विपुलता, उच्चारणकी स्पष्टता और प्रकाश-भंगीकी मधुरतासे उठने इस धामको जिस विस्मयकी सृष्टि की वह कल्पनाशील थी । फलतः देवता उसके सामने हैं और दुर्वासा देवता पीछे,—कहना मुश्किल है कि उसकी यह आराधना किसको क्या प्रसन्न करनेके लिए थी । क्या जाने, यह बात आज उसके मनमें थी या नहीं कि गंगामाटीके अस्तित्वका मोड़-का साधन भी इसके हो था ।

बह गा रही थी—

एके पद-पंकज पंके विमूषित, कंक जरजर मेळ,

हुया वरसन आसे काहु नाहिं जानल्लु, निरदुख अथ दूर गेल ।

सोहारी मुरली जब मवणे प्रवेशळ, सोहनु गृहसुखआस,

पंधक दुख राणहुं करि म गणनु कहर्तुद गाविंददास ॥

बड़े गुलाबीकी भाँसीसे मधुपारा यह रही थी, व आवाज और ध्यानम्दकी मेरपासे उठ खड़े हुए । मूर्तिके बंठसे मलिकाकी माथा उठारकर उन्होंने राजकन्यामीके गलेमें पहना दी और कहा, “प्रायना करवा है, तुम्हारे लव अस्तित्व पर हो जाएँ ।”

राजकन्यामीने हककर भ्रमस्थान किया, फिर उठकर मेरे पास आई, अपने सामने पैरोंकी दूर माथपर डग्रा और आदिस्तेसे कहा, “यह मय्य रखी है,

बलहीनका डर न बिकसता होता तो यहाँ तुम्हारे गलेमें पकना देती ।” फिर दूर ही वह पड़ी गई ।

गानेकी बैठक खत्म हुई । ऐसा लगा मानों आज जीवन सार्थक हो गया । अन्धरा प्रयाद-बिबरणका आयोजन शुरू हुआ । अन्धकारमें उसे बरा ओठमें कुम्भकर कहा, “वह गाना रस हो । यहाँ नहीं, पर बैठकर तुम्हारे सामने ही पहँगा ।”

राजकस्मीने कहा, “यहाँ अकुर-गरमें पहन जोगे तो फिर उत्तर नहीं छोड़ोगे,—सायद इसी बातका डर है ।”

“नहीं, अब डर नहीं है, वह पूरा हो गया है । अगर सारी दुनिया में ही होती तो तुम्हें आज वह भी खान कर देता ।”

“ओह, कैसे खानी हो । पर वह तो तुम्हारी ही रखी थी ।”

“तुम्हें आज अर्धरात्रि धन्यवाद ।”

“क्यों, क्याओ तो थी ?”

“आज सवाक हा था है, मैं तुम्हारे योग्य नहीं हूँ । रूप, गुण, रस, विद्या, स्नेह और सौन्दर्यसे परिपूर्ण जो बन मुक्त बिना पाचनाके ही मित्र है, उसकी संसारमें तुम्हारा नहीं है । अपनी अयोग्यताके मारे धर्म जाती है कस्मी,—तुम्हारे निकट मैं सबकुछ बहुत कुछ हूँ ।”

राजकस्मीने कहा, “इस बार मैं सबकुछ नाराज हो जाऊँगी ।”

“तो हो जाओ । सोचता हूँ कि इस ऐश्वर्यको मैं कहाँ रखा ?”

“क्यों, खोरी अनेक डर है ।”

“नहीं, ऐसा आदमी तो कोई नजर नहीं आता उसी । खोरी करके तुम्हें उस छोड़ने कायक नहीं जगह वह बिचार कहाँ पावेगा ।”

राजकस्मीने उत्तर नहीं दिया, मेरा हाथ खींचकर पोंड़ी देरतक हृदयके समीप रस छोड़ा । फिर कहा, “अन्धकारमें ऐसे आग्ने-साग्ने लड़े रहेंगे तो जोग ईश्वर नहीं । पर खोज रही हूँ कि रातकी तुम्हें कहाँ सुषुप्तगी—जगह तो है ही नहीं ।”

“रहने दो, कहाँ भी सोकर रात काट दूँगा ।”

“ता तो काट जोगे, पर तबोयत तो तुम्हारी जगह है मरी, बीमार पड़ सकते हो ।”

“तुम्हें थिङ्क करनेकी जरूरत नहीं, ये लोग कुछ-न-कुछ करेंगे ॥”

राजकर्मिने थिङ्काके स्वरमें कहा, “सब कुछ देख तो रही हूँ, पता नहीं क्या व्यवस्था करेंगे। पर मैं थिङ्क न करूँ और ये करें ?—बको, बोझा-छा लाकर छोड़ाना।”

थेगीकी मीड़के कारण सोनेको सचमुच ही जगह न थी। उठ पठको किसी तरह एक जुड़े बरामदेमें मलहरी ब्याकर मेरे सोनेकी व्यवस्था की गई। मुद्रिपों के कारण राजकर्मसी अछान्ति बोध करने लगी थाबद एतको बीच-बीचमें आकर देख भी गई पर मेरी नींदमें कोई बाधा नहीं पड़ी।

दूसरे दिन थिङ्कानेसे उठनेपर देखा कि दोनों बहुत सारे फूल तोड़कर झोंट झार हैं। कमलजलाने आज मेरे सबसे राजकर्मसीको ही साथी बना लिया था। यह नहीं जानता या कि वहाँ भकैलेमें उनमें क्या-क्या बाँटें हुईं पर आज उन दोनोंका पेशवा देखकर मुझे बहुत लज्जा हुआ। मानो दोनों बहुत पुष्पनी सस्तिरों हैं, व जाने किन्तुने समझकी आत्मीय। कम दोनों एक साथ एक ही शब्दापर लोर्ड थीं—आतिके बिचारने वहाँ किसी तरहका रोडा नहीं भरकावा। इस बारेमें कि एक-दुसरेके हावका नहीं सपटी कमलजलाने मुसते ईश्वर कहा, “तुम कुछ ख्याल न करना गुसार्इ इतका प्रसन्न हवाय हो गया है। अमली बार मैं बड़ी बहन होकर पैदा हाऊँगी और इसके दोनों कान अच्छी तरहसे मक हूँगी।”

राजकर्मिने कहा “इतके सबसे मैंने भी एक धर्म कर भी है गुसार्इ, कि अगर मैं मर जाऊँ तो इसे वैष्णवीपनसे हस्तीका देकर तुम्हारी सेवामें निमुक्त होना पड़ेगा। मैं अच्छी तरह जानती हूँ कि तुम्हारे बिना मुझे मुक्ति नहीं मिलेगी और तब भूत बनकर बीबीके लिएपर पड़ी फिरिगी,—उधे सिन्धबाद ब्रह्मादेके कन्धेपर बूँदे देवकी तरह,—कन्धेपर बैठे-बैठे इसके हाथ सब काम कर सँगी, सब छोड़ूँगी।”

कमलजलाने सहाम्भ कहा, “तुम्हें मरनेकी जरूरत नहीं रहन, तुम्हें कन्धेपर बिने मैं हर बख नहीं बूम सँगी।”

उत्तरे बाब पीकर गीहरकी तन्वाधमें बाहर निकला। कमलजलाने आकर कहा “जगदा देर न करना गुसार्इ और उन्हीं भी साथ सेते जाना। इपर देवताका भोग तैयार करनेके लिए एक ब्राह्मण पकड़ आई हूँ। जैसा मरा है

है क्या ही आश्चर्य । उसे सहामता है। राजकुमारी सामने गई है ।”

“यह अच्छा नहीं किया । राजकुमारीका खाना तो हो जामगा, पर हमारे देवता ठपाते रहेंगे ।”

कमलप्राने इसके बीच काटते हुए कहा, “ऐसी बात न कहो गुसाई, उसके कानोंमें मन्त्र पढ़ जायगी तो फिर यहाँ सब भी ग्रहण नहीं करेगी ।”

हँसकर कहा, “बोबीत पन्ट भी नहीं बीते कमलप्रान पर तुमने उसका परचान किया है ।” उसने भी हँसकर कहा, “हाँ गुसाई, पहिचान किया है । करोड़ोंमें कोटोंपर भी तुम्हें ऐसा एक भी मनुष्य नहीं मिलेगा माई । तुम मान्य मान हो ।”

मोहरसे मुकामत नहीं हुई, वह सरपर नहीं था । उसकी एक विपदा बहिन कुनाम ग्राममें रहती है । नवीनने बताया कि वहाँ न जाने कौन-सा एक नया रोग फैला है, बहुत आदमी मर रहे हैं । दरिद्र बहिन कड़के-बच्चोंको लेकर भावतमें पड़ गई है, इसीलिए बचा-चाक करने वह गया है । आज इत-बार दिनोंत कोई लहर नहीं है, नवीन इसके मारे मरा जा रहा है, पर कोई भी रास्ता उसे नहीं सुझा । एकाएक बड़े मोरसे पीछे मारकर वह घेन गया । बोला, “आगर मेरे बाबू अब जिया नहीं हैं । मैं एक मूल्य किसान हूँ, कभी मौकत बाहर नहीं गया, महीं जानता कि कहाँ वह रोग है और कैसे जाना होता है, नहीं तो कभी पर-पड़ती हूँ बहिन तो भी नवीन अचरक पर न बैठ पाता । पञ्चवर्तीकी दिन-रात खुशामद करता हूँ कि म्हायज, दया करो, कभीन बेचकर तुम्हें तो रुपये देता हूँ, एक बार मुझे ले लो, पर वह धूर्त ब्राह्मण अब भी नहीं दिखता । पर वह भी कहे देता हूँ बाबू कि अगर मेरे आर्थिक मर मये तो पञ्चवर्तीके मकानको आग लगाकर जला दूँगा और फिर उठी आसमें आरामहवा करके मर जाऊँगा । इतने बड़े नमस्कारामको मैं जिया नहीं रहने दूँगा ।”

उसको सान्त्वना देकर पूछा, “जिसेका नाम जानती हो नवीन ।”

मपीनने कहा, “कैसक यह तुना है कि वह गाँव महिला जिसेके किती कोने में है । स्त्रोहनसे बैलगाड़ीमें काफी दूर जाना होता है ।” फिर बोला, “पञ्चवर्ती जानता है, पर ब्राह्मण यह भी महीं बतलाना चाहता ।”

मपीन पुरानो चिट्ठियों बीरद खण्ड कर गया, पर उनसे कोई पता नहीं पड्य । तर्क यह पता लगा कि वो महीने पहले निपवा बेटीकी लड़कीकी घाटीके

किए, चक्रवर्तीने गौहरसे बो ली रुपये बसुन किये थे ।

मूर्ख गौहरके पास बहुत सपना है, फकतः अश्रम्य दरिद्र उसे ठगेंगे ही—
इसके लिए धोम करना हुआ है, फिर भी इतनी बड़ी धीतानी बहुत कम नजर
आती है ।

नबीनने कहा, “उसके लिए तो बाबूका मरना ही अच्छा है, संसर्गसे बच
जायगा न । उधारका एक पैसा भी नहीं चुकाना पड़ेगा ।” वह अश्रम्य नहीं है ।

दोनों आदमी चक्रवर्तीके घर गये । इतना मिनपी, ऐसा मीठी बातें करने
बाध्य और ऐसा पर-बुल्लखतर भरा व्यक्ति संसारमें दुर्लभ है । पर बुद्ध हो जानेके
कारण स्मृतिशक्ति इतनी सीज हो गई है कि उसे किसी भी तरह याद नहीं
आया, यहैसक कि क्लोका नाम भी खराब न आया । बड़ी कोठियोंके बाहर
एक टाइम-टेबल आकर उत्तर और पूर्व बंगालके रेलवे स्टेशनोंके लकड़े लक
नाम पड़ गया । फिर भी वह स्मरण न कर सका । शुभ प्रकट करते हुए बोला,
“क्यों न जाने कितनी बीबें और सप्ताह-पैसा उधार से आते हैं बाबा, याद नहीं
नहीं रहता और फिर कोई बीबाने भी नहीं आया । मन ही मन करता हूँ कि
धिरप्प भगवान् हैं, वे ही इसका विचार करेंगे ।”

नबीन और बर्दाष्ट न कर सका, गरज उठा, “हाँ, वे ही तुम्हारा
विचार करेंगे । अगर न करेंगे तो फिर मैं करूँगा ।”

चक्रवर्तीने स्नेहार्द्र मधुर कण्ठसे कहा, “नबीन, बट्मूठके लिए क्यों
मायाब होतें हो मैसा, तीन पन बीठ गये, एक पन बाकी रहा है । यदि जानता
तो क्या इतना भी न करता । गौहर क्या मेरे लिए पड़ा है ! वह तो मेरे व्यक्त
की तरह है ।”

नबीनने कहा, “वह लव में नहीं जानता । तुमसे अन्तिम बार कहता हूँ
कि बाबूजीके पास से जानना है तो से चलो, नहीं तो किस दिन उनकी कोई तुरी
नजर मिलेगी, उस दिन खे तुम और रहा मैं ।”

चक्रवर्तीने प्रत्युत्तरमें कपाळपर हाथ मारकर शिर्ष इतना कहा, “तकदीर
नबीन, तकदीर । नहीं तो तुम मुझसे ऐसी बातें कहते ।”

अतएव, फिर दोनों आदमी लौट आये । मकामके बाहर खड़े होकर मैंने
आपस की कि अनुग्रह चक्रवर्ती घायब अब भी चुका से । पर कोई उत्तर नहीं
मिला, दरबानेकी आकृति सौंकर देखा कि चक्रवर्ती बड़ी हुई विषम रोककर

वर्षे सम्पत्तिके साथ मुक्ता तैयार कर रहा है।

गोहरका संघर्ष पानेका उपाय सोचते-सोचते जब मैं अस्तावेमें पहुँचा, तब करीब तीन बजे थे। देवताके कमरेके बरामदेमें औरतोंकी भीड़ जमी हुई थी। बाबाजीमेंमें कोई नहीं है, सम्भवतः सुप्रसन्न प्रसाद-सेवाके परिभ्रमते निर्जीव हो करी विश्राम कर रहे हैं,—चूँकि रातके बरफ फिर एक बार प्रसादसे जड़ना होगा, अतएव उसके लिए भी बरफ-संचय करना जरूरी है।

छोड़कर देखा कि भीड़के बीच एक हाथ देसनीवाला पण्डित बैठा हुआ है—पञ्चाना, पीपी लड़िया, लोख, पेंसिल इत्यादि गजनाके विविध उपकरण उसके पास हैं। सबसे पहले पद्याकी नजर ही मुझपर पड़ी, वह बिना ठट्ठी, “नये गुत्ताई आ गये।”

कमलकटाने कहा, “तब ही ध्यान गई थी कि गोहर गुत्ताई तुम्हें यों ही नहीं छोड़ देगे, उन्होंने क्या सिखाया।—”

राजकस्मीने उसका मुँह बचा बिना, “रहने दो बीवी, वह मत पूछो।”

कमलकटाने उसका हाथ इटाते हुए कहा, “धूम्र में मुँह खल गया है, पहले की धूँ-मिठी ठिरपर कम गई है—नहाना-बना हो गया क्या।”

राजकस्मीने कहा, “तेरा तो दूते नहीं, ‘इसलिए नवा-बो छेनेपर भी पता नहीं कैसेमा बीवी।”

“इसमें शक नहीं कि नवीनने हर प्रकारकी कोशिश की, पर मैंने स्वीकार नहीं किया, बिना नहाये-लाये ही बापस लौट आया हूँ।”

राजकस्मीने बड़े आनन्दके साथ कहा, “आतिथीने मेरा हाथ देखकर कहा है कि राजपानी होऊँगी।”

“क्या दिया।”

पद्याने कह दिया, “पौब बपया। राजकस्मी बीवीके आँखमें बँरे थे।”

मैंने हँसकर कहा, “मुझे देखी तो मैं उससे भी खण्डा बता सकता था।”

आतिथी उड़िया आया था, बहुत अच्छी बंगला बोलता था,—बंगाली कहा जा सकता है। उसने भी हँसकर कहा, “नहीं महाशय, अपनेके लिए नहीं, अपने को मैं बहुत कमाता हूँ। सब कहता हूँ कि ऐसा अच्छा हाथ मैंने कभी नहीं देखा। देखिएगा, मेरा हाथ देसना कभी सूख नहीं होता।”

कहा, “आतिथीजी, बिना हाथ देखे कुछ बता सकते हो।”

“बता सकता हूँ। एक पूरक का माय भीम्वि।”

“सिमरका पूरक।”

ज्योतिषीने हँसकर कहा, “सिमरका पूरक ही नहीं। मैं बता दूँगा कि आप क्या चाहते हैं।” कहकर उसने लक्ष्मिपाते से मिनटवत्क हिलाव लगाकर कहा, “आप एक खबर जानना चाहते हैं।”

“कोन-सी खबर।”

वह मेरी ओर देखकर कहने लगा, “नहीं, सामान्य-पुकरवमेकी नहीं, आप किसी अदमीकी खबर जानना चाहते हैं।”

“कौसी खबर है, बता सकते हैं।”

“बता सकता हूँ। खबर अच्छी है, वो एक दिनमें ही भिन्न आयगी।” सुनकर मैं ही मैं विस्मित हुआ, मेरा चेहरा देखकर उसने ही वह अनुमान किया।

राजकस्त्रीने कुछ होकर कहा, “देला न। मैं कहती हूँ कि ये बड़ी अच्छी गणना करते हैं, पर दुस्र जोग वो किसी बातपर विश्वास ही नहीं करना चाहते,—हँसकर उड़ा देते हो।”

कमलकान्ठने कहा, “अविश्वस्त फिलका। नये गुलाई, क्या अपना हाथ भी तो एक बार ज्योतिषीकी दिलाओ।”

मेरे हाथ फैलते ही ज्योतिषीजीने अपने हाथमें मेरा हाथ ले लिया, वो तीन मिनटवत्क परीक्षण किया, हिलाव लगाया, फिर कहा, “महाशय, देख्य हूँ कि आपके भविष्य एक बहुत बड़ी विपत्ति—”

“विपत्ति। क्या।”

“बहुत अच्छी। मरने-जीनेकी बात है।”

राजकस्त्रीकी ओर ताककर देखा कि उसके चेहरेपर खून नहीं है,—बदलते लोहर पड़ गया है।

ज्योतिषीने मेरा हाथ छोड़कर राजकस्त्रीसे कहा, “मैं, तुम्हारा हाथ एक बार और—”

“नहीं, मेरा हाथ अब नहीं देखना होगा, देख चुके।”

उसका तीस मागान्तर अत्यन्त स्पष्ट था। खुर ज्योतिषी औरत समझ गया कि हिलाव करनेमें उसने गलती नहीं की है। बोला, “मैं तो मैं दर्पक-यात्र हूँ, जो छाया पङ्गी बड़ी कईगा,—पर यह आपको भी शान्त किया था सकता है,

हस्की बिबि है—सिर्फ दल-बीठ रुपये लान करनेकी बात है ।”

“तुम हमारे कलकत्तेके मकानपर आ सकते हो ।”

“वहाँ न आ सकूँगा मैं, के जानेपर क्या चर्चूँगा ।”

“अच्छा ।”

देखा कि ग्रहके कोपके प्रति तो उसको पूरा विश्वास है, पर उसे प्रत्यक्ष कहेके बारेमें काफ़ी संदेह है ।

कमलकटाने कहा, “अबो गुम्हार, तुम्हारी बाय तैयार कर दूँ, बक हो गया है ।”

राजकर्मिने कहा, “मैं क्या करती हूँ बीबी तुम जब इनके पैरनेकी जमा ठीक कर दो और रखनसे कुछ तैयार करनेके लिए कह दो । कलसे तो उसके जमा भी नजर नहीं आई ।”

ब्योतिषीको लेकर सब कदरब करने लग्यो, हम बसे आये ।

दक्षिणके कुछे बरामदेमें मेरी रस्तीकी लाठ पड़ी है, रखनने हाथ-पैर की कुछ दिया, मुँह-हाथ धोनेको पानी ला दिया । कल सरेरेसे ही बेचारेको कामसे फुल्ल नहीं मिले है, फिर भी मासिकिन करती है कि उसकी छायातक मरि बीबी । मेरा विपक्षि-योग आत्म है, पर रखनसे पूछनेपर वह अचानक कहता ‘बी नहीं, विपक्षि-योग आपका नहीं—मेरा है ।’

कमलकटा नीचे बरामदेमें बैठकर गौहरका संवाद पूछ रही थी । राजकर्मि बाय ले आई, बेहरा बहुत भारी हो रहा है, सामनेके स्टूलपर प्याली रसक बोली, “देखो, तुमसे हजार दफा कह चुकी कि बन-जंगलोंमें मत जूमा करो,—आफ्त आते कितनी देर लगती है । गधेमें जोखत बाक और हाथ छोड़कर तुमसे प्रार्थना करती हूँ कि मेरी बात मानो ।”

असह्य पाय बनाते-बनाते राजकर्मिने धायर पड़ी सोचकर स्थिर किया । “बहुत अच्छी” का सूत्रा क्या अर्थ हो सकता है ?

कमलकटाने आश्चर्यके साथ कहा, “बन-जंगलोंमें गुम्हार कब गये थे ।”

राजकर्मिने कहा, “कब गये, क्या यह मैं देखा करती हूँ बीबी ! मुझे क्या हुनियासे और कोई काम मही है ।”

मैंने कहा, “देखा कभी नहीं है, सिर्फ अन्दाज है । ब्योतिषी बेरा अच्छी आफ्तमें डाक गया ।”

मुनकर रतन बूखी ओर मुँह फेर जमनीसे बच गया ।

राजकन्याने कहा, “बोसिपीका क्या सोच है, वह जो देखीया वही तो बताएगा ! संसारमें बिपक्षि-योग नामकी क्या कोई चीज ही नहीं है ! व्याजमें क्या कमी कोई नहीं पड़ता !”

इन सब प्रस्नोका उत्तर देना फ़िगल है । राजकन्याको कमलकान्ते मी पड़ नाम किया है, वह भी चुप रही ।

पायकी प्याली जपने हाथोंमें छेड़े ही राजकन्याने कहा, “दो-बार पल और घड़ी-सी मिट्टाई के व्याज !”

कहा, ‘नहीं !’

“नहीं क्यों ! ‘नहीं’ छेड़कर ‘हो’ कहना क्या मगबापने तुम्हें सिखाया ही नहीं !” पर मी मुँहकी ओर देखकर छद्म अभिप्रेत उद्दिष्ट कण्ठसे प्रजल किया, “तुम्हारी घोंनी आँखें इतनी व्याज क्यों दिखाई दे रही हैं ! नदीके छेड़े पानीमें महाकर हो नहीं जाये हो !”

“नहीं व्याज स्नान ही नहीं किया !”

“और क्यों खाया क्या !”

“कुछ मी नहीं खाया ! इच्छा भी नहीं हुई !”

जाने क्या सोचकर नजदीक व्याज उठने मी सिरपर हाथ रक्ता, फिर वही हाथ कुर्सेके मीठर मीठी छतरीके मजदीक डाककर कहा, “जो सोचा था ठीक वही है । कमजब बीबी, हेनो तो इनका धीरे गरम माखन नहीं पड़ रहा है !”

कमलकान्ता व्यस्त होकर उठी महीं । बीबी “जब का गरम हो गया तो क्या हुआ राम—बर क्या है !”

वह नामकरण करनेमें व्यस्त पड़ है । वह नया नाम मीरे कानोंमें मी पड़ा । राजकन्याने कहा, “इसके मानी बर जो है बीबी !”

कमलकान्ते कहा, “अगर बर ही हो तो तुम जोग पानीमें नहीं जा पड़ी हो ! हमारे पाठ आई हो, हम ही इसकी व्यवस्था कर देंगे बहन,—तुम्हें फिज करनेकी कोई जरूरत नहीं !”

जमनी इस अलंगत आकुल्यामें घूँसीके अभिचक्षित व्याज कण्ठन राजकन्या की प्रहृष्टि कर दिया । धर्मिण्या होकर उठने कहा, “जमनी बात है बीबी, पर एक तो वही डाकटर-बीज नहीं हैं, फिर हमें देना है कि यदि हमें कुछ तो

अप्य है, तो बस्ती आराम नहीं होता,—बहुत भोगना पड़ता है। फिर बन्धुमिश्र
मोक्षिणी न जाने कहांसे आकर खर दिख गया—”

“दिखा देने दो।”

“नहीं बीवी, मैंने देखा है कि इनकी जल्दी बातें तो नहीं फलती, पर असुम
बातें ठीक निकल आती हैं।”

कमलकान्ते स्मित हास्यसे कहा, “डरनेकी बात नहीं राखू, इस क्षेत्रमें
उत्तकी बात ठीक न होगी। लोहेसे ही गुहारें धूपमें घूमते रहे हैं, ठीक बन्धु
स्नान-स्नान नहीं हुआ, चाय-इसी कारण छीर कुछ गर्म हो गया है,—कम
सुबहक नहीं रहेगा।”

कान्तेकी मने आकर कहा, “मों, खोईपरमें बासन्त-रजोइया तुम्हें हुआ
रहा है।”

“आती हैं,” कहकर कमलकान्तकी तरफ कुछ दृष्टिगत करके वह पसी गई।

मैंने रोगके लक्षणमें कमलकान्तकी बात ही पड़ी। अब ठीक सुबह ही तो
नहीं गया, पर एक-दो दिनमें ही मैं स्वस्थ हो गया। किन्तु इस घटनासे कमल-
कान्तकी हमारी भीतरकी बातोंका पता चल गया, चाय-एक और व्यक्ति
को भी पता चल—स्वयं बड़े गुहारेंबीकी।

अनेके दिन कमलकान्तने हम दोनोंको आश्रममें बुलाकर पूछा, “गुहारें,
तुम्हें अपनी छातीका लाल बाद है।” निकट ही देखा कि एक यात्रीमें बैराग्यका
प्रभाव, बदन और कृष्णकी भांति रही है।

प्रश्नका जवाब दिया राजकान्ते, कहा, “इन्हें क्या लाफ मासूम होगा,
मुझे पार है।”

कमलकान्तने हँसते हुए कहा, “यह कैसी बात है कि एकको तो पार रहे
और दूसरेको नहीं।”

राजकान्तेने कहा, “बहुत छोटी उम्र थी म, इसीलिए। इन्हें तब भी ठीक
गान न था।”

“पर उम्रमें तो बही पड़े हैं, राखू।”

“ओह बहुत बड़े हैं। कुछ पोंच-छह लाल। मेरी उम्र तब आठ-नौ लालकी
थी। एक दिन यहाँमें माया पहनाकर मैंने मन ही मन कहा, “आजसे तुम मेरे
पूसा हुए। पूसा! पूसा।” कहकर मुझे इसारेसे दिखाते हुए कहा, “

देवता उठी बह मेरी मायाकी बही लड़े-लड़े का गये ।”

कमलकटाने धावकीसे पूछा, “पूछोकी माया किस तरह का गये ।”

मैंने कहा, “पूछोकी माया नहीं, पके हुए फलोंकी माया थी । जिसे रोमी बही का बापगा ।”

कमलकटाने हँसने लगी । राजकस्मीने कहा, “पर बाहीसे मेरी दुर्गति छूट हो गई । हर्ने लगे बैठे । इसके बादकी बातें मत जानना बाही बीबी,—पर छोटा बेटे कमला करते हैं वो बात भी नहीं है,—वे तो न जाने क्या-क्या लोचते हैं । इसके बाद बहुत दिनोंतक रोती-पीटती मटकती फिरी और तपस्य करती रही । आखिर मगवान्की बहा हुई, और वैसे एक दिन बुर ही बेकर एकएक करीन किया था, वैसे ही अकस्मात् एक दिन हायोंहाय बीटा भी बिना ।” कहकर उसने मगवान्के उदरसे प्रणाम कर लिया ।

कमलकटाने कहा, “उम्मी भगवान्की माया बड़े गुहारने मेनी है, आज जानेके दिन तुम दोनों एक-दूसरेको पना दो ।”

राजकस्मीने हाथ जोड़कर कहा, “इनकी इच्छा से जानें, पर इसके लिए मुझे आदेश न करो । बचपनकी वह मेरी एक रंगकी माया आज भी अक्सर बन्द करनेपर इनके उठी किछोर गलेसे छुट्टी हुई दिखाई देती है । भगवान्की ही हुई मेरी वह माया हमेशा बनी रहे बीबी ।”

मैंने कहा, “पर वह माया तो का बकी थी ।”

राजकस्मीने कहा, “हाँ बी देवता, इस बार मुझे भी का बाबो ।” कहकर हँसते हुए उसने चन्दनकी कबोरीमें अँगुलियों छुपेकर मेरे मस्तकपर छाप लगा दी ।

हम सब मित्रनेके लिए द्वारिकावासीके कमरेमें गये । वे न जाने किस प्रत्यक्षा पाठ करनेमें लगे हुए थे, आदरते बोले, “आओ मार बैठो ।”

राजकस्मीने बसिन्पर बैठकर कहा, “बैठनेका तक नहीं है गुहार । बहुत उपद्रव किया है इसलिये जानेके पहले ममस्कार कर आपसे क्षमाकी मित्रा भोगे-भार हैं ।”

गुहार बोले, “हम पैरागी आदमी हैं मित्रा से तो सकते हैं, दे महीं सकते । लेकिन फिर क्या उपद्रव करने आयोगी बचाओ सीरी ! आभयमें तो आज अन्धकार हो बापगा ।”

कमलकान्तेने कहा, “उन है गुहारें — सचमुच यही मासूम होमा कि आब कहीं भी बची नहीं बखी है, सब जगह अन्धकार हो रहा है।”

बड़े गुस्सेने कहा, “गान, आनन्द और हास-परिहासके कारण इन कई दिनोंसे ऐसा कम रहा था कि मानो हमारे चारों ओर विद्युत् दीपक जल रहे हैं—यह खैर कभी नहीं देखा। मैंने सुना, कमलकान्तेने तुम्हारा नाम ‘नये गुहारें’ रखा है, और मैंने इन्हीं नाम दिया है आनन्दमयी—”

इस बार उनके छद्मात्मों मुझे बाधा देनी पड़ी। कहा, “बड़े गुस्से, विद्युत्का दीपक ही आप लोगोंकी आँखोंने देखा है, पर बिनाके कर्ज-रन्नीमें उसकी कड़कड़ ध्वनि दिन-रात पहुँचती रहती है, उनसे तो क्या घृष्टि ! आनन्दमयीके सम्मुखमें कमसे कम रतनकी राह—”

रतन पीछे लड़ा था, भाग गया।

राजकस्मीने कहा, “इनकी चारों दुम न सुनो गुस्से, सुसते-वे दिन-रात ईर्ष्या करते हैं।” फिर मेरी ओर देखकर कहा, “इस बार जब आँकणी तो इस रोगी और अत्यधिक आदमीको कमरेमें ठाकन लगाकर बन्द कर आँकणी, इसके मारे मुझे कहीं बैन नहीं मिलती।”

बड़े गुस्सेने कहा, “नहीं आनन्दमयी, नहीं बनेगा, छोड़कर महीं आ सकती।”

राजकस्मीने कहा, “अवश्य आ सकती। बीच बीचमें मेरी ऐसी इच्छा होती है गुस्से कि मैं कसरी मर आऊँ।”

बड़े गुहारेंभी बोले, “यह इच्छा तो कृपावनमें एक दिन उनके मुँहसे भी निकली थी बहिन, पर वैसा हो नहीं सका। हाँ, आनन्दमयी, तुम्हें क्या वह बात याद नहीं है।—

मल्ली, दे आँखें मैं किसको कहे-याछाछकी सेवा।

वे जानें क्या बतलाओ तो—”

कहते-कहते वे मानों अत्यमनस्क हो गये। बोले, “छापे प्रेमके चारों हम लोग फिटना-सा जानते हैं। कैसा छद्मनामें अपनेको मुख्यये रखते हैं। पर तुम जान सकती हो बहिन इसलिये कहता हूँ कि तुम भिन्न दिन वह प्रेम भीहृन्मको अभ्य कर होगी, आनन्दमयी—”

सुनकर राजकस्मी मानो सिरर उठी, धरत खेहर बाधा,

“ऐसा व्याधीबाँद मत हो गुलार्ह, भरे भाग्यमें ऐसा न पड़े । बसिक बार व्याधीबाँद हो कि इसी तरह हँसते-खेचते इनके सम्मत् ही एक दिन मर जायें ।”

कमकम्पाने बात सँभलते हुए कहा, “बड़े गुलार्ह तुम्हारे प्रेमकी बात ही कर रहे हैं राजू, और कुछ नहीं ।”

मैंने भी सम्मत् दिया कि भाग्य भावोंके मायुक द्वारिकावासीकी विचार-धारा तब एक ओर पक्षपर खड़ी गई थी, वर ।

राजकस्मीने शुष्क मुँहसे कहा, “एक तो वह शरीर और फिर एक-न-एक ऐसा साथ साथ ही रहता है,—एकान्गी आदमी, किसीकी बात सुनना नहीं चाहते,—मैं रतनदिन किन्तु तरह बरी खामी खली हूँ दोरी, किसे बताऊँ !”

वह तो मैं मन ही मन उद्दिग्ध हो उठ्य । आपसे वक्त बातों ही बातोंमें कहँका पानी कहाँ पहुँच गया, इतका ठिकाना ही नहीं । मैं अनन्य हूँ कि मुझे अन्धदेवताके साथ विरा करनकी सम्मत्तक आत्मक्यानि लेकर ही इस बार राजकस्मी काशीसे आई है और लज्जामंदारके हाथ-परिहासके अन्तराहमें न अपने किन्तु अन्तर्धान कठिन दण्डकी आसंका उसके मनमें बनी रहती है जो किसी तरह मिटना ही नहीं चाहती । इसीको शान्त करनेके अभिप्रायसे मैं हँसकर बोध “जोगोंके अंगों में बुलसे-कलसे शरीरकी तुम जाहे जितनी निम्न क्यों न कर कस्मी, पर इस शरीरका विनाश नहीं है । तुम्हारे पड़े भरे बिना मैं मरनेका नां यह निमित्त है ।”

उमने बात लज्ज भी न करने ली, बसते मेरा हाथ पकड़कर कहा, “तब इन सबके सामने मुझे सूँघ लीन बार कसम लाओ । करो कि यह बात कभी छुट न होयी ।” कहते-कहते उठत औँत् डलकी दोनों औँत्लेंते कर पड़े ।

उनके सव अन्ध हो रहे । कसमके मारे उठने मेरा हाथ कस्मीसे छोड़ दिया और बगरदली हँसकर कहा, “इत अन्धमेंदे ज्योतिषीने छड़मूड ही मुझे इतना बय दिया कि—”

वह बात भी वह लज्ज म कर लकी और चेहरेकी हँसी तथा लज्जकी बाधाके होते हुए भी उसकी औँत्लेंते औँत्लुओंकी बूँद दोनों गालोंपर डूबक पड़ी ।

एक बार फिर सवते एक-एक करके विरा ली गई । बड़े गुलार्हने बचन दिया कि इस बार कलकत्ते जानेपर वे हमारे यहाँ भी पधारेंगे और पछाने कमी शर नही देय है, इसलिये वह भी साथमें आपगयी ।

स्टेशनपर पहुँचते ही सबसे पहले बड़ी 'कलमूँहा' ज्योतिषी नजर आया।
प्लेटफार्मपर कम्बल बिछाकर बड़ी धानसे बैठा है और उसके आसपास काफी ज्योग
बसा हो गये हैं।

पूछा, "यह मी साथ बसेगा क्या?"

राजकस्मीने दूखी ओर देखकर अपनी सज्जन हैंची छिया की। पर फिर
हिसाकर बताया कि "हाँ, आयगा।"

कहा, "नहीं नहीं आयगा।"

"स्पेकिन जानेसे कुछ मद्य न होग तो कुछ भी खे न होग। साथ बसने
खे न!"

"नहीं। मज्ज-कुछ कुछ भी हो वह साथ नहीं बसेगा। उसे खे कुछ देना
हो, है-दिखाकर बहीसे पिवा कर खे। यह धान्य करनेकी समता और साधुता
अगर उसमें हो भी, तो तुम्हारी बोलोंकी आदमें ही वह करे।"

"तो यही कह देती हूँ," कहकर रजनको उसे बुझानेके लिए मेज दिया।
नहीं बन्द्या कि उसे क्या दिया, पर वह पार मया रिसाकर और अनेक
भाजीबाज देकर हँसते हुए ही उसने पिवा की।

थोड़ी देर बाद ही ट्रेन आकर हाकिम हुए और हम कककतेको बरु दिवे।

१२

राजकस्मीके एक प्रसङ्गके उत्तरमें रूपोंकी प्रासिका किस्सा बताना पड़ा।
"हमारे बर्मा आफिससे एक ठोचे हलके कारवने मुइरीइमें खर्वस्व गँवा कर मेरे
हकठे किये हुए रूपमें उधार के किये थे और खुद ही उन्होंने यह खर्च की थी
कि सिर्फ खद ही नहीं, बल्कि अगर अच्छे दिन आये तो मुनाफेचा भी आया
दिस्ता देंगे। इस बार कककसे लौटकर रूपमें मँगनेपर उन्होंने कर्बका खोगुवा
करमा मेज दिया। बस यही मेरी पूँजी है।"

"वह कितनी है?"

"मेरे लिए तो बहुत है, पर तुम्हारे निकट अतिथय तुम्ह।"

"तुम्हें तो कितनी!"

"छात आठ हजार।"

"वह मुझे देनी होगी।"

इसे कहा, “यह कैसी बात है ! कभी तो दान ही करती हैं, ये हाथ भी फैलाती हैं क्या !”

राजकन्याने सहास कहा, “कभी अवश्य सहन नहीं करती और मनोगत समझकर संयासी-संन्यासीका विचार नहीं करती । अब तो रुपये ।”

‘क्या करोगी !’

“अपने खाने-कपड़ेकी व्यवस्था करूँगी । अबसे यही होगा मेरे जीवन रहनेका मूल-धन ।”

“पर इतने मूल-धनसे काय कैसे चलेगा ! तुम्हारे हाँके छुट जाँकर नौकरानियोंकी फत्रह दिनकी उनफत्रह भी तो इच्छे पूरी नहीं होगी । इतने अन्धाधुनिक-गुरु-गुरोहित हैं, वेतोर करण देवता हैं, बहुसंख्य विद्वानोंका भरण पोषण है — उनका क्या उपाय होगा !”

“इनके लिए कुछ मत करो, उनका धर्म बन्द न होना । मैं अपने ही मरण पोषणकी बात सोच रही हूँ । समझे !”

कहा, “तमस गवा । अबसे अपनेको एक मासामें भुज्याये रखना चाहती हो,—यही न !”

राजकन्याने कहा, “नहीं, सो नहीं । वह तब क्या दूसरे कामोंके लिए है । मेरे भविष्यकी पूँजी बही होगा जो अबसे तुम्हारे धामने हाथ पकड़नेपर सिमेगा । उल्टेसे मटेरेड लाऊँगी, नहीं तो उपवास करूँगी ।”

‘तो तुम्हारे माममें बही लिखा है ।’

“क्या लिखा है,—उपवास !” वह कह कर उठने लगे हुए कहा, “तुम सोच रहे हो कि साधारण-सी पूँजी है पर वह बिधा मैं जानती हूँ कि साधारणको ही कित तरह बढ़ाया जाता है । एक दिन समझागे कि मेरे धनके बारेमें तुम जो रुबेह करते हो वह तब नहीं है ।”

“यह बात तुमने इतने दिनोंसे क्यों नहीं कही !”

“इसीलिए नहीं कही कि विश्वास नहीं करोगे । मेरा क्या तुम बुद्धाई के बारे में छुटका नहीं, पर तुम्हारी धृष्टिसे भी छलती पट जाती है ।”

स्पष्टीक हीकर कहा “अबानक आज ये तब बार्ते क्यों कह रही हो कन्या !”

राजकन्या धन-मरतक मेरे चेहरेकी ओर देखती रही फिर बोली “यह बात तुम्हें आज एकएक खटकी है पर मेरी तो रात-दिन यही भावना रही है ।

तुम क्या वह समझते हो कि बचपन की बच्चाई ही मैं बेपी-बेबताओं की सेवा करती हूँ ? ठठ पनका एक जगु भी अगर तुम्हारी बिकल्पमें मैं खर्च करती तो तुम्हें क्या तकती ? अवश्य ही मेरे पाससे ममबान तुम्हें छीन लेते । इस बातको स्मर मानकर तुम कहा बिस्वास करते हो कि मैं तुम्हारी ही हूँ ।”

“बिस्वास तो करता हूँ ।”

“नहीं, नहीं करते ।”

उसके प्रतिपादका तात्पर्य नहीं समझ । वह करने लगी, ‘कमबख्ताते तुम्हारा दो दिनका परिषद है, तो मैं तुमने उसकी लारी कहानी मन बजाकर सुनी, उसकी लारी बाबापे मिठ गए,—वह कुछ हो गई । पर तुमने मुझसे कभी कोई बात नहीं पूछी, कभी तो नहीं कहा कि बच्ची, अपने जीवनकी लारी बचपनमें जाकर बतानी । क्यों नहीं पूछा । तुम बिस्वास नहीं करते मेरा और न बिस्वास कर सकते हो अपने ऊपर ।’

कहा ‘उससे भी नहीं पूछा, जानना भी नहीं चाह । उसने खुद ही बचपन की दुनार है ।’

राजकस्मीने कहा, ‘तो भी सुनी तो है । वह पता है इसलिए उसकी कहानी नहीं सुनना चाहते थे, क्योंकि बक्यत नहीं थी । पर मुझसे भी क्या पढ़ी कहानी ?’

“नहीं, वह नहीं करीगा । पर क्या तुम कमबख्ताकी बेटी हो ? उसने जो कुछ किया है तुम्हें भी पढ़ी जाना शक्य ।”

‘इन बातोंमें मैं भूझनेवाली नहीं । मेरी लारी बाँट तुम्हें सुननी ही पड़ेगी ।’

“वह तो बड़ी मुश्किल है । मैं सुनना नहीं चाहता तो मैं सुननी पड़ती ।”

“हाँ, सुननी पड़ेगी । तुम्हारा लबाक है कि तुमनेपर शक्य मुझे प्यार नहीं कर सकागे या मुझ बिदा देनी पड़ेगी ।”

‘तब तुम्हारी बियेबनाई अनुसार वह क्या तुम्हें बात है ?’

राजकस्मी ईश पड़ी, बोली, “नहीं यह नहीं होगा, तुम्हें सुनना ही पड़ेगा । तुम मुझ हो, तुम्हारे मनमें क्या रहनी भी शक्ति नहीं है कि उचित मायम होने पर मुझ दूर कर लो ।”

इस अश्रमकाको अश्रम स्पष्टतासे कबूक करते हुए कहा, ‘तुम दिन रातिकाकी पुर्णोका उल्लेख करके मुझे बयमानित कर रही हो बच्ची, ये भी

पुस्य हैं,—नमस्कार करने योग्य हैं। उनकी पद-भूमि की शोभिता भी मुझमें नहीं। तुम्हीं विद्या देकर मैं एक दिन भी नहीं रह सकूँगा, चायव उसी बल से या देने के लिए सोच पड़ी या और तुम्हने बरि 'ना' कह दिया तो मेरी दुर्गति की छिमा नहीं रहेगी। अतएव, सब मयाबह विषयों की आशोचना बन्द करो।”

राजकस्मीने कहा, “तुम्हें भाव्य है, वचनमें मीने मुझे एक मैफिक राजकुमारके हाथों सेन दिया था।”

“हो और एक राजकुमारकी ही कहानी वह खबर बहुत दिनों बाद सुनी थी। वह मेरा मित्र था।”

राजकस्मीने कहा, “हो, वह तुम्हारे मित्रका मित्र था। एक दिन नाराज होकर मैंने मोंको विद्या कर दिया और उन्होंने घर छोड़कर मेरी मृत्यु की मन्त्राह देखा ही। वह खबर तो सुनी थी।”

“हो, सुनी थी।”

“तुमकर तुम्हने क्या सोचा था।”

“छेना था, अह, बेचारी कस्मी मर गई।”

“वही ! और कुछ नहीं !”

“और पद भी सोचा था कि काशीमें अपनेके कागल और कुछ न भी हो लक्ष्मि तो हुई ही। अह !”

राजकस्मीने नाराज होकर कहा, “अच्छे, सही अह-अह करके तुमस प्रकट करनेकी जरूरत नहीं। मैं कसम न्याकर कह सकती हूँ कि तुम्हने एक बार भी 'अह' न की थी। सो, मुझे सूकर कहो तो।”

कहा, “इतने दिनों परछेकी बातें क्या ठीक-ठीक पाद रखी हैं ! की थी, यही तो बाद आता है।”

राजकस्मीने कहा, “सौर, वह करके इतनी पुरानी बातें अब पाद करनेकी जरूरत नहीं, मैं जानती हूँ।” फिर थोड़ी देर ठहरकर उठने कहा, “और मैं ! रोब मुबद विरचनापत्नीसे रो-रोकर कहती थी, मगवान्, मेरे भाग्यमें तुम्हने यह क्या क्रिम दिया ! तुम्हें साखी बनाकर बिलकै गलेमें आस बांधी थी क्या इत अधनमें उल्टे फिर कभी मिलना नहीं होगा ! निरकाकतक क्या ऐसी अप्रतिष्ठा मैं ही दिन बिताने पड़ीने ! उन दिनोंकी बातें पाद आते हो आज भी आस हत्या करके मर जानेकी इच्छा होती है।”

उसके धरौली ओर देसकर खोस बोव बुझा, पर वह सोचकर चुप हो रहा कि मर निषेध नहीं मानेगी।

इन बातोंका उसने कितने दिनों मन ही मन कितनी तरहसे उलट-फुट कर सोचा-विचार है, उसके अफराफ-आराफ़मस मनने नीरव ही कितनी मर्मांतक बेदना करने की है, फिर भी इस इरादे कि कुछ करते कुछ न हो जाय, कुछ खादिर करनेका साहस नहीं किया है, इतने दिनोंके बाद जब वह पर धाँक कमलकलाते अर्चन कर पाई है। अपनी प्रसन्न कलुषताको भनाइत करके वैष्णवीने मुक्ति पा ली है, राजकन्या भी भाव मग और बड़ी मर्मांतकी बंधनोको तोड़कर उसकी तरह खरब होकर कभी रोना चाहती है, फिर उसके भ्राम्यमें कुछ भी क्यों न हो। यह बिना उसे कमलकलाते ही है। संसारमें इस एक व्यक्तिके आगे इस दर्शिता नारीने फिर छुटकार अपने दुष्कर्मके समाधानकी मित्रा माँगी है, यह बिना किसी संशयके समस्त बनेपर मुझे बहुत उत्साह मित्र।

कुछ देर दोनों ही चुप रहे। सहसा राजकन्या बोली, "राजकुम एकाग्रक मर गया, मीने मुझे फिर बेचनेका परम्परा रखा—"

"इस बार किसके हाथ?"

"एक दूसरे राजकुमारके—दुसरे उन्हीं मित्र-रखके साथ—कितने साथ साथ ठिकार करनेके लिए आते हुए—क्या हुआ, बार नहीं है?"

"आबर नहीं। बहुत पुणनी बात है न। पर उसके बाद?"

राजकन्याने कहा, "यह परम्परा क्या नहीं। मैं जाती, 'मैं तुम पर खोजी।' मीने कहा 'इसबार अपने को ले चुकी हूँ।' कहा, 'वह अपना बेचकर तुम देव खोजी प्रेमो। दयावीका अपना भावे कैसे होमा मैं चुका हूँगी। भाव रातकी यात्रीसे ही तुम बिदा न होगी मी, तो कल खेरे ही मैं अपनेको बेचकर गया माताके पानीमें डुबा हूँगी। मुझे तो तुम जानती हो मी, सड़ा कर नहीं दिखा रही हूँ।' मी बिदा हो गई। उन्हींकी सुबानी मेरी मीठकी रात्र सुनकर तुमने कुछ प्रकट करते हुए कहा था, 'आह! बेचारी मर गई।' पर बारबार वह घुब ही कुछ हैसी और बोली, "तब होती तो तुम्हारे मुँहसे निकलती हुई पर 'आह' ही मेरे लिए बहुत थी, पर जब जिस दिन राजकुम मर्क्यो, उस दिन तो बूँद खोस कर गिराना। कहना कि संसारमें अनेक बार-बपुमीने अनेक मायामें बरबी है, उनके प्रेमसे संसार पवित्र—परिपूर्ण हो रहा है, पर

शुक्ल्य राजकुमारोंने अपनी मौ बर्बकी उल्लमें उस किछोर बरको एक मनसे भिन्ना ब्यादा प्यार किया था, इस संसारमें उठना ब्यादा प्यार कमी किसीने किसीको नहीं किया।—कहो कि मेरे कानोंमें उस बक यह बात कहोगे ! मैं मरकर भी सुन लूँगी।”

“वह क्या तुम तो रो रही हो !”

उसने झोंझोंके झोंझ झोंझते पोंछकर कहा, “तुम क्या सोचते हो कि इस निरुपाय बन्सीपर उसके आधीन स्वकनोंने भिन्ना ब्यादा प्यार किया है, उसे अन्तर्गामी भगवान् देख नहीं सके !—इसका म्याद वे नहीं करोगे !—झोंझें बन्द किये रहोगे !”

कहा, ‘सोचता तो हूँ कि झोंझें बन्द किये रहना उचित नहीं है, पर उनकी बातें तुम लोग ही बन्सी तरह बानसी हो, मेरे जैसे राजकुमारोंका परामर्श वे क्यों नहीं लेते !”

राजकुमारोंने कहा, “मन्नाह !” पर दून्ने ही क्षण गम्भीर होकर कहा, “अच्छा लोग कहते हैं कि श्री गौर पुरुषका धर्म एक म होनेसे काम नहीं चलता, पर धर्म-धर्ममें तो मेरा और तुम्हारा सम्पर्क र्ध्व और नेबले जैसा है। फिर मैं हम ओलोंका कैते बलता है !”

“तौप-नेबलेकी तरह ही बलता है। इस ब्यादमें ब्यामसे मार बाबनेमें बड़ी सज्जद है। इसलिये एक ब्यादि दून्नेका बध नहीं करता निर्मम होकर विदा कर देता है,—तब जब कि वह आर्षका होती है कि उसकी धर्म-राज्यामें विप्ल पड़ रहा है।”

“उसके बाद क्या होता है !”

हँसकर कहा “उसके बाद वह कुछ ही रोते-रोते बापल ब्याता है, रौतोंमें टिनका ब्याकर कहता है कि मुझे बहुत लम्बा मिय चुकी है। इस बीबनमें अब इतनी बड़ी मूक नहीं करूँगी। गया मेरा अर-राय शुद्ध पुण्डित,—मुझे ब्या करो।”

राजकुमारों मौ हँसी बोली “पर लम्बा मिय तो जाती है !”

‘हाँ मिय जाती है। पर तुम्हारी कहानीका क्या हुआ !

राजकुमारोंने कहा ‘कहती हूँ।’ लक्ष-भर मेरी ओर निष्पन्न नेबोले देल कर कहा, ‘मैं देल प्यारी गई।’ उन दिनों मुझे एक बूढ़ा जल्लाद गाना-बयाना

मिलाता था। वह बीयाही था। किसी जमानेमें संभाली था, पर इच्छीछ देकर फिर संभाली हो गया था। उसके धर्म में मुलजमान की थी, वह मुझे नाच सिखाने जाती थी। मैं उसे बाधा कहती थी और मुझे तबमुख वह बहुत प्यार करता था। रोकर कहा 'बाधा, तू मेरी रक्षा करो, यह सब अब मुझसे न होमा।' वह गरीब धारमी था। एकाएक ताहल न कर सका। मैंने कहा कि मैं पात बहुत अपना है उससे कापी विनोदक एक आशमा। फिर माम्बमें जो कहा होगा, वह होगा। पर अब बड़े भाग बड़े। इसके बाद उसके साथ किसी जमाने धूम — हल्लाहाल, कलमक, किसी जमाने, कबपुर, बहुत, — कलमें इस पदनामें आकर आशमा किया। आधा अपना एक महाजनकी गद्दीमें आकर पड़ा और आगे अपनेसे एक अनिहारी और कपड़ेकी दुकान कोक की। मजान करीबकर बहुतको उधार किया, उसे अकर स्त्रुयमें मर्ती कर दिया और बीदाके लिए जो कुछ करती थी वह तो तुमने कुछ अपनी कौलोंसे देना है।"

उसकी कहानी सुनकर कुछ देरतक लम्ब रहा, फिर बोला "तुम करती हो इच्छीछ आशमा नही होता पर और कोई कहा तो समझता कि किने एक अनगदत हठी कहानी सुन रहा है।"

राक्यसीने कहा, "मैं शायद छठ नहीं बोल सकती।"

कहा "शायद बोल सकती हो, पर मेरा विस्वास है कि तुमने आकलन नहीं वाला।"

"वह विस्वास क्यों है।"

"क्यों। तुम्हें डर है कि हठी प्रत्येक करनेके कारण बीते कहीं देखना वह न हो जाने और तुम्हें दण्ड देनेके लिए कहीं मेरा अकस्मात् न कर बैठे।"

"मेरे मनकी बात तुमने बीते जान की।"

"मेरे मनकी बात भी तो तुम जान लेती हो।"

"मैं जान सकती हूँ, क्योंकि वह मेरी रात-दिनकी भावना है, पर तुम्हारे तो वह नहीं है।"

"भगर हो लो लुप्त होओगी।"

राक्यसीने फिर दिखाकर कहा, "नहीं होऊँगी। मैं तुम्हारी बानी हूँ। रातीको इससे आशा मत रखना, मैं बही आरती हूँ।"

उत्तरमें कहा, "तुम उस चुपकी अनुभव हो, — बही

संस्कार हैं।”

राजकन्यामीने कहा, “मैं ऐसी ही हो सकूँ और हमेशा ऐसी ही रहूँ।” या कहकर खजमर ली और देखा फिर कहा “तुम सोचते हो कि इस मुमकी ओर मैंने नहीं देखा है ! बहुत देखी है । परकि तुम्हींने नहीं देखी है और देखी मी तो बादरते । इनमेंसे किसीके साथ मुझे बहक लो, तो देखूँ कि तुम किसी रह सकते हो ! जमी मुझसे मजबूत करते हुए कहा था कि बाँतोंमें दिनका दबाकर आती थी, तब तुम दस हाथ दूरने बाँतोंमें छिपकर बचाने आओये।”

पर जब इसकी मीमांसा हा ही नहीं सकती तब समझा करनेसे कहा खजमर ली यही कह सकता हूँ कि उनके बारेमें तुमने अत्यन्त अविचार किया है।”

राजकन्यामीने कहा ‘अविचार अगर किया हो तो मी कह सकती हूँ कि अत्यन्त अविचार नहीं किया । ओ गुमार्ह, मैं मी बहुत भूमी हूँ, बहुत देखा है तुम ज्येष्ठ वहाँ अपने हो वहाँ मी हमारी दस ओड़ी आँखें खुली हुई हैं।”

‘पर जो कुछ देखा है वहीन अपनेसे देखा है, इसलिए जब गलत देखा है दस ओड़ी मी भ्रम है।”

राजकन्यामीने ईच्छे हुए कहा, “कहा कहूँ, मेरे हाथ-पैर बंधे हुए हैं, वहाँ तो ऐसे बड़े हाथों सेटी कि अत्यन्त म भूछते । पर जाने दो, जब मैं उस मुमकी तब हमारी दासी होकर ही रहती हूँ, तब हमारी सेवा ही मेरे लिए सबसे बड़ा काम है । पर तुम अपने बारेमें क्या सो न सोचने दूँगी । संसारमें तुम्हारे लिए बहुत काम है, सबसे से ही करने होंगे । इस अम्बामिनीके पीछे तुम्हारा कोई बल तब और मी बहुत कुछ नष्ट हो गया है, अब मैं और वह नहीं करने दूँगी।”

कहा, “इसीलिए तो मैं अतिनी असी हो सकूँ उठी पुपनी नौकरीपर लाकर हाथिर हो जाना चाहता हूँ।”

राजकन्यामीने कहा, ‘नोकरों मैं तुम्हें नहीं करने दूँगी।”

“पर मनिहारीकी वृकान मी मैं नहीं बचा सकूँगा।”

“क्यों नहीं बचा सकते ?”

‘परका कारण तो यह है कि श्रीकृष्ण राम मुझे बच नहीं रहता, दूरे, राम सेना और सैन्य हो हिरास करके बाकी पैसा ज्येष्ठ देना तो और मी अत्यन्त है । वृकान तो उठ ही आयगी, अगर लरीबशारीके साथ साठी न बच

बाप तो मनीसत है।”

“तो कपड़ेकी एक टुकाम करो।”

“इतने अच्छे हैं कि बंगाली और माछुओंकी एक टुकान करा दो, मेरे लिए उते बगाना बना आसान होगा।”

राकटसमी हँस पड़ी। बोली, “भन बगानकर इतनी आराधना करनेके बाद भी भन्तमें भगवान्ने मुझे एक ऐसा अकर्मण्य मनुष्य दिया जिसके द्वारा सखारका इतना का भी काम नहीं हो सकता।”

कहा, “आराधनामें त्रुटि थी। उते सुधारनेका बक है, अब भी तुम्हें कर्मों आदमी पिक सकता है—काधी दुन्दर, लस्य, बन्ध-बौड़ा बगान जिसे न कोई इस सबेला और न उग ही सकेगा जिसका कामका मार देकर निश्चिन्त, हाथमें स्वभावैसा छोड़कर निमग्न हुआ या सकेगा। जिसकी खबरखारी नहीं करनी होगी, मीढ़में जिसे लो देनेकी आहुति नहीं जिसे सखारका तृप्ति, भावन करकर बानन्द,—‘हो’ के बगाना लो ‘ना’ बोलना ही नहीं जानता—”

राकटसमी गुणगुण मेरे मुँहकी तरफ देख रही थी, अकस्मात् उसके लारे लरीयें बढि उठ जाये। मैंने कहा “जरे बह क्या।”

“नहीं, कुछ नहीं।”

“कॉप लो उठी।”

राकटसमीने कहा, “मुँहबानी ही दुमन लो लखीर लीची है, उसका बगार भाषा लो छल हो लो खबर मैं मारे डरके ही मर जाऊँगी।”

“पर मेरे जैसे अकर्मण्य आदमीको केकर दुम क्या करोगी।”

राकटसमीने हँसी हसकर कहा, “करेंगी और क्या। मयवान्को कोहूँगी। और देनेका बन्धी-मुन्दी खबर मर्जी। इस बगममें और लो कुछ आँछोंसे दिखाई नहीं देता।”

“बसिक इतने अच्छे का बरी है कि दुम मुझे मुछरीपुरके बसादेमें मेव हो।”

“उसीका दुम फान-का उपकार करोगी।”

“उमके दूध लोड़ लिया करूँगा और बैकालका प्रसाद पाकर निन्दा हूँ पका रूँगा। इसके बाद वे उठीं बहुतकई लगे मेरी क्या किसी दिन घामको दीरङ्ग बना जायगी,—जिसे दिन

दिन दीप न बसेगा । गुह्रके पूज सोइकर ठहके पाससे कमलकटा सब निकसेगी तो कभी एक मट्टी मलिकाने पूज बिलेर देखी और कभी कुन्दके पूज । यदि कभी कोई परिचित चला भूजकर आ व्यवसा तो उसे समाधि दिलाकर करेगी, यहाँ हमारे नये गुहार रहते हैं,—यहाँ ओ कर ऊँची बगह है, जहाँ मलिकाने सले और कुन्दके ताजे फूलोंके साथ भिजकर छरे हुए बकुलके पूज पाने हुए हैं—वही ।”

राजकस्मीकी ओम्मेंमें ओम् भर आवे, पूज, “और वह परिचित व्यक्ति तब क्या करेगा ?”

मैंने कहा, “वह मैं नहीं जानता । हो सकता है कि बहुत-सा बप्पा लख कर मन्दिर बनवा आवे—”

राजकस्मीने कहा, “नहीं ऐसा न होगा । वह ठर बकुलके लगेको छेद कर जहाँ न जावगा । पेड़की हर शाखपर पक्षी ककरब करेगे, गमना यावेगे बड़ेंगे—तैकहीं सले पते सली हुई शाखें गिरावेगे—उन लखको लक करनेका मार ठहर रहेगा । गुह्र चुनकर और साफकर फूलोंकी भाव्य भूमिप, लकको लकके सा आनेपर उन्हें बैलब कबिरोंके गीत सुनावेगा फिर लक आनेपर कमलकटा लीचीको लुकाकर करेगा हमें एकत्र करके समाधि देना, जहाँ अन्तर न रहने पावे, कलक-कलक न पड़वाने आवे । और वह लो बप्पा, इनसे मन्दिर बनवा देना, चला-हलकी मूर्ति प्रतिष्ठित करना, पर कोई नाम मत लिखना, कोई बिह मत रलना,—किसीकी मालूम न होने पावे कि कौन हैं और कइसे आवे ।”

वहा, “करमी, तुम्हारी लखीर लो हा गई और मी मधुर, और मी सुन्दर ।”

राजकस्मीने कहा “क्योंकि यह लखीर लिफ बालोंसे मही गढ़ी गई है गुहार, वह लख लो है और लहीपर दोनोंमें लक है । मैं कर लईली, पर तुमसे नहीं लेगा । तुम्हारे हाथ अकित बालोंकी लखीर लिफ बाँट होकर ही रह आवेगी ।”

“कैसे आना ?”

“अनली हूँ । खप तुमसे भी कपला जानती हूँ । यह लो मेरी पूजा है, मेरा पान है । पूजा होय करके फिसके पैरोंपर लक बहाती हूँ । फिसके पैरोंपर पूज देती हूँ । तुम्हारे ही लो ।”

मीसे रलीहयेकी पुकार आह, “माँ, एतन नहीं है, बायब पानी पैरार

हो गया ।”

“आती हूँ ।” वह भासि पौष्टकर वह उसी वक्त चली गई ।

कुछ देर बाद चायकी प्याली के आई और उसे मेरे सामने रखकर बोली,

“तुम्हें दिखावे पढ़ना अच्छा लगता है, तो अबसे बही क्यों नहीं करते ?”

“उससे रुपये तो आवेंगे नहीं ।”

“रुपयोंका क्या रोमा ? रुपया तो हम ओगोंके पास बहुत है ।”

कुछ बहकर कहा, “ऊपरवाला यह दक्षिणका कमरा तुम्हारे पढ़नेका कमरा होगा । आनन्द देकर दिखाई तरीककर आवेंगे और मैं अपनी मनके मुत्तारिक लगाकर रखूंगी । उसके एक बगलमें मेरा सोनेका कमरा होगा, और दूसरी ओर अक्षुब्धीका कमरा । वह, इस कमरे में पड़ी मिश्रण है,—इसके बाहर मेरी हडि कभी आय ही नहीं ।”

पूछा, “और तुम्हारा रसोइरा ? आनन्द संस्थापी आदमी है, उबर नकर न रखोयी तो उसे एक दिन भी नहीं रखा जा सकेगा ।—पर उसका पता कैसे मिले ? वह कब आवेगा ?”

राजकस्मीने कहा, “कुछापीजीने पता दिया है, कहा है कि आनन्द बहुत अच्छी आपनो । इसके बाद उस भिन्नकर गंगामाटी आवेंगे और बही कुछ दिन रहेंगे ।”

कहा, “समस्त जो कि बाँ बाँ ही गई; किन्तु उनके निष्कट करते हुए इस बार तुम्हें धर्म नहीं आवेयी ?”

राजकस्मीने कुठित हाथसे फिर दिखाकर कहा, “पर उनमेंसे तो कोई भी वह नहीं जानता कि काशीमें बाक बगैर क्यकर मेरे स्वांग बनाया जा । बाक अब बहुत-कुछ बढ़ गये हैं, पता नहीं यह सकता कि कभी कटे थे, और फिर मेरे तारे बन्धाय और तारी और काका बुर करनेके लिए तुम भी तो मेरे साथ हो ।”

कुछ झरकर बोली, “सब मिलाई है कि वह लग्नामिनी माव्यी फिर और आई है और ताम आई है अपने बसिको । उसके लिए एक हार गढ़वा डूयी ।”

कहा, “ठीक है, गढ़ा देना किन्तु बहो जाकर फिर अगर सुनन्दाके फले पद जाओ—”

राजकस्मी बन्दीसे बोळ उठी, “नहीं जी नहीं, सब वह कर देता है

मोह व्यर्थ बुर हो गया है। बाप रे बाप, ऐसी बम-भुदि भी कि रात-दिन न तो मौलोंके ब्योस ही रोक सकी, न जाना दी ला सकी और न तो चली। वही बहुत है कि पागल नहीं हुई।" फिर उसने हँसकर कहा, "तुम्हारी बन्सी चाहे लौ हो, लेकिन बस्तिर मनजी नहीं है। उसने एक बार भिसे सस्य समस्त लिया, पर उस उससे कोई दिया नहीं चढ़ता।" कुछ सच नीरव रहकर फिर बोली, "मेरा सारा मन मामो इस बत्त बानन्दमें डूबा हुआ है। हर बत्त ऐसा बग़्गता है कि इस औकनका एक-कुछ भिन्न गया है, अब मुझे कुछ नहीं चाहिए। यदि यह मग़्गान्दा निर्देश नहीं तो और क्या है, बत्तको ! प्रतिदिन पूजा कर देवताके चरणोंमें अपने किए कुछ कामना नहीं करती, केवल वही प्रार्थना करती हूँ कि ऐसा बानन्द संसारमें सबको भिसे। इसीलिए तो बानन्द देवताको कुछ भिन्न है कि उसके काममें अपने चोड़ी-बहुत सहायता करूँगी।"

"अन्धी बात है, करो।"

राजकन्सी अपने मनमें न जाने क्या सोचने लगी फिर सहा कह उठी,—
 "देखो इस मुनन्दाके जैसी अन्धी निर्धोम और सस्यवादी और कोई दूसरी औरत भिने नहीं देखी, पर बकलक उसकी बियाही गरमी न पायगी तबतक वह बिया किसी काम नहीं लगेगी।"

"पर मुनन्दाको बियाका बमंड तो नहीं है।"

राजकन्सीने कहा, "नहीं, वृषोंकी तरह नहीं है,—और यह बात भिने कही भी नहीं। वह फिटने लोको फिटनी शस्त्र-कपास, फिटने उपासमान जानती है। उसके मुँहसे मुन-मुनकर ही तो मेरी यह चारणा हुई थी कि मैं तुम्हारी कोई नहीं हूँ हमाय सम्मन्ध हुआ है,—और विज्ञात भी तो यही करना चाहता था,—पर मग़्गान्दाने मेरी गहन पकड़ कर समस्त दिया कि इच्छे बढ़कर भिप्पा और कुछ नहीं है। इसीसे समस्त को कि उसकी बियामें कहीं अपरदस्त भूष है। इसीलिए देखती हूँ कि वह किसीको सुनी नहीं कर सकती, तर्क हुआ ही दे सकती है। उसकी क्तिनी उससे बहुत बड़ी है। लौकी-सादी है, पदना भिपना नहीं जानती, पर दिक्में दया-माया भरी हुई है। फिटने दुस्ती और परिद परिवारोंका वह लुङ्ग-छिपकर प्रतिपादन करती है —किसीको पता भी नहीं चढ़ता। गुप्ते-परिवारके साथ को एक सुप्पवत्प हो गई, वह क्या कमी मुनन्दाके बरिप हो सकती थी ? तुम क्या यह सोचते हो कि वह तैय दिग्गकर

मजान छोड़कर बड़े बानेके कारण हुई है ! कमी नहीं ! यह तो उछकी बड़ी देवराणीने अपने पतिके पैरों पर और रो-बोकर किया है ! सुनवाने सारी दुनिया के सामने अपने बड़े चेठको खोल करके खोला कर दिया,—वही क्या शास्त्र-विश्वाका कुछ है ! उसकी पोथीकी बिषा बरतक मनुष्योंके मुल मुल, मर्हई सुपई, पाप-पुन्य ओम-ओहई साथ धर्म-अस्व नहीं कर पाती तबतक पुनर्जन्म के हुए कर्म-अस्व बानेका एक मनुष्योंको बिना कारण छेईगा, बरबाचार करेगा और तुम्हें बहावे देती हैं कि संसारमें किसीका भी कस्याव नहीं करेगा ।”

वे बातें सुनकर विस्मित हुआ, पूछा, ‘यह सब तुमने सीखा किससे ?’

राजकन्याने कहा, ‘क्या मासुप किछसे, चापद तुमसे ही । तुम कुछ करते नहीं, कुछ मोंगते नहीं, किसीपर और नहीं बाधते । इतीसिय तुमसे सीखना सिक् सीखना मही है, वह तो स्वभावमें पाना है । इअत् एक दिन आरचर्यके साथ सोचना पड़या है कि वह सब करने आया ! पर इते जाने दो, इस बार बरकर बही हुआपी-गईपीते मित्रता करूँगी और उस दफ्त उनकी मनोरंजना करके भी गच्छी की है, अपनी बार उसे मुपारूँगी । कसोगे न मंगुप्यदी !”

‘किन्तु क्यों ? नफ्दी !’

‘अर वह नौफदी ! अभी तो कहा कि मैं तुम्हें नौफदी नहीं करने दूँगी ।”

‘कस्सी, तुम्हारा स्वभाव खूब है । तुम करती कुछ नहीं, पारती कुछ नहीं, किसीपर और भी नहीं करती,—बिनाइ बैभव-सहनशीलताका समूना सिक् तुम्हारे ही निकट सिद्धा है ।”

‘इतीसिय क्या जिसकी ओ इच्छा होगी, उसीका अनुपोदन करना पड़ेगा ! संसारमें क्या और किसीका मुज-मुल नहीं है ! तुम्हें सब-कुछ हो !”

‘ठीक कहती हो, किन्तु मंगया ! उसने प्येका मय नहीं किया । अगर उस दुर्दिनमें आधर देकर वह न बचावो तो धावद आब तुम मुसे पारती ही नहीं । आज उसका क्या हुआ, यह क्या बिककुल ही म सोखूँ !”

राजकन्या स्वमरमें ही कबया और इअत्ताते विगच्छित होकर बोली,— ‘तो तुम यो, जानम् देवरको देकर मैं ही बर्मा जातो हूँ, पकड़कर उन ओगोंको से आर्तगी । यहाँ उनके लिए कोई प्रकृष हो ही आपगा ।”

‘यह हो सकता है, किन्तु वह बहुत अभिम्यानिनी है । मैं नगया तो धावद

हेला कि रतन दरवाजेपर लड़ा है। तब वह भीम दहाकर कहा, “रतन तुम न मानना माह, मैंने समझा था कि तुम ठहर जाओगे, पुष्करनेपर ठहर नहीं मित्र था न।”

राजकन्या ईसने बगी, मुससे भी बिना ईसि न रहा गया। रतनकी मूर्ति नहीं पड़ी, उसने गम्भीर आवाजमें कहा, “मैं बाजार का रहा हूँ मैं, किन्तुने बायका पानी पड़ा दिया है।” और वह बह गया। राजकन्याने कहा, “धारा रतनकी आनन्दने नहीं बनती।”

आनन्दने कहा “हाँ, पर मैं उसे रोष नहीं दे सकता थी। वह आपका हिलेरी है—एरी-नैरीको नहीं सुनने देना चाहता। पर आज उसके मेक कर केना होना, मैं तो जाना अच्छा नहीं मित्रेय। बहुत दिनोंका भूला हूँ।”

राजकन्याने कन्यासे वरामनेमें आकर कहा, “रतन, और कुछ करने के का माह, क्योंकि एक बड़ी-सी बर्ष मछली कानी होगी।” और कहा “सुँह-हाथ को के माह, मैं पाव ठेकार कर कती हूँ।” कहकर वह नीचे बड़ी गई।

आनन्दने कहा, “बाबा, एकएक तकरी क्यों हुई।”

“इसकी कैफियत क्या मैं दूँगा आनन्द।”

आनन्दने ईसने हुए कहा, “दिलवा हूँ कि बाबाका अब भी बरी मय है—नगरकगी दूर नहीं हुई है। फिर कहीं काफ़ी हो जानेका इरादा तो नहीं है। उस दफ़ा गंगामाटीमें कैसी शेरममें डाक दिया था। इतर सारे देखके ओगोंका निम्ननय और ठहर मकानका भाविक आपका। बीचमें मैं,—नया आरम्भ—इतर दोर्ब, ठहर दोर्ब, बादी के कैफ़ियत देने बैठ गई, रतनने ओगोंको मगानेका ठगोम किता—कैसी निरर्थक थी। बाह बाबा, आप लूत हैं।”

मैं भी ईस पड़ा, बीच, “अबकी बार नाराजगी दूर हो गई है। बरो मत।”

आनन्दने कहा, “पर मरोता तो नहीं होता। आप कैसे निरर्थक, एकएकी ओगोंसे मैं दूँगा हूँ और बाकसर सोचता हूँ कि आपने अपनेको संसारमें क्यों बँधने दिया।”

मन-ही-मन कहा, एकरी। और सुँहसे कहा, “दिलवा हूँ कि मुझे मूले नहीं हो, बीच-बीचमें पाद करते थे।”

आनन्दने कहा, “नहीं बाबा, आपकी भूखना भी मुश्किल है और समझना भी कठिन है, मोह दूर करना तो और भी कठिन है। अगर निश्चाय न हो तो

कहिए, बीबीको बुझाकर गवाही दे दें। आपसे सिर्फ़ दो-तीन दिनका ही तो परिचय है, पर उस दिन बीबीके साथ सुरमें सुर मिलाकर मैं भी खो रोने नहीं बैठ गया तो सिर्फ़ इसलिए कि वह सेम्पासी धर्मके विष्णुका सिखाफ़ है।”

बोका, “वह सायद बीबीकी खातिर। उनके अनुरोधसे ही तो इतनी दूर आये हो।”

आनन्दने कहा, “विष्णुका छठ नहीं है शायद। उनका अनुरोध तो सिर्फ़ अनुरोध नहीं है, वह तो भावों मोंकी पुकार है, पैर जसने आप बहना शुरू कर देते हैं। न जाने कितने फ़ौरोंमें आपस्य केरा हूँ, पर ठीक देखा तो कहीं नहीं देखता। मुना है कि आप भी तो बहुत प्ये हैं, आपने भी कहीं कोई इनके देरी और देखी है।”

कहा, “बहुत।”

राजकसमीने प्रवेश किया। कमरेमें मुसते ही उसने मेरी बात सुन ली थी, चावकी प्याली आनन्दके निकट रखकर मुससे पूछा, “बहुत क्या ली?”

आनन्द शायद कुछ विस्मयित हो गया, मैंने कहा, “मुम्हारे गुर्पोकी राते। इन्होंने तबिह खातिर किया था, इसलिए मैंने बोरेसे उसका प्रतिसाद किया है।”

आनन्द चावकी प्याली मुँहसे अग्र रहा था, हँसीकी बज्जसे बोकी-सी आवाज सीनकर गिर पड़ी। राजकसमी भी हँस पड़ी।

आनन्दने कहा, “बादा, आपकी उपस्थित-बुद्धि अस्मृत है। वह ठीक ठकड़ी बात सब-भरमें आपके विमर्गमें कैसे आ गई।”

राजकसमीने कहा, “इसमें आश्चर्य क्या है आनन्द! अपने मनकी बात बघाते-बघाते और कहानियों गढ़कर मुनाते-मुनाते इस विषयमें ये पूरी तरह मस महीपाप्मा हो गये हैं।”

कहा, “तो तुम मेरा बिधात नहीं करती।”

“बरा भी नहीं।”

आनन्दने हँसकर कहा, “गढ़कर कहनेकी विषयमें आप भी कम नहीं हैं दोरी। उत्काक ही अनाथ दे दिया “बरा भी नहीं।”

राजकसमी भी हँस पड़ी। बोकी, “जब-मुनकर सीतना पड़ा है मार। पर अब तम देर मत करो. चाप पीकर महा लो। यह अन्धरी तरह

कह देनेमें तुम्हारा भोजन नहीं हुआ। इनके मुँहसे मेरी तुम्हाराति मुन्नेके लिए तो तुम्हारा धारा बिन भी कम होगा।” वह कहकर वह पछी गई।

आनन्दने कहा, “आप दोनों कैसे हो व्यक्ति संसारमें बिरल हैं। मगधान्ने अद्भुत बड़े भिक्षाकर आप लोगोंको बुनियातमें भेजा है।”

“उसका नमूना देख लिया न।”

“नमूना तो उस पक्षे ही दिन तीर्थपित्री स्त्रियोंके पैर-तले देल दिया था। इसके बाद और कोई कमी नकर नहीं आया।”

“आहा। ये बातें यदि तुम उनके सामने ही कहते आनन्द।”

आनन्द कामका कारमी है, काम करनेका उद्यम और धक्ति उसमें विपुल है। उसको निकट पाकर राजाधरमीके आनन्दकी सीमा नहीं। रात-दिन लानेकी ठेकारियाँ तो प्रायः भबधी सीमातक पहुँच गई। दोनोंमें लगातार कितने सप सप होते रहे उन लवको मैं नहीं जानता। कानमें सिर्फ यह भनक पड़ी कि रंगामाटीमें एक लड़कोंके लिए और एक लड़कियोंके लिए लूक लोका आयागा। वहाँ काफी मरीच और मीच अतिरिक्त लोगोंका बाध है और छाबद वे ही उपक्रम्य है। सुना कि चिचिच्छका भी प्रकृति किया आयागा। इन लव विषयोंकी सुझमें लनिक भी पड़ता नहीं। परोपकारकी इच्छा है पर धक्ति नहीं। यह सोचते ही कि कहीं कुछ खडा करना या बमाना पड़गा, मेरा आनन्द मन ‘आह नहीं, कह कह कहकर बिन डाकना चाहता है। अपने मने उपयोगमें बीच-बीचमें आनन्द मुझे पत्ती देने आता, पर राजाधरमी ईतने हुए बाधा देकर फटती, ‘हूँ मर मर अपेक्षा आनन्द, तुम्हारे लव संकल्प पंगु हो आयागे।”

मुन्नेपर प्रलम्बा करना ही पड़ता। कहता, “अभी-अभी उस दिन तो कहा कि मेरा बहुत काम है और अब मुझे बहुत-कुछ करना होगा।”

राजमन्त्रीने हाथ जोड़कर कहा, “मेरी गलती हुई गुसार्, अब ऐसी बात कमी बचानास नहीं बाँकीगी।”

“तब क्या किसी दिन कुछ भी नहीं करेगा।”

“क्यों नहीं करोगे। यदि बीमार पड़कर डरके मारे मुझे अवसर न कर दान्ने, तो इतने ही मैं तुम्हारे निकट बिरलुख रहूँगी।”

आनन्दने कहा, “बीबी, इस तरह ही आप लवमुख ही रहें मकर्मन बना रही।”

राजकस्मीने कहा, "मुझे नहीं बनाना पड़ेगा मार, जिस विवाहाने इनकी सखी की है उसीने इसकी व्यवस्था कर दी है,—कहीं भी मुद्रि नहीं रखने दी है।"

आनन्द हँसने लगा। राजकस्मीने कहा, "और फिर वह बकसुँहा म्पोतिपी रोला कर दिया गया है कि इनके मकानसे बाहर पैर रखते ही मेरी छाती बहू बहू करने लगती है—जबतक झीठे नहीं तबतक किसी भी काममें मन नहीं लगा सकती।"

"हम बीच म्पोतिपी क्यों मिला गया? क्या कहा उसने?"

इसका उत्तर मिले बिना, कहा, "मेरा हाथ देलकर वह बोला कि बहुत बड़ा विष्णु-योग है—जीवन मरचकी समस्या।"

"हीरो, हम सब बालोंपर आप विचार करती हैं।"

मैंने कहा, "हाँ, करती है, बहर करती है। तुम्हारी बीबी कहती हैं कि क्या विष्णु-योग नामकी कोई बात ही दुनियामें नहीं है? क्या कभी किसीपर आप्त नहीं आती?"

आनन्दने हँसकर कहा, "आ सकती है, पर हाथ देलकर कोई कैसे बता सकता है बीबी!"

राजकस्मीने कहा, "यह तो नहीं आसती मार, पर मुझे यह संदेहा बहर है कि जो मेरे किसी मांगवली है, उसे भगवान् इतने बड़े दुःखमें मर्दा तुम्हारे।"

अप-मरतक कम्पटाके साथ उसके मुँहकी ओर देखकर आनन्दने दूसरी बात छेड़ दी।

इसी बीच मकानकी छिन्ना-पट्टी, बन्दोबस्त और व्यवस्थाका काम करने लग्य, डेरकी डेर हँड, काठ, धूना, सुरकी, दरवाजे, लिहकियाँ बगिर का पड़ीं। पुराने परको राजकस्मीने नवा बनानेका आयोजन किया।

उस दिन शामको आनन्दने कहा, "पक्षि बाबा, क्या बूम आयें?"

आनन्द मेरे बाहर आनेके प्रस्तावपर राजकस्मी अनिच्छा बाहिर दिया करती है। बोली, "भूमकर झीठे-झीठे राशि हो जायेगी आनन्द, ठण्ड नहीं जमेगी!"

आनन्दने कहा, "गरमीसे तो जोग मेरे का रहे हैं बीबी, ठण्ड क्यों है?"

आन मेरी तबीयत भी बहुत अच्छी न थी। कहा, "इसमें शक नहीं कि

उठ जानेका हर नहीं, पर आज ठठनेकी मी बैठी इच्छा नहीं हो रही है आनन्द ।”

आनन्दने कहा, “बह बड़या है । शामके बस कमरेमें बैठे रहनेसे अनिच्छा और भी बढ़ जायगी—चलिये, उठिए ।”

राकेशमीने इच्छा सम्पन्न करनेके लिए कहा, “इससे अच्छा एक इच्छा काम करें न आनन्द । परसे छिलीय मुझे एक अच्छा हारमोनियम लपेट कर दे गया है, अवतक उसे देखनेका बस ही नहीं भिन्न । मैं भगवान्का नाम लेती हूँ, तुम बैठकर सुनो—शाम कब जायगी ।” वह कह ठठने रतनको पुकारकर बस अपनेके लिए कह दिया ।

आनन्दने विस्मयसे पूछा, “भगवान्का नाम माने क्या गीत सीरी ?”

राकेशमीने फिर हिस्रकर ‘हो’ की । “बीरीको वह भिन्न मी जाती है क्या ?”

“बहुत साधारण-सी ।” फिर मुझे दिखाकर कहा, “बचपनमें इन्हींने ही सम्पाद करवा था ।”

आनन्दने कुछ होकर कहा, “बाबा तो जिने हुए ब्रह्म हैं, बाहरसे पश्चात्तनेका कोई उपाय ही नहीं ।”

उठका मन्द्य सुन जमी हैंने जगी, पर मैं सरस मनसे साध न दे सका । क्योंकि आनन्द कुछ भी नहीं समझेगा और मेरे इनकारको उत्साहके विनय-वाक्य समझ और मी स्वादा रंग करेगा, और अन्तमें साबद वाचक भी हो जायगा । पुत्र-शोकातुर घृतरात्र-विश्रामका सुषोष्णवाक्य गाना आनन्द हूँ, पर राकेशमीके बाद इस बैठकमें वह कुछ बीकेगा नहीं ।

राकेशमीने हारमोनियम आनन्द पर पहले दो-एक भगवान्के ऐसे गीत सुनाये जो हर काम प्रयुक्त है और फिर वैष्णव-परायणी आरम्भ कर दी । सुनकर ऐसा लग्य कि उठ बिज मुरारीपुरके अस्तावेमें मी सायब इतना अच्छा नहीं सुन्य था । आनन्द विस्मयसे अभिभूत हो गया, मेरी ओर इष्टाकर कर सुन्य बितते बोला, “वह सब क्या इन्हींने सीखा है बीरी ?”

“तब क्या एक ही आदमीके पास कोई सीखा है आनन्द ?”

“बह लही है ।” इसके बाद ठठने मेरी तरफ देखकर कहा, “बाबा, अब आपको दवा करनी होगी । बीरी कुछ एक गई हैं ।”

“नहीं मारें, मेरी तबीयत अच्छी नहीं है।”

“तबीयतके बिना मैं ज़िम्मेदार हूँ, क्या ब्रिटिशका अनुरोध नहीं मानेंगे।”

“माननेका उपाय जो नहीं है, तबीयत बहुत बुरा है।”

राजकमरमी सम्मीर होनेकी चेष्टा कर रही थी पर सफ़र न हो सकी, हँसीके मारे छोट-मोट हो गई। आनन्दने अब मामला समझा, बोला, “हीरो, तो सब बताओ कि आपने किससे इतना सीखा।”

मैंने कहा, “जो स्वयंके परिवर्तनमें विद्या-ज्ञान करते हैं उनसे, मुझसे नहीं जैसा। बाबा इस विद्याके पाससे भी कमी नहीं फटका।”

राजकमर मौन रहकर आनन्दने कहा, “मैं भी कुछ बोझ-झात जानता हूँ हीरो, पर बाबा सीखनेका बल नहीं मिला। यदि इस बार सुयोग मिले तो आपका शिक्षित स्वीकार कर अपनी शिक्षाको सम्पूर्ण कर लूँगा। पर आज क्या नहीं कह सकती, और कुछ नहीं सुनायेगी।”

राजकमरमीने कहा, “अब बल नहीं है मारें, तुम लोगोंका खाना जो तैयार करना है।”

आनन्दने निश्चात झेड़कर कहा, “अच्छा हूँ कि संसारमें जिनके ऊपर मार है उनके पास बल कम है। पर उसमें मैं झेड़ हूँ, आपका झेड़ मारें। मुझे शिक्षाना ही होगा। अग्रिमस्थित स्थानमें जब अकेला बल फटना नहीं चाहेगा, तब आपको इस बराबर स्मरण करूँगा।”

राजकमरमीने स्नेहसे विगमित होकर कहा, “तुम डाक्टर हो, विदेशमें अपने इस स्वास्थ्यहीन शरीरके प्रति इति रचना मारें, मैं जितना भी जानती हूँ उतना तुम्हें प्यारसे सिखाऊँगी।”

“पर इसके अलावा क्या आपको और कोई किछ नहीं है हीरो।”

राजकमरमी चुप रही। आनन्दने मुझे उद्देश्य कर कहा, “बाबा बैठा माया धरा नबर नहीं आता।”

मैंने इसका उत्तर दिया, “और ऐसा अकर्मण्य व्यक्ति ही क्या किसी नबर आता है आनन्द। ऐसीकी सबसे बड़ानेके बिना भगवान् सबकुछ आदमी से देता है, नहीं तो वे बीच समुद्रमें ही डूब जायें—किन्ती तरह चाटवक पहुँच ही न पायें। इसी तरह संसारमें आम-जसकी रक्षा होती है जैसा, मेरी बातें मिलाकर देखना, प्रमाण मिल जायगा।”

राजकस्सी भी सुदृढ़-भर निष्ठापूर्वक देखती रही, फिर ठठ गई। उसे बहुत काम है।

इन कुछ दिनोंके अन्दर ही मकानका काम शुरू हो गया, बीस-बसके एक कमरेमें बन्दकर राजकस्सी यात्राके लिए तैयारी करने लगी। मकानका भार बड़े दुबलीबाऊपर था।

जानेके दिन राजकस्सीने मेरे हाथमें एक पोस्टकार्ड देकर कहा, "मेरी प्यार करनेकी बिट्टीका वह क्याव आवा है—पढ़कर देख लो।" और बर बकी गई।

दो-तीन बरनोंमें कमकठाने किया है—

"दुबले ही हूँ बहन, जिनकी सेवामें अपनेको निवेशन कर दिया है, मुझे मज्जा रखनेका भार भी उन्हींपर है। वही प्रार्थना करती हूँ कि तुम जेन कुण्डली रही। बड़े गुत्तारूँकी अपनी आनन्दमयीके लिए बड़ा प्रयत्न करते हैं।

—इति श्री-श्रीराधाकृष्णचरणभिता, कमकठाने।"

उत्तने मेरे नामका उत्तेज भी नहीं किया है। पर इन कई अक्षरोंकी आदमें उत्तकी न जाने कितनी बातें छुपी रह गईं। लोभने लगा कि बिट्टीपर एक बूँद आँसूका बाग भी क्या नहीं पड़ा है। पर कोई भी बिह नकर नहीं आया।

बिट्टीको हाथमें लेकर चुप बैठे रहा। सिङ्कीके बाहर धूपसे लगा हुआ नीलम आकाश है, पड़ोसीके परके से आरिषकी वृत्तोंके पत्तोंकी चरकसे उत्तका कुछ अर्थ दिखाई देता है। वहाँ अक्षरमात्र ही दो चेहरे पात ही पात मानी है आये, एक मेरी राजकस्सीका—करवाचकी प्रतिमा, दूसरा कमकठानाका, अक्षरिस्तुत, अनमन जैसे कोई त्वनमें देखी हुई छवि।

रतने आकर ध्यान मंग कर दिया। बोला, "स्नानका वक्त हो गया है बाबू, मीने कहा है।"

स्नानका समय भी नहीं बीत जाना चाहिए।

फिर एक दिन सुबह सात बजमाटी का पहुँचे। उत्त बार आनन्द बनाहुत जतिवि था, पर इत बार आनन्दित वाग्व। मकानमें भीड़ महीं लमाटी मीबके आर्यीय और अनारमीय न जाने कितने लोग हमें देखने आये हैं। सभीके चेहरे-पर प्रमन्न हैसी और कुण्ड-मन्न है। राजकस्सीने कुणारीकीकी पत्नीको प्रणाम

किया। मुन्या रछोईके काममें लगी थी, बाहर निकल आई और हम दोनोंको प्रणाम करके बोली, “बाबा, आपका शरीर तो बेसा अच्छा दिखता नहीं रहा।”

राजकस्मीने कहा, “अच्छा और कब दिखता था वहन। मुझे तो नहीं हुआ, जब थायद तुम लोग अच्छा कर लो,—इसी आशासे यहाँ के आई हूँ।”

मेरे विगत दिनोंकी बीमारीकी बात थायद कहीं बहूको याद आ गई, उन्होंने स्नेहार्थ कण्ठसे दिखाता देते हुए कहा,—“हरकी कोई बात मही है बेटी, इत देसके हवा-पानीसे वो दिनमें ही ये ठीक हो जायेंगे।” मेरी समझमें मही क्या कि मुझे क्या हुआ है और किसविध इतनी बुचिन्ता है।

इसके बाद मना प्रफरके कार्योंका आवोबन पूरे उत्सवके साथ शुरू हो गया। पौड़ाम्यदीको लौटनेकी बातचीतसे शुरू करके विष्णु-विद्यालयकी प्रतिष्ठाके लिए स्थानकी सोझत किसी भी काममें किसीको लग भी आकस्व नहीं।

तिर्क में अर्द्धरात्रि ही मनमें कोई उल्लाह अनुभव नहीं करता। या तो यह मेरा स्वभाव ही है, या फिर और ही कुछ जो इतके अगोचर मेरी समझ ग्रहणशक्तीका धीरे-धीरे सूखे-सूखे कर रहा है। एक सुभीता यह हो गया है कि मेरी उदासीनतासे कोई निश्चित नहीं होया मानो मुझे और किसी बातकी प्रत्याशा करना ही असंभव है। मैं दुर्लभ हूँ, मैं कमो हूँ और कमी नहीं हूँ। फिर भी कोई बीमारी नहीं है, लाज-पीठा और रहता हूँ। अपनी हाकटरी बिना हाथ लौं ही कभी आनन्द दिखाने-बुझानेकी कोशिश करता है तब ही राजकस्मी लज्जे-उल्लासे कमें बाबा देते हुए कहती है, “उन्हें रिक करनेका काम नहीं मारा, न जानें क्यासे क्या हो जाय। तब हमें ही योग्यता पड़ेगी।”

आनन्द कहता, “आपको सावधान किये देता हूँ कि वो व्यवस्था की है उससे योग्यकी माता बनेगी ही, कम नहीं होगी बीरी।”

राजकस्मी लज्ज ही लीकार करके कहती, “बह तो मैं जानती हूँ आनन्द, कि भावामने मेरे कम-काकमें वह कुछ कपाकमें शिल दिया है।”

इसके बाद और तक नहीं किया का उल्ला।

कमी किताबें पढ़ते हुए दिन कर जाता है, कमी अपनी विगत कहानीकी हिसनेमें और कमी सुने मीहानोंमें लगे-लगे-लगे। एक रातसे निश्चित है कि कर्मकी प्रेरणा मुझमें मही है। बड़-सगड़कर उल्ला-बूद मचाकर संसारमें इस आरम्भिकी तिरपर बड़ बैठनेकी शक्ति भी नहीं और संकल्प भी नहीं। लज्ज ही

जो मित्र जाता है, उसे ही यथेष्ट मान लेता हूँ। मकान-भर, रुपया-पैसा, जमीन-आपदाह, मान-सम्मान, ये सब मेरे लिए अपायमय हैं। दूसरोंकी सेवा-सेवा अपनी बहताओ बरि कभी कर्तव्यशुद्धिकी छाड़नासे संकेत करना चाहता हूँ तो देखता हूँ कि योड़ी ही देरमें वह फिर भाँसें बन्द किन्ने लेंच रही है,—ठीकजैसे पहले देनेपर भी हिक्का-हुक्का नहीं चाहती। देखता हूँ कि तिर्य एक विषयमें तन्त्रातुर मन कञ्चरबसे उत्प्रेत हो उठता है और वह है मुण्डीपुरके दस दिनोंकी स्मृतिका आबोधन। मानों कानोंमें सुनाई पड़ रहा है, वैष्णवी कर्मकाण्डका स्नेह अनुरोध—‘नये गुसार्ह’ यह कर दो न मारह।—जो आभ्यं, लज नष्ट कर दिया। मेरी पकड़ो हुई जो तुम्हसे काम करनेके लिए कहा, अब उठो। कर्ममुँहो पचा कहाँ गइ, जरा पानी बड़ा देखी, तुम्हारा पाव पीनेका समय हो गया है गुसार्ह।’

उन दिनों वह खुद पावके पाव चोकर रखती थी इत बरते कि कहाँ दूध न आवे। उनका प्रयोजन लम्ब हो गया है, तथापि क्या माखूम कि फिर कभी काममें आनेकी आशासे उसने अब भी उन्हें फलपूर्वक रत्न छोड़ा है या नहीं, जानता हूँ कि वह मारगू मारगू कर रही है। हेतु नहीं जानता, तो भी मनमें सन्देह नहीं है कि मुण्डीपुरके आश्रममें उसके दिन हर रोज लक्षित होते जा रहे हैं। एक दिन अकस्मात् घायब, यही लखर मिलेगी। वह कल्पना करते ही जोंलोंमें झँटू का आते हैं कि वह निराश्रय, निःसंक पच-पचपर भिन्ना मोंगली हुई बूज रही है मूल्य-मदका मन लाम्बनाकी आशामें राककस्मीकी ओर देखता है जो लकरी एकका हामकिन्ताओंके अभिधम कर्ममें निपुण है—मानों उसके होनो हाथोंकी बलें अँगुलियोंते कस्याव अजस्र चारासे बर रहा है। मुप्रचमन मुँहपर छान्ति और लम्बोन्की स्निग्ध छाया पड़ रही है। कस्या और ममतासे हृदयकी समुना फिनारेतक पूर्ण है—निरवच्छिन्न प्रेमकी सर्वम्बापी महिमाके साथ वह मेरे हृदयमें जित आत्नपर प्रतिष्ठित है, नहीं जानता कि उसकी तुझना किछते की जाए।

विदुषी मुनम्बाके दुर्निवार प्रभावने कुछ बलके लिए उठे जो विभ्रान्त कर दिया था, उसके कुछ परिणामसे उसने अपनी पुरानी लछा फिरते पा भी है। एक बात आज भी वह मेरी कानों कानोंमें कहती है कि “तुम भी कम नहीं हो बी, कम नहीं हो। मला वह कौन जानता था कि तुम्हारे पले आनेके पत्तर

ही मेरा सर्वस्व पकड़ मारले ही रोक पड़ेगा । ठा । यह कैसी मर्याद राख मी । सोचनेपर भी दर बगला है कि मेरे वे दिन कबे कैसे वे । बड़का बन्द होकर मर नहीं गई, बरी आश्चर्य है ।" मैं उत्तर नहीं पाया हूँ, सिर्फ चुपचाप देखता रहता हूँ ।

जाने बारों बार ठठकी मक्की पकड़नेकी गुमाश्त नहीं है । सी कामोंके बीच मी तो बस चुपचाप आकर देख जाती है । कभी एकाएक आकर नकरीक बैठ जाती है और हाथकी फिताब हवाते हुए बहती है, "बोलो बन्द करके क्या को आसो न, मैं तिरफ हाथ धरे बैठी हूँ । इतना पकड़नेर बोलोंमें दर को होने बनेगा ।"

आनन्द आकर बाहरले ही कहता है, "एक बात पूछनी है, आ सज्जा हूँ ।" राजकमरी कहती है, "आ सज्जे हो । तुम्हें जानेकी जहाँ मनाह है आनन्द ।" आनन्द कमरेमें सुकर आश्चर्यसे कहता है, "इत अतमपमें क्या आप हने मुका रही है सीरी ।"

राजकमरी ईतर बसाव देती है, "तुम्हारा क्या मुकसान हुआ ? नहीं सोनेपर मी तो वे तुम्हारी पाठशाळाके बठहोको बचने नहीं आवेंगे ।"

"देखता हूँ कि सीरी हने मिठी कर देंगी ।"

"नहीं तो खुद को मिठी हुई जाती हूँ, बेचिखिसे और कम-काब ही नहीं कर पाती ।"

"आप होने ही ब्रम्हा पागल हो आवेंगे," कहकर आनन्द बाहर चला जाता है ।

सूक्त बनवानेके काममें आनन्दको छोट केनेकी मी फुलत नहीं है, और संघति तरीकेके हमामें राजकमरी मी पूरी तरह डूबी हुई है । इसी समय कलकत्तेके मकानसे बूझी हुई, बहुत-से पोह ऑफिश्योंमेंकी मुरौको पीठपर बिसे हुए, बहुत दरमें, नवीनकी सांघातिक बिट्टी आ पहुँची,—गौहर मुखुशग्यापर है । सिर्फ मेरी ही राह देखता हुआ जब भी जी रहा है । यह स्तर मुसे एक जैसी चुमी । यह नहीं जानता कि बहिनके मकानसे वह कब लौया । वह इतना सारा पीड़ित है, यह मी नहीं मुना—मुननेकी बिरोप बेछा मी नहीं की और आब एकदम रोप संवाद आ गया । प्रायः छह दिन पहलेकी बिट्टी है, इसकिए अब वह बिट्टा है वा नहीं—यही कौन जानता है । तार इया स्तर पानेकी

अबला इस देखमें नहीं है और उठ देखमें भी नहीं। इच्छिय इसकी पिता हुआ है। पिट्टी पड़कर राजकर्मिने सिरपर हाथ रखकर पूजा, “तुम्हें क्या जाना पड़ेगा ?”

“हाँ ?”

“तो प्यो, मैं भी साथ चली ।”

“यह कहीं हो सकता है ? इस आश्रमके समय तुम क्यों आओगी ?”

यह उठने खुद ही समझ किया कि प्रत्याग अंत्यत है, मुरारीपुरके अन्धारेकी बात भी फिर वह बरान न का लकी। बोली, “उठनेको कष्टसे तुम्हारे है, साथमें कौन आबगा ? आनन्दसे कहूँ ?”

“नहीं, वह मेरे बिना उठनेवाला आसमी नहीं है ।”

“तो फिर साथमें किउन जाव ?”

“मझे आव, पर कस्यत नहीं है ।”

“आकर रोम बिट्टी होगे बोले ?”

“तमब मित्र तो हूँगा ।”

“महाँ, यह नहीं सुनूँगी। एक दिन बिट्टी न मित्रनेस मैं खुद आ आऊँगी आरे तुम कितने ही नाराज क्यों न हो ।”

अबला एकी होना पड़ा और हर रोम उवाह देनेकी प्रतिज्ञा करके उठी दिन बक पड़ा। देला कि बुधिनतासे राजकर्मिनेका सुंद पीछा पड़ गया है, उठने ओंसे पौछकर अन्तिम बार सावधान करते हुए कहा, “बाधा करो कि घरीरकी अन्धेदन्त महीं करोगे ?”

“नहीं, महीं करूँगा ।”

“कहो कि बीटनेमें एक दिनकी भी देरी नहीं करोगे ।”

“नहीं, तो भी नहीं करूँगा ।”

अन्तमें बैकगाड़ी रेलवे स्टेशनकी तरफ बक ही।

आपड़का महीना था। तीसरे महर मोहरके मकानके तब दरवाजेपर आ पहुँचा। मेरे आवाज सुनकर महीन बाहर आवा और पकड़ लाकर पैरोंके पाठ मिर पड़ा। जो दर था वही हुआ। उठ दीर्घकाय बलिष्ठ पुरुषके प्रक-कण्ठके ठठ एकी अन्धेदन्तके कन्धनमें थोड़की एक नई मूर्ति देली। वह अिनी गम्भीर थी, उठनी ही बड़ी और उठनी ही लम्बा। मोहरकी मों मही, बहन

नहीं कम्पा नहीं, फनी नहीं। उत दिन इस संगीहीन मनुष्यको अशुभोंकी माख पहाकर बिना करनेवाला कोई न था तो भी ऐसा माख होता है कि उसे संगीहीन, मूखहीन, कंगाल बेघर नहीं जाना पड़ा, उसकी ओकान्तर यात्राके पक्के किए हुए पावेष अनेके नवीनने ही दोनों हाथ मरकर उड़ेर दिया है।

बहुत देर बाद जब वह उठकर बैठ गया तब पूछा, "गौहर कब मर गयीन ?"

"फरती। कब सुबह ही हमने उन्हें दफनाया है।"

"कहाँ दफनाया ?"

"नदीके किनारे आगके बगीचेमें। और वह उन्होंने कहा था। ममेरी बहिनके सफानत हुस्नार लेकर छोटे और वह हुस्नार फिर नहीं गया।"

"हुस्नार हुआ था ?"

"वहाँ जो कुछ हो सकता है सब हुआ, पर किसीसे भी कुछ कम न हुआ। बाबू खुद ही सब ब्यन गये थे।"

"अल्पादे के वह गुलईबी माते थे ?"

मयीनने कहा, "कभी-कभी। जबहीपते उनके गुलईबे ब्याये हैं, इसीलिए रोब जानेका बस नहीं मिलता था।" और एक व्यक्तिके बारेमें पूछते हुए शर्म जाने लगी, तो भी संकोच दूर कर प्रश्न किया, "बहोते और कोई नहीं ब्याया नवीन ?"

नवीनने कहा, "हाँ, कमलकटा आई थी।"

"कब आई थी ?"

मयीनने कहा, "दर-रोज। अग्निस तीन दिनोंमें तो न उन्होंने ब्याया और न लोया, बाबूका विछेन्य छोड़कर एक बार भी नहीं उठी।"

और कोई प्रश्न नहीं किया, चुप हो रहा। मयीनने पूछा, "अब कहाँ ब्यायेगे, अल्पादेमें ?"

"हाँ।"

"अब ठहरिए" कहकर वह भीतर गया और एक चीनका बस बाहर निकाल लाया। उसे सुते देते हुए बोला, "आफ्को देनेके लिए कर गये हैं।"

"क्या है इसमें मयीन ?"

“लोकर रेलिए,” कहकर उसने मेरे हाथमें बांधी दे दी। लोकर रेलिए कि उसकी कविताकी कापियों रस्तीसे बेची हुई हैं। ऊपर लिखा है, “श्रीकान्त, सम्भवतः खाल करनेका बख नहीं रहा। बड़े गुलामीको दे देना, वे इसे मठमें रख देंगे, जिससे वह न होने पावे।” वृत्ती छोटी-सी पोटली छठी बरत कपड़ेकी है। लोकर रेलिए कि नाना मूसके एक बरत नोट हैं, और उनपर लिखा है, “मार्ग श्रीकान्त, शायद मैं नहीं बनेँगा। फल नहीं कि तुम्हें मुलाकात होगी या नहीं। अगर नहीं हुई तो नवीनके हाथों यह बख दे जाता हूँ, इसे ले लेना। वे रुपये तुम्हें दे कर रहा हूँ, यदि कमबख्तोंके काममें आवें तो दे देना। अगर न से तो वो हफ्ता हो सो करवा। अगल तुम्हारा मन्ना करे।—गोहर।”

दानका गर्व नहीं, अनुभव-विषय भी नहीं। मृत्युको आत्म ज्ञानकर सिर्फ सोचें-से शब्दोंमें वास्तव-वस्तुकी छमकामना कर अपना शेष निवेदन रख गया है। मय नहीं, धोम नहीं, उच्छ्वसित हाव-हाससे उसने मृत्युका प्रतिपाद नहीं किया। वह कवि या, मुक्तमान पक्षी-वंशका एक उसकी शिराओंमें था—छान्त मनसे वह शेष रचना अपने वास्तव-वस्तुके लिए लिख गया है। अत्यन्त मेरी औलोंके अँधेरे बाहर नहीं निकले थे, पर अब उन्होंने निवेद नहीं माना, वे बड़ी-बड़ी बूँदोंमें औलोंसे निकलकर डुलक पड़े।

आपादका शीर्ष दिन उस बख सम्पत्तिकी ओर था। तारे पश्चिम आकाशमें फाँटे मैथोंका एक छर ऊपर उठ रहा था। उसके ही किसी एक तकीर्ण छिद्र पक्षे अल्योन्मुल पूर्वकी उमिर्वा आकाश होकर था पक्षी, प्राचीरसे सज्जन छुल्लमय आमुनके पैरों के तिरपर। इसीकी आलाके छारे सौरकी माधवी और माकली बलाओंके कुछ बने थे। उस दिन सिर्फ कलियों थीं। मुझे उनमेंसे ही कुछ उपहार देनेकी उसने इच्छा की थी। लेकिन चींटियोंके डरसे नहीं दे सका था। आज उनमेंसे गुच्छेके गुच्छे फूल हैं, जिनमेंसे कुछ तो भीचे साढ़ गये हैं और कुछ हवासे उड़कर हर्द-गार्द किलर गये हैं। उन्हींमेंसे कुछ ठहर किये,—वास्तव-वस्तुके स्वर्णोंका शेषदान समझकर। नवीनने कहा, “बकिए, आपको पढ़ना आता है।”

क्या, “नवीन, बरा बाहरका कमरा तो रोज़ो देनूँगा।”

नवीनने कमरा लोकर दिया। आज भी चौकीपर एक और बिछोना क्रियम हुआ रहा है, एक छोटी पेंटिख और कुछ पत्रे कागजके डुलके भी हैं। इसी कमरेमें गोहरने अपनी स्वर्णित कविता बंदिनी लीलाके गुलामी करानी गाकर

मुनाह थी। इस कमरेमें न जाने कितनी बार आया हूँ, कितने दिनोंतक सपना पीसा और सोया हूँ और उपवास कर गया हूँ। उस दिन ईसते हुए किन्होंने सब कुछ सहन किया था, अब उनमेंसे कोई जीवित नहीं है। आज अपना सारा जाना-बाना समाप्त करके बाहर निकल आया।

रास्तेमें नबीनके मुँहसे सुना कि गौहर ऐसी ही एक मोहोंकी छोटी पोटली उनके कपड़ेको भी दे गया है। बाकी जो सम्पत्ति बची है, वह उनके भग्ने माई-बहिनोंको मिलेगी, और उनके पिछा द्वारा निर्मित मस्जिदके रसवायस्यके स्थित होगी।

आममें पहुँचकर देखा कि बहुत भीड़ है। गुम्बरेके सामने बहुत-से शिष्य और शिष्याएँ आई हैं। खासी मस्जिद बनी हैं, और हाथ-पैरसे उनके शीर्ष बिदा होनेके समय भी दिखाएँ नहीं दिये। अनुमान किया कि बैसाफ़ेना आदि कार्य शिष्य अनुसार ही चल रहे हैं।

मुझे देखकर हारिकाशउने सम्पर्कना की। मेरे आग्रहमनका हेतु ने अनन्त थे। गौहरके स्थित हुआ आदिर किया, पर उनके सुँहपर न जाने कैसा विस्मय, उद्बोधन प्राप्त था, जो पहले कभी नहीं देखा। अनुमान किया कि यादव अपने दिनोंके वैज्योंकी परिवर्तनके कारण ने कष्टमय और विपर्यस्त हो गये हैं, निश्चिन्त होकर घबराव करके वह उनके पास नहीं है।

सतर मिन्ते ही पचा आई, उनके सुँहपर भी आब हँसी नहीं, ऐसी संकुचित-सी, मानो भ्रम आने लगे बने।

पूछा, “कमलबद्धा बीबी इस वक्त बहुत व्यस्त हैं, क्यों पचा ?”

“नहीं, बीबीको कुछ है।” कहकर वह चली गई। यह सब आज इतना अस्पष्टावृत्त और अप्रासंगिक लगा कि मन ही मन शक्ति हो उठ। कुछ देर बाद ही कमलबद्धाने आकर नमस्कार किया। कहा, “आओ गुहार, मेरे कमरेमें फलकर बैठो।”

अन्ते बिछौने इत्यादि स्थानपर ही छोड़कर सिर्फ बैग सामने आया था और गौहरका वह वस्तु मेरे नीकरके विरुद्ध था। कमलबद्धाके कमरेमें आकर, उनके उनके हाथमें देते हुए बोला, “अपराधपापीने रख दो, वस्तुमें बहुत रुपये हैं।”

कमलबद्धाने कहा, “मायूस है।” इसके बाद उसे लौटके नीचे रखकर

पूछ, “ताम्र तुमने अभी तक खाव नहीं पी है ?”

“नहीं ।”

“कब खाये ?”

“आमको ।”

“आलो हूँ तैयार कर आऊँ,” कहकर वह भीकरको ताव लेकर वह दो और प्याही हाथ-मुँह चोनेके लिए पानी लेकर चली गई, लड़ी नहीं रही । फिर कमाक हुआ कि बात क्या है ?

थोड़ी देर बाद कमाकता थाव से आर, तापमें कुछ रुक-रुक, मिठाई और उठ बलका देखाका प्रताप । बहुत देरसे सूखा था, धीरेन ही बैठ गया ।

कुछ खान पन्नाही देखाकी खान-आरतीके बाल और चटोकी खायाज सुनाई पड़ी । वृत्ता, “ओ, तुम नहीं गई ?”

“नहीं मना है ।”

“मना है तुम्हें ? इसके मानी ?”

कमाकताने आन ईनी ईतकर कहा, “मनाके माने है मना, गुलाई । अभी देखाके कमरेमें मेरा खाया निपिदा है ।”

आहार करनेमें रुक न रही पूछा “किन्ने मना किया ?”

“बड़े गुलाईकीके गुम्बेके । और उनके खान को खाये हैं, उन्होंने ।”

“बे क्या करते हैं ?”

“कहते हैं कि मैं अविश्व हूँ मेरी सेवाके देखा कष्टित हो आरगे ।”

“तुम अविश्व हो ?” विष्णु केवले पूछा, “गीदरकी कहते हो तन्देह हुआ है क्या ?”

“हाँ इसीलिए ।”

कुछ भी नहीं जानता था, तो भी बिना किसी संशयके कह उठा, “बह बड़ है—बह अतम्मव है ।”

“अतम्मव क्यों है गुलाई ?”

“बह तो नहीं कतना कतना कमाकता, पर इससे बढ़कर और कोई बात मिथ्या नहीं । ऐसा कहता है कि अनुप-तमाकमें करने मुख्य-यव-पानी वस्तुकी एकमात्र सेवाका देता ही होय पुरस्कार दिया जाता है ।”

उठकी अस्तोमे अस्तु जा गये । थोड़ी, “अब मुझे हुआ नहीं है । देखा

अर्जुनामी हैं, उनके निकट तो डर नहीं था, डर था सिर्फ तुमसे। आज मैं निर्भय होकर भी गई गुहारें।”

“तुम्हारे इतने आश्चर्योंके बीच तुम्हें सिर्फ तुमसे डर था। और किसीसे नहीं।”

“नहीं, और किसीसे नहीं, सिर्फ तुमसे था।”

इसके बाद दोनों ही स्तब्ध रहे। एक बार पुनः, “ब” गुहारेंकी क्या करते हैं।”

कमलकान्ताने कहा, “उनके लिए तो और कोई उपाय नहीं है। नहीं तो फिर कोई भी देखकर इस मर्त्यमें नहीं आयेगा।” कुछ देर बाद कहा, “जब वहाँ रहना नहीं हो सकता। वह तो जानती थी कि वहाँसे एक दिन तुम्हें जाना होगा, पर वही नहीं सोचा था कि इस तरह जाना होगा गुहारें। देखकर पचासके बारेमें सोचनेसे दुःख होता है। बड़की है, उलझा नहीं भी कोई नहीं है। बड़े गुहारेंकीकी वह नरहीपमें पड़ी हुई किसी थी। अपनी दीदीके सहेल्येपर वह बहुत रोयेगी। यदि हो सके तो क्या उसका क्याक रक्षना। वहाँ न रहना चाहे तो मैं नामसे धाड़ले दे देना—वह जो अन्धकारमयी अराध्य करेगी।”

फिर कुछ क्षण पुरापाप बटे। पुनः, “इन स्पर्शोंका क्या होगा? न आयी।”

“नहीं। मैं मित्राग्नि हूँ, स्पर्शोंका क्या करेगी—क्याको।”

‘तो भी यदि कभी किसी काममें आवे—’

कमलकान्ताने इस बार हँसकर कहा, “मैंने पाप भी तो एक दिन बहुत क्षमा था, वह किस काम आया। फिर भी, अगर कभी बनसत पड़ी तो तुम किस लिए हो। तब तुमसे क्यों हँसी। दूसरेके रुपये क्यों छेने जाती।”

लेख न उठा कि इस बातका क्या अर्थ है, सिर्फ उल्टी दृष्टि और देखता रहा।

उन्ने फिर कहा, “नहीं गुहारें, मुझे रुपये नहीं चाहिए। मिनके भीतरमैंने स्वर्गको समर्पण कर दिया है, वे तुम्हें नहीं छोड़ेंगे। वहीं भी जाऊँ, वे सारा अमास पूर्ण कर देंगे। मैंने किए किया-सिद्ध म करो।”

पछाने क्रममें आकर कहा, “नये गुहारेंके लिए क्या इतनी क्रममें प्रणय के आर्क रोनी।”

“हो, यही मे मागो । नौकरको दिया ।”

“हो, दे दिया ।”

तो मी पचा नहीं गई, खणमखण इधर उधर करके बोली, “तुम नहीं लाओगी बीवी ।”

“साऊँगी री कम्प्यूरो, काऊँगी । जब तू है, तब बिना जाने बीवीकी रिहाई है ।”

पचा खड़ी गई ।

कुबह उठनेपर कमकम्पा दिखाई नहीं पड़ी, पचाकी क्वानी माघूम हुआ कि वह धामको आती है । दिनभर कहीं रखती है, कोई नहीं जानता । तो मी में निभित्त नहीं हो सका, रातकी रातें याद करके डर होने लगा कि कहीं वह पकड़ी न गई हो और अब मुखाकाव ही न हो ।

बड़े गुहारेंबीके कमरेमें गया । खमने उन कारिपीको रत्नकर बोझ “गौरकी समानव है । उसकी इच्छा थी कि वह मठमें रहे ।”

हारिकावाले हाथ पछाकर समानव के ली, बोले, “बही होगा नये गुहार । कहीं मठके लौर तब प्रत्य रहते हैं, बही तभीके साथ इसे मी रत्न हूँगा ।”

कोई हो मिनटतक चुप रहकर कहा, “उसके सम्बन्धमें कमकम्पापर क्याबने गये कम्पादपर तुम सिचास करते हो गुहार ।”

हारिकावाले मुँह ऊपर उठाकर कहा, “मी ! क्या मी नहीं ।”

“तब मी उसे बच जाना पड़ रहा है ।”

‘मुझे मी क्या होमा गुहार । निचोपीको दूर करके बरि खुर बना रहूँ, तो फिर मिथा ही इस पयस आमा और मिथा ही उनका नाम इतने दिनी तक किया ।”

‘तब फिर उठे ही क्यों जाना पड़ेगा ! मठके कर्चा तो दाम हो, तुम ता उसे रत्न लकते हो ।”

हारिकावाले ‘गुरु । गुरु । गुरु ।’ करकर मुँह नीचा किने बैठे रहे । समझा क इतने बचक गुदका और आरोग नहीं है ।

“माक मैं क्या रहा हूँ गुहार,” करकर कमसे बाहर निकलते समय उसीने मुँह ऊपर उठाकर मेरी ओर ताका । देखा कि उनकी आँखोंसे आँसू गिर रहे

हैं। उन्होंने मुझे हाथ उठाकर नमस्कार किया और मैं प्रतिनमस्कार करके चला आया।

जब राहु केम कमरा से बाहर निकलने के लिए दरवाजा खोलने के लिए आ पहुँचा। तबपर वेग रसे किउन कसरी मन्दाकर कह रहा है—
जब तक नहीं है—पर कमरा नहीं खोली। पछाऊ किनास क कि बोड़ी देर बाद ही वह आनेगी, पर मेरा कन्देह कमरा किनास बन गया कि वह नहीं आनेगी और वेग किनास की कठोर परीक्षाते मिमुल होकर वह बुराईमें ही माग गई है, बुद्धि बल भी लान नहीं किया है। कल उसने मिमुली वैपणिची मन्दाकर को आत्म-परिचय दिया था, वह परिचय ही आज कसुण रखा।

जानेके बल पछा रोने लगी। उसे अपना पछा होते हुए करा, “दीदीने मुझे मुझे किनी किनी रखेके दिया कहा है,—दुम्हरी का इच्छा हो वह मुझे किनास मेवना पछा।”

“पर मैं तो अपनी तरफ किनास नहीं जानती, गुनार।”

“मुझ को किनासों में बड़ी पद रैगा।”

“दीदीने किनास नहीं आओये।”

“किनास मुझकात होनी पछा, जब का मैं आता हूँ” कहकर बाहर निकल पड़ा।

१४

जैसे किने लगे राते अन्धकारमें भी लोभ रही थीं, उसने मुझकात दूर रखने स्तेयनर। वह बोलीकी मीदवे दूर लड़ी थी, मुझे देख नजदीक आकर बोली, “एक किनास करीद देना हाँगा गुनार—”

“तब क्या उम्मुल ही लगेओ ओहकर का ली।”

“इन्हे अन्धकार और तो कोई उपाय नहीं है।”

“कल नहीं होय कमराका।”

“वह बात कल पूछते ही गुनार, लगे तो जानते हो।”

“कल आओयी।”

“इन्धका आकेगी। पर इतनी दूरका किनास नहीं आरिए। मुझ ही किनी बागहास लरीद दो।”

“मलका यह कि मेरा सब कितना भी कम हो उठना अच्छा । इसके बाद दूसरी तो मिठा मीसना शुरू कर दोगी, जब तक कि पच रोप नहीं हो । परी तो ।

“मिठा क्या यह पक्की बार ही शुरू होगी गुहारें ? क्या कमी और नहीं मींगी ?”

पुनः रहा । उसने मेरी ओर झोंकें फिरकर कहा, “तो दृष्टावनका टिकिट ही करिए हो ।”

“तो पहले एक साथ ही पके ?”

“दुम्परा भी स्वा यही राखा है ?”

कहा, “नहीं, यही तो नहीं है—तो भी कितनी बुराक है, उठनी ही बुराक रही ।”

गद्दी जानेपर दोनों उसमें बैठ गये । पाचकी बेंचपर मैंने अपने हाथोंसे ही उबका बिछेना बिछा दिया ।

कमलका बला हो उठी, “यह क्या कर रहे हो गुहारें ?”

“यह कर रहा हूँ जो कमी किलीके लिए नहीं किया—इसेछा बाह रलनेके लिए ।”

‘सचमुच हो क्या बाह रलना चाहते हो ?’

“सचमुच ही बाह रलना चाहता हूँ कमलका । तुम्हारे बलाबा यह बाह और कोई नहीं जानेगा ।”

“पर तुझे तो दोप जोगा गुहारें ?”

“नहीं, कोई दोप नहीं जोगा—तुम मजेसे बैठो ।”

कमलका बैठी, पर बड़े लंकोबके साथ । कितने गॉब, कितने नगर, और कितने प्रायद्वीपोंको पार करती हुई ट्रेन चल रही थी । नकलीक बैठकर यह धीरे धीरे अपने जीवनकी अनेक कहानियों सुनाने लगी । बयद-बयद घूमनेकी कदा जियाँ, मपुरा, दृष्टावन, गावरवन, पचाकुल-निवातकी बातें, अनेक तीर्थ प्रमदोंकी कसई और अन्तमें इतिहासके आसपसमें मुराहीपुर आसममें जानेकी बात । तुझे उस बल उस प्यारकी बिदाके बलकी बातें बाह का गई । कहा, “बान्दी हो कमलका, बड़े गुहारें तुम्हारे कलकपर बिस्वास नहीं करते ?”

“नहीं करते ?”

“क्या नहीं । मेरी आनेके बल उनकी झोंकेंसे झोंकें गिरने लगे, बीछे—

मिदोरीको दूर करके यदि मैं नहीं खुद बना रहा नये गुहारें, तो सबका नाम सेना भिन्ना है और भिन्ना है भय इस पक्षपर जाना । मठमें वे भी न रहेंगे कमलधरा, और एक ऐसा निष्ठाप मधुर आभ्रम टूटकर बिछकुल नष्ट हो जयमा ।”

“नहीं, नहीं नष्ट होगा, भगवान् एक-न-एक रास्ता जयस्य दिसा देंगे ।”

“अगर कभी तुम्हारी पुकार हो, तो फिर वहाँ झैटकर आओगी ।”

“नहीं ।”

“अदि व पमात्ताप करके तुमका झैटया चाहें ।”

“तो भी नहीं ।”

“पर जब तुम्हें वहाँ मुन्धकात होगी ।”

इस प्रश्नका उसने उत्तर नहीं दिया, चुप रही । कापटी बत्त सामोरीमें फट गया, पुकारा, ‘कमलधरा !’ उत्तर नहीं भिन्न, देखा कि गद्दीके एक कोनेमें फिर रखकर उसने झोंले बन्द कर दी हैं । वह सोचकर कि छारे दिनकी कलन्धरे को गद्दी है, बमानेकी इच्छा नहीं हुई । उसके बाद फिर, मैं खुद कर ला गया, वह पठा नहीं, इत्यत् कानोंमें आवाज आई, “नये गुहारें ।” देखा कि वह मेरे छरीरको दिखाकर पुकार रही है । बोली, “उठो, तुम्हारी छौरीबिनाकी ड्रेन लड़ी है ।”

जबरीते उठ बैठा पातके दिन्नेमें किसनसिंह था, पुकारनेके साथ ही उसने आकर कैम उठार दिया । विछोना बौलते बत्त देखा कि भिन्न हो बादरोंसे उसकी शय्या बनारं थी, उसने उनको पहचोते ही दूरकर मेरी बैचपर एक ओर रख दिया है । कहा, “वह क्या-था भी तुम्हने झैट दिया—नहीं किया ।”

“न जाने किठनी बार लड़ना ठहरना पड़े, वह बोला कौन उग्रप्रण ।”

“दूतप बल भी साथ नहीं लाई, वह भी क्या बोला होता । एक-दो बल निकालकर हूँ ।”

“तुम भी लूट हो । तुम्हारे कपड़े मिलासिन्धीके छरीरपर कैमे पड़ेगे ।”

“लेर, कपड़े अच्छे नहीं ब्योंगे, पर मिलासिन्धीको भी खाना तो पड़ता है । पहुँचनेमें और भी दो-तीन दिन ब्योंगे, ड्रेनमें क्या आओगी । जो खानेकी चीजें मेरे पास हैं, उन्हें भी क्या फेंक जाऊँ,—तुम नहीं आओगी ।”

कमलधराने इस बार हँसकर कहा, “अरे बाह गुस्सा हो गये । जबी उन्हें पुठौंगी । रहने दो उन्हें, तुम्हारे यन्त्रे जानेके बाद मैं फेरमके ला दूँगी ।”

बच सस्य हो रहा था, मेरे उठनेके बच बोली, “अब ठहरो तो गुहारें, कोह है नहीं—आज छिपकर तुम्ह एक बार प्रणाम कर दें।” वह कहकर, उसने छुटकर मेरे पैरोंकी धूल ले ली।

उठकर फ्लैटघरमें सर खाड़ा हो गया। उस बच रात समाप्त नहीं हुई थी नीचे और ऊपर अंधकारके स्तरोंमें बैठबाय शुरू हो गया था। आकाशके एक प्रान्तमें कृन्म बबोदघीका शीघ्र शीघ्र शक्ति और दूधरे प्रान्तमें उषाकी आगमनी। उस दिनकी रात बाद आ गई जिस दिन ऐसे ही बच बैचताके छिप फूट ठोकने जानेके छिप उसका लानी हुआ था। और आज।

सीटी बब्यकर और हरे रंगकी आकटेन दिखाकर गार्ड लाइवने बाबाका संकेत किया। कमककटाने सिक्कीसे हाथ बढ़ाकर प्रथम बार मेरा हाथ पकड़ लिया। उसके कपमें किन्तीका ओं मुर या वह कैसे समझाऊँ? बोली ‘तुमसे कभी कुछ नहीं मोंगा है, आज एक बात रलागे?’

“हाँ रकसोंगा” कहकर उसकी ओर देखने लगा।

कहनेमें उसे एक बचकी देर हुई, बोली, “आनटी हूँ कि मैं तुम्हारे कितने आदरकी हूँ। आज विस्मयपूर्णक उनके पाद-पद्योंमें मुझे सीपकर तुम निश्चिन्त होओ, निर्मम होओ। मेरे छिप लोच-लोचकर अब तुम अपना मन लगाव मत करना गुहारें, तुम्हारे निश्चय मेरी वही प्रार्थना है।”

देन बच थी। उसका वही हाथ अपने हाथमें किये कुछ दूर अग्रसर होत-होते कहा, “कमककटा, तुम्हें मैंने उन्नीको सीपा, वही ही तुम्हारा मार है। तुम्हारा पय, तुम्हारी लावन्त निरपद हो—अपनी कहकर अब मैं तुम्हारा असम्मान नहीं करूँगा।”

हाथ छोड़ दिया, गाड़ी दूरसे दूर हाने लगी। गवाक्षपक्षे देख्य, उसके छोड़े हुए मुँहपर छेपनकी प्रकाश-आका कई बार आकर पड़ी और फिर अन्धकारमें मिळ गई। ठिठक रही माख्य हुआ कि हाथ उठाकर मानो वह मुझे छेप नमस्कार कर रही है।

